ग्राम विकास संवाद: अनुभवों से नीतियों तक

(Gram Vikas Samvaad: From Experiences to Policies)

संपादक

डॉ. सोनल मोबार रॉय

डॉ. मोहसिन उद्दीन

नित्या प्रकाशन

प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में इस पुस्तक या उसके किसी भाग को पुन: प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है।

प्रकाशक की अस्वीकृति: इस पुस्तक को प्रकाशित करते समय हर बात का उचित ध्यान रखा गया है। लेखक, प्रकाशक, प्रिंटर द्वारा हुई गलती के लिए वह किसी भी तरह से जिम्मेदार नहीं है। यह अनजाने में हुई हो सकती है। किसी भी टिप्पणी या सुझाव को लेखक और सार्वजनिक क्षेत्र सहित किसी अन्य स्थान पर नहीं भेजा जाना चाहिए।

नोट: इस सम्पादित पुस्तक में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखक-लेखिकाओं के व्यक्तिगत मत हैं। यह आवश्यक नहीं कि वे सरकार अथवा संबंधित संस्थान की आधिकारिक दृष्टि का प्रतिबिंब हों। प्रस्तुत सामग्री से संपादक मंडल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। पुस्तक में प्रयुक्त चित्र केवल प्रतीकात्मक हैं।

आवरण: कृत्रिम बुद्धि जनित

आवरण पृष्ठ सहयोग: अंकुर

कॉपीराइट @ डॉ. सोनल मोबार रॉय

Citation: Roy, S. M., & Uddin, M. (Eds.). (2025). *Gram Vikas Samvaad: From Experiences to Policies*. Nitya Publications.

उदधृत कीजिए: रॉय, एस. एम. और उद्दीन, एम. (संपादक). (2025). ग्राम विकास संवाद: अनुभवों से नीतियों तक, नित्या पब्लिकेशन्स

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.1-213

ISBN: 978-93-5857-988-8

Price: Rs. 750.00

प्रकाशक और मुद्रक

नित्या प्रकाशन, भोपाल (म. प्र.)

Web: www.nityapublications.com

Email: info@nityapublications.com

सम्पर्क: +91 900 929 1840

पूर्वकथन

विकसित भारत का सपना केवल आर्थिक वृद्धि तक सीमित नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण समुदायों की सशक्तिकरण, सामाजिक सहभागिता, शिक्षा, स्वास्थ्य और स्थानीय संस्थाओं की सक्रिय भूमिका पर भी आधारित है। ग्रामीण भारत ही हमारे राष्ट्र का आधार हैं, और इसी आधार के समुचित विकास के बिना देश का समग्र विकास असंभव है । 73वें संविधान संशोधन के पश्चात् ग्राम पंचायतों और स्थानीय संस्थाओं को संवैधनिक मान्यता मिली, जिसने स्थानीय शासन और विकास के नए आयाम खोले । "ग्राम विकास संवादः अनुभवों से नीतियों तक" इसी संदर्भ में महत्वपूर्ण पुस्तक है, जो ग्रामीण भारत की समकालीन चुनौतियों और उनके समाधान पर व्यावहारिक और शैक्षणिक दृष्टि प्रस्तुत करता है।

यह पुस्तक विशेषज्ञों द्वारा लिखित सत्रह आलेखों का संकलन है, जिसमें ग्राम विकास की बहुआयामी चुनौतियों, अवसरों और अनुभवों का विश्लेषण किया गया है। इसमें ग्रामीण युवाओं की सहभागिता पंचायती राज संस्थाओं का वित्तीय एवं प्रशासनिक सशक्तिकरण महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य, रोजगार, महिला नेतृत्व और लैंगिक समानता, जनजातीय एवम् आदिवासी समुदायों के विकास संबंधी मुद्दे, शिक्षा और स्वास्थ्य की स्थिति, पर्यावरणीय चुनौतियाँ ग्राम सभा में पारदर्शिता स्थानीयकरण के माध्यम से सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति जैसे विषयों की गहनता से समझाया गया है।

पुस्तक के शुरुआत में यह दर्शाया गया है कि कैसे विद्यार्थी, युवा और स्वयंसेवी संगठन ग्राम विकास में सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं। इसके बाद पंचायती राज संस्थाओं के सशक्तिकरण और वित्तीय स्वायत्तता के माध्यम से सतत् विकास की संभावनाओं पर विस्तृत दृष्टि प्रस्तुत की गई है। महिला नेतृत्व, सामुदायिक सहभागिता और लैंगिक समानता पर आधारित अध्याय यह स्पष्ट करतें हैं कि सामाजिक समावेशिता और सक्रिय भागीदारी के बिना ग्रामीण विकास असंभव है।

आदिवासी और कमजोर जनजातीय समूहों के विकास संबंधी अध्याय यह समझाते हैं कि विकास केवल योजनाओं के क्रियान्वयन तक सीमित नहीं रह सकता; स्थानीय सांस्कृतिक और सामाजिक विशेषताओं को ध्यान मे रखे बिना किसी नीति का प्रभाव टिकाऊ नहीं हो सकता। शिक्षा, स्वास्थ्य और आजीविका के अलग-अलग अध्याय ग्रामीण जीवन की वास्तविक चुनौतियों और उनके समाधान की दिशा में महत्वपूर्ण अंर्तदृष्टि प्रदान करते हैं। आपदा प्रबंधन और स्थानीय स्तर के अध्याय यह स्पष्ट करते हैं कि छोटे-छोटे, लेकिन सुव्यवस्थित हस्तक्षेप दीर्धकालिक और स्थायी परिवर्तन ला सकते हैं।

पुस्तक में पलायन, सरकारी योजनाओं और स्थानीय विकास के संबंधों पर भी विस्तार से चर्चा की गई है। सामुदायिक सहभागिता, पारदर्शिता और जवाबदेही के अध्याय यह रेखांकित करते हैं कि केवल सरकारी योजनाओं पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है; स्थानीय समुदाय की सक्रिय भूमिका आवश्यक है। पर्यावरणीय संकट, जैव-विविधता संरक्षण और महिलाओं के स्वास्थ्य पर आधारित अध्याय यह स्पष्ट करते हैं कि ग्रामीण विकास के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण और स्थानीय अनुभवों का संयोजन अनिवार्य है।

यह संकलित पुस्तक के सैद्धान्तिक विमर्श और क्षेत्राधारित अनुभवों को एक साथ प्रस्तुत करती है। यह न केवल नीति और योजना के विश्लेषण से अवगत कराती है, बल्कि स्थानीय स्तर पर छोटे-छोटे हस्तक्षेपों के माध्यम से दीर्घकालिक और सतत् पविर्तन की दिशा में मार्गदर्शन भी प्रदान करती है। पुस्तक की भाषा स्पष्ट है, जिससे विषय में गहनता बनी रहती है और पाठक को समझने में आसानी होती है।

अंततः "ग्राम विकास संवादः अनुभवों से नीतियों तक" विकसित भारत के लक्ष्य को साकार करने में ग्रामीण विकास के महत्व को उजागर करता है। यह पुस्तक अनुभव, शोध और क्षेत्राधारित अध्ययनों के संयोजन से तैयार किया गया है, जो ग्रामीण भारत की नींव, उसकी व्यवहारिक चुनौतियों और स्थानीय स्तर पर परिवर्तन लाने की दिशा में अमूल्य मार्गदर्शन प्रदान करती है। यह पुस्तक छात्रों, शोधकर्ताओं, नीति-निर्माताओं और विकास कार्यकर्ताओ के लिए नए दृष्टिकोण और अनुसंधान के लिए उपयोगी रहेगी।

प्रो. विश्वनाथ आलोक
प्रोफेसर
भारतीय लोक प्रशासन संस्थान
नई दिल्ली।

प्राक्कथन

भारतीय लोकतंत्र का आधार उसके ग्राम समुदायों और स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं पर टिका हुआ है। ग्राम विकास केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक आयामों से भी राष्ट्रीय प्रगति का मूलाधार है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश ने जिस विकास पथ को अपनाया, उसमें ग्राम पंचायतों तथा स्थानीय निकायों को लोकतांत्रिक सहभागिता के केंद्र में स्थापित किया गया। 73वें संविधान संशोधन ने न केवल इन संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया, बल्कि ग्रामीण शासन एवं विकास की प्रक्रियाओं को नई दिशा दी।

इस संदर्भ में प्रस्तुत संपादित ग्रंथ *"ग्राम विकास संवाद : अनुभवों से नीतियों तक"* ग्रामीण भारत के समकालीन विमर्शों को शैक्षणिक तथा व्यावहारिक दृष्टि से जोड़ने का एक प्रयास है। पुस्तक में संकलित आलेखों में ग्राम विकास की चुनौतियों, अवसरों और अनुभवों का बहुआयामी विश्लेषण किया गया है। लेखकों ने विविध विषयों को संबोधित किया है, जिनमें ग्रामीण युवाओं की सहभागिता, पंचायती राज संस्थाओं का वित्तीय एवं प्रशासनिक सशक्तिकरण, महिला प्रतिनिधित्व एवं लैंगिक समानता, आदिवासी समुदायों के विकास संबंधी प्रश्न, शिक्षा और स्वास्थ्य की स्थिति, पर्यावरणीय चुनौतियाँ तथा सतत् विकास लक्ष्यों का स्थानीयकरण प्रमुख हैं।

इस पुस्तक का उद्देश्य केवल सैद्धांतिक विमर्श प्रस्तुत करना नहीं है, बल्कि अनुभवजन्य तथ्यों और क्षेत्राधारित अध्ययनों को नीति-निर्माण की बहस से जोड़ना है। अनेक अध्यायों में क्षेत्रीय केस स्टडी, प्राथमिक आँकड़े तथा नृवंशविज्ञानपरक विश्लेषण सम्मिलित किए गए हैं, जो पुस्तक को केवल अकादमिक संकलन न बनाकर व्यावहारिक दृष्टिकोण से भी उपयोगी बनाते हैं। यह पुस्तक उन सभी के लिए महत्त्वपूर्ण है जो ग्रामीण भारत की नीतियों, कार्यक्रमों और हस्तक्षेपों के प्रभाव का अध्ययन करना चाहते हैं।

संपादित पुस्तक की संरचना इस प्रकार की गई है कि यह विविध पृष्ठभूमियों के पाठकों को समान रूप से संबोधित कर सके। शोधार्थियों और अकादमिक जगत के लिए यह सैद्धांतिक विमर्श और साहित्य समीक्षा का साधन है; वहीं नीति-निर्माताओं, प्रशासकों और जनप्रतिनिधियों के लिए यह व्यावहारिक मार्गदर्शन उपलब्ध कराती है। इस पुस्तक में प्रयुक्त भाषा मानक हिंदी की है, जिससे विषय की गहनता बनी रहे, किंतु पाठकों को समझने में कठिनाई न हो।

ग्रामीण भारत आज जिन चुनौतियों का सामना कर रहा है गरीबी, बेरोज़गारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं की कमी, जलवायु परिवर्तन का प्रभाव, लैंगिक विषमता और शासन में पारदर्शिता का

अभाव उनका समाधान केवल सरकारी कार्यक्रमों तक सीमित नहीं रह सकता। इसके लिए बहु-हितधारक दृष्टिकोण आवश्यक है, जिसमें ग्राम पंचायतें, स्वयंसेवी संगठन, शैक्षणिक संस्थान, समुदाय-आधारित संगठन और नागरिक समाज सभी की सक्रिय भागीदारी हो। इस पुस्तक के आलेख इस बहुआयामी दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करते हैं और यह दर्शाते हैं कि कैसे स्थानीय स्तर पर छोटे-छोटे हस्तक्षेप भी दीर्घकालिक परिवर्तन की दिशा में सहायक हो सकते हैं।

हम भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली के प्रोफेसर डॉ. विश्वनाथ आलोक को इस संपादित पुस्तक के पूर्वकथन लेखन तथा इसे नयी दृष्टि और दिशा प्रदान करने के लिए हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

यह पुस्तक अनेक लेखकों के सामूहिक श्रम और बौद्धिक योगदान का परिणाम है। संपादक मंडल उन सभी लेखकों के प्रति आभार प्रकट करता है, जिन्होंने अपने अनुभव और विचार साझा किए। साथ ही, प्रकाशक नित्या *पब्लिशिंग हाउस, भोपाल (मध्य प्रदेश)* का भी हार्दिक धन्यवाद, जिनके सहयोग के बिना इस ग्रंथ का प्रकाशन संभव नहीं हो पाता।

हम इस पुस्तक के अंतर्गत दिखाई देने वाली किसी भी त्रुटि के लिए क्षमाप्रार्थी हैं। यदि किसी संदर्भ पुस्तक का नाम भूलवश छूट गया हो, तो उसके लिए भी हम समान रूप से आभारी हैं और क्षमा याचना करते हैं। पुस्तक के परिशोधन हेतु पाठकों एवं विद्वानों से सुझावों का स्वागत है।

हमें विश्वास है कि "*ग्राम विकास संवाद: अनुभवों से नीतियों तक*" अकादमिक जगत के लिए एक महत्त्वपूर्ण संदर्भ ग्रंथ सिद्ध होगी तथा ग्रामीण विकास की नीतियों और व्यवहार में सार्थक परिवर्तन लाने हेतु मार्गदर्शन प्रदान करेगी। यदि यह पुस्तक शोधार्थियों, जनप्रतिनिधियों और नीति-निर्माताओं को ग्रामीण भारत की जटिलताओं को समझने और उनके समाधान की दिशा में प्रेरित कर सके, तो हमारा प्रयास सफल माना जाएगा।

संपादक

लेखिका एवं लेखक

* प्रो. डॉ. राजेंद्र सिंह, प्राचार्य, गाजीपुर होम्योपैथिक मेडिकल कॉलेज, गाजीपुर, उत्तर प्रदेश
* प्रो. डॉ. रीना सिंह, निदेशक, विकल्प हर्फ भोपाल, मध्य प्रदेश
* डॉ. पी. सी. गुप्ता, सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, महाकौशल विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश
* रोली गुप्ता, सहायक अध्यापक, उच्च प्राथमिक विद्यालय, लालापुर, ब्लॉक, फतेहपुर, बाराबंकी, उत्तर प्रदेश
* डॉ. नीलांजन खटुआ, अधीक्षण मानवविज्ञानी, भारतीय मानवविज्ञान सर्वेक्षण, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार
* डॉ. बलकार सिंह पूनियां, सहायक आचार्य, ग्रामीण विकास विभाग, ईग्नू, नई दिल्ली
* डॉ. संगीता रानी, सामाजिक कार्यकर्ता, सीहोर, मध्य प्रदेश
* डॉ. विवेक कुमार हिन्द, सहायक प्राध्यापक(राजनीति विज्ञान), स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग, तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार
* विनय कुमार हिन्द, शोधार्थी, इतिहास विभाग, सी एम पी डिग्री कॉलेज, अंगीभूत पीजी कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश
* रविन्द्र कुमार, कोर फैकल्टी सदस्य, राज्य ग्रामीण विकास एवं पंचायती संस्थान, मशोबरा, शिमला, हिमाचल प्रदेश
* डॉ. प्रवेश कुमार, कोर फैकल्टी सदस्य, राज्य ग्रामीण विकास एवं पंचायती संस्थान, मशोबरा, शिमला, हिमाचल प्रदेश
* डॉ. पंकज उपाध्याय, शैक्षणिक सलाहकार, सीआइईटी, एनसीआरटी, नई दिल्ली
* डॉ. मोहसिन उद्दीन, सलाहकार, राष्ट्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज संस्थान, हैदराबाद, तेलंगाना

* डॉ. कंचन श्रीवास्तव, प्रोफेसर, अर्थशास्त्र एवं उप कुलसचिव, श्री सत्य साईं यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्नोलॉजी एंड मेडिकल साइंसेज़, सीहोर, मध्य प्रदेश

* डॉ. अमित आठ्या, सलाहकार, महात्मा गांधी राज्य ग्रामीण विकास संस्थान, जबलपुर, मध्य प्रदेश

* मनीष कुमार साहू, शोद्यार्थी, रांची विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड

* डॉ. राजीव बंसल, संयुक्त निदेशक (सेवानिवृत्त), हिमाचल प्रदेश ग्रामीण विकास संस्थान, शिमला, हिमाचल प्रदेश

* डॉ. तौकीर खान, वरिष्ठ सलाहकार, पंचायती राज मंत्रालय, नई दिल्ली

* डॉ. विजय प्रकाश, सेवानिवृत्त प्रोफेसर, रांची विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड

* सना शमशाद, शोद्यार्थी, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

* डॉ. रीता कुमारी, प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, प्राणी-शास्त्र विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

* दीप्ती सूर्या, योजना विभाग, हिमाचल प्रदेश सरकार, शिमला, हिमाचल प्रदेश

* किशोर सिंह, योजना विभाग, हिमाचल प्रदेश सरकार, शिमला, हिमाचल प्रदेश

* दीपिका शर्मा, योजना विभाग, हिमाचल प्रदेश सरकार, शिमला, हिमाचल प्रदेश

* डॉ. सोनल मोबार रॉय, सहायक प्राध्यापक, राष्ट्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज संस्थान, हैदराबाद, तेलंगाना

विषय वस्तु

क्र. सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
1.	**ग्राम विकास में विद्यार्थी युवा स्वयं सेवी संगठनों की भूमिका** *प्रो. डॉ. राजेंद्र सिंह, प्रो. डॉ. रीना सिंह*	11
2	**पंचायती राज संस्थाओं का सशक्तिकरण** *डॉ. पी. सी. गुप्ता, रोली गुप्ता*	21
3	**विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह और उनके विकासात्मक मुद्दे** *डॉ.नीलांजन खटुआ*	34
4	**आत्मनिर्भर ग्राम पंचायत: वित्तीय स्वायत्तता से सतत् विकास तक** *डॉ. बलकार सिंह पूनियां*	48
5	**महिला नेतृत्व एवं सामाजिक समावेश** *डॉ. संगीता रानी*	64
6	**ग्राम विकास: संवाद, अनुभव और नीतिगत पहल — बिहार के संदर्भ में** *डॉ.विवेक कुमार हिन्द, विनय कुमार हिन्द*	77
7	**महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के अंतर्गत श्रमिकों को प्रदत्त मजदूरी का आकलन** *रविन्द्र कुमार, डॉ. प्रवेश कुमार*	96
8	**महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम में महिलाओं की भागीदारी** *डॉ. पंकज उपाध्याय, डॉ. मोहसिन उद्दीन*	101
9	**ग्रामीण आजीविका, रोजगार और प्रवासन** *डॉ. कंचन श्रीवास्तव*	108

10	**ग्रामीण आजीविका एवं पलायन का अंतर्संबंध: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन** *डॉ. अमित आठ्या*	121
11	**झारखंड में विकेंद्रीकरण एवं स्वशासन में जनजातीय समुदाय की स्थिति** *मनीष कुमार साहु*	128
12	**सामुदायिक सक्रियता द्वारा सहभागी जन योजना** *डॉ. राजीव बंसल*	142
13	**ग्राम सभा में पारदर्शिता एवं जवाबदेही के तकनीकी नवाचार** *डॉ. तौकीर खान, डॉ. मोहसिन उद्दीन*	155
14	**ग्रामीण भारत में सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रियाएँ** *डॉ विजय प्रकाश शर्मा*	160
15	**जैव-चिकित्सा अपशिष्ट के कारण सिवान जिला के तटवर्ती गाँव एवं दाहा नदी (वाण गंगा) का अस्तित्व खतरे में** *सना शमशाद, डॉ. रीता कुमारी*	167
16	**हिमाचल प्रदेश में महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य: सामाजिक, सांस्कृतिक और नीति-आधारित दृष्टिकोण से एक समग्र विश्लेषण** *डॉ.राजीव बंसल, दीप्ती सूर्या, किशोर सिंह, दीपिका शर्मा*	182
17	**बेटी, बगिया और पंचायत: पिपलांत्री की अनूठी पहल** *डॉ. सोनल मोबार रॉय*	194

1

ग्राम विकास में विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका

प्रो. डॉ. राजेंद्र सिंह प्रो. डॉ. रीना सिंह

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.11-20
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

यह लेख ग्राम विकास में विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका का विश्लेषण करता है। ग्रामीण क्षेत्रों की प्रमुख चुनौतियाँ जैसे गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, स्वास्थ्य और शिक्षा तक सीमित पहुँच के समाधान में युवाओं की सक्रिय भागीदारी अत्यंत आवश्यक है। विद्यार्थी युवा संगठन शिक्षा, जागरूकता, कौशल विकास, पर्यावरण संरक्षण, सामुदायिक भागीदारी और आपदा प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में ग्रामीण समुदायों को सशक्त बनाते हैं। भारत स्काउट्स एवं गाइड्स, एनएसएस, एनसीसी, नेहरू युवा केंद्र संगठन और "मेरा युवा भारत" जैसे कार्यक्रम युवाओं को राष्ट्र निर्माण, ग्राम स्वराज और सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति में प्रभावी योगदान के अवसर प्रदान करते हैं। यह अध्ययन दर्शाता है कि ऊर्जा, उत्साह और नवाचार से परिपूर्ण विद्यार्थी युवा संगठन न केवल ग्राम विकास को गति दे सकते हैं, बल्कि आत्मनिर्भर, समावेशी और सशक्त भारत के निर्माण में भी आधारस्तंभ बन सकते हैं।

मुख्य शब्द: ग्राम विकास, कौशल विकास, ग्राम स्वराज, स्वयंसेवी संगठन, सतत् विकास लक्ष्य

प्रस्तावना

ग्राम विकास में विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। ये संगठन ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक, आर्थिक, औद्योगिक और पर्यावरणीय विकास में सक्रिय रूप से योगदान कर सकते हैं। युवा स्वयंसेवकों की ऊर्जा, उत्साह और नवीन विचारों (नवाचार) का उपयोग ग्रामीण समुदायों को सशक्त, समृद्ध बनाने, विकास की प्रक्रिया को बढ़ावा देने और स्थायी परिवर्तन लाने के लिए किया जा सकता है। विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठनों की सक्रिय भागीदारी के बिना

ग्रामीण विकास की कल्पना करना मुश्किल है। उनकी ऊर्जा, उत्साह और नवीन विचारों से ग्रामीण क्षेत्रों में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है। युवाओं को ग्रामीण विकास में शामिल करने के लिए, स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों को अपने पाठ्यक्रमों में स्वयंसेवी कार्यक्रमों को एकीकृत करना चाहिए और छात्रों को सामुदायिक सेवा में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया का उपयोग करके युवा स्वयं सेवकों को अवसरों और संगठनों से जुड़ने में मदद की जा सकती है।

हालांकि नई शिक्षा नीति 2020 में विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग और गणित (STEM) और विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग, कला और गणित (STEAM) की अवधारणा के प्रभाव को महसूस किया जा सकता है, जो कि बहु- उद्देशीय, बहु- विकासीय शिक्षण पद्धतियां प्रयोग करने को उद्धृत है।

युवा की परिभाषा

संयुक्त राष्ट्र युवा को 15 से 24 वर्ष की आयु के व्यक्तियों के रूप में परिभाषित करता है। हालांकि, यह परिभाषा अलग-अलग संदर्भों में बदल सकती है, जैसे कि जनसांख्यिकीय, वित्तीय, आर्थिक और सामाजिक-सांस्कृतिक परिपेक्ष में। युवा वह व्यक्ति होता है जो बचपन और वयस्कता के बीच की अवस्था में होता है। आमतौर पर, युवा 15 से 29 वर्ष की आयु के बीच के लोगों को माना जाता है। युवा परिवर्तन, प्रगति और भविष्य का पर्याय है।

युवा का परिवार और समाज से लगाव

युवा परिवार और समाज के महत्वपूर्ण सदस्य होते हैं। युवा परिवार के सदस्यों के साथ भावनात्मक रूप से जुड़े होते हैं और समाज के विकास में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। वे अपने परिवार और समाज के लिए एक संपत्ति होते हैं, और उनके योगदान को मान्यता दी जानी चाहिए। युवा की कोई एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं है, लेकिन इसे आमतौर पर 15 से 24 वर्ष की आयु के व्यक्तियों के रूप में परिभाषित किया जाता है, विशेष रूप से सांख्यिकीय उद्देश्यों के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा. "युवा" शब्द जीवन के उस चरण को भी संदर्भित करता है जो बचपन और वयस्कता के बीच होता है, और इसमें युवावस्था (शारीरिक परिवर्तन) और किशोरावस्था (मनोसामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन) दोनों शामिल हो सकते हैं।

ग्राम विकास की चुनौतियाँ

ग्राम विकास अनेक जटिल चुनौतियों से घिरा हुआ है, जिनमें बुनियादी ढांचे की कमी, गरीबी, अशिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुंच, तथा कृषि उत्पादन में गिरावट प्रमुख हैं। इसके साथ ही सामाजिक असमानताएं, भेदभाव, लैंगिक उत्पीड़न, पर्यावरणीय क्षरण, जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद एवं शासन संबंधी समस्याएं भी ग्रामीण विकास की गति को प्रभावित करती हैं। ग्रामीण

क्षेत्रों में सड़कों, बिजली, पानी एवं संचार जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव विकास के अवसरों को सीमित करता है। भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि पर आधारित है, तथापि अपर्याप्त सिंचाई, पुरानी कृषि पद्धतियों एवं जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से कृषि संकट गहराता जा रहा है। गरीबी एवं बेरोजगारी की समस्या इतनी गंभीर है कि अनेक ग्रामीण परिवार अपनी बुनियादी जरूरतों को भी पूरा करने में असमर्थ रहते हैं।

स्वास्थ्य सेवाओं एवं शिक्षा तक सीमित पहुंच के कारण ग्रामीण आबादी के स्वास्थ्य, जागरूकता तथा जीवन स्तर पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त जाति एवं लिंग आधारित भेदभाव के चलते समाज के कुछ वर्ग विकास की मुख्यधारा से बाहर रह जाते हैं। वनों की कटाई, मिट्टी का क्षरण एवं जल प्रदूषण जैसी पर्यावरणीय समस्याएं भी ग्रामीण आजीविका को गंभीर रूप से प्रभावित करती हैं। शासन व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार, अक्षमता तथा राजनीतिक अस्थिरता ग्रामीण विकास को और जटिल बनाती है। वहीं, कौशल विकास कार्यक्रमों की कमी के कारण ग्रामीण युवाओं को रोजगार के पर्याप्त अवसर नहीं मिल पाते, जिससे वे बेहतर आजीविका की तलाश में शहरों की ओर पलायन करते हैं तथा इससे ग्रामीण क्षेत्रों में जनसांख्यिकीय असंतुलन उत्पन्न होता है।

इन सभी चुनौतियों का समाधान तभी संभव है जब सरकार, स्थानीय समुदायों एवं अन्य हितधारक मिलकर समन्वित प्रयास करें। सतत् विकास योजनाओं, सामुदायिक भागीदारी एवं समावेशी नीतियों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में समग्र, न्यायसंगत तथा स्थायी विकास को सुनिश्चित किया जा सकता है।

विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका के विभिन्न क्षेत्र

* **जागरूकता और शिक्षा:** विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठन ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, बालिका शिक्षा और पर्यावरण संरक्षण जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर जागरूकता फैला सकते हैं। वे शैक्षिक कार्यक्रमों, कार्यशालाओं और जागरूकता अभियानों के माध्यम से लोगों को शिक्षित कर सकते हैं।

* **कौशल विकास:** विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठन ग्रामीण युवाओं को विभिन्न कौशल जैसे कि कृषि, हस्तशिल्प, कंप्यूटर कौशल, और उद्यमिता में प्रशिक्षण प्रदान कर सकते हैं। इससे युवाओं को बेहतर रोजगार के अवसर प्राप्त करने और अपनी आजीविका में सुधार करने में मदद मिलेगी।

* **सामुदायिक विकास:** विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठन ग्रामीण समुदायों को संगठित करने, सामुदायिक परियोजनाओं को शुरू करने और स्थानीय संसाधनों का उपयोग करके विकास

को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। वे सामुदायिक सभाओं, बैठकों और कार्यक्रमों के आयोजन के माध्यम से लोगों को एक साथ ला सकते हैं।

* **पर्यावरण संरक्षण:** विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठन वृक्षारोपण, जल संरक्षण, और अपशिष्ट प्रबंधन जैसे पर्यावरणीय पहलों में सक्रिय रूप से भाग ले सकते हैं। वे पर्यावरण संरक्षण के महत्व के बारे में जागरूकता फैला सकते हैं और समुदायों को टिकाऊ उपायो को अपनाने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं।

* **आपदा प्रबंधन:** विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठन आपदाओं के दौरान राहत और पुनर्वास कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। वे प्रभावित लोगों को भोजन, पानी, आश्रय और चिकित्सा सहायता प्रदान कर सकते हैं।

* **सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन:** विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठन सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों को ग्रामीण क्षेत्रों में लागू करने में सहायता कर सकते हैं। वे लोगों को योजनाओं के बारे में जानकारी प्रदान कर सकते हैं और उनके लाभों तक पहुंचने में उनकी मदद कर सकते हैं।

विभिन्न विद्यार्थी युवा संगठन और उनकी भूमिका

राष्ट्र निर्माण में विद्यार्थी और युवा संगठनों की भूमिका महत्वपूर्ण है। ये संगठन युवाओं को संगठित करके, उन्हें विभिन्न सामाजिक और राष्ट्रीय गतिविधियों में शामिल करके राष्ट्र निर्माण में सक्रिय योगदान दे सकते हैं।

1. भारत स्काउट्स और गाइड्स (बीएसजी) आंदोलन

भारत में भारत स्काउट्स और गाइड्स (बीएसजी) आंदोलन का उद्देश्य युवाओं की शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक क्षमता को बढ़ावा देकर उन्हें जिम्मेदार, सक्रिय नागरिक के रूप में विकसित करना है । यह चरित्र निर्माण, आत्मनिर्भरता और नेतृत्व कौशल पर केंद्रित गतिविधियों और सिद्धांतों की एक श्रृंखला के माध्यम से प्राप्त किया जाता है।

उद्देश्य

युवा सशक्तिकरण: इस आंदोलन का उद्देश्य युवाओं को सक्रिय और प्रतिबद्ध नागरिक बनने के लिए सशक्त बनाना है।

चरित्र विकास: इसका उद्देश्य ईमानदारी, निष्ठा और दृढ़ता सहित आजीवन मूल्यों और कौशलों को विकसित करना है।

सामाजिक जिम्मेदारी: यह युवाओं को सामुदायिक विकास में भाग लेने और समाज में योगदान देने के लिए प्रोत्साहित करता है।

शांति शिक्षा: यह आंदोलन शांति शिक्षा पर जोर देता है और दूसरों के प्रति समझ, सहयोग और सम्मान को बढ़ावा देता है।

व्यक्तिगत विकास: यह व्यक्तियों को व्यक्तिगत रूप से तथा स्थानीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समुदायों के सदस्य के रूप में अपनी पूर्ण क्षमता तक पहुंचने में सहायता करता है।

मूल उद्देश्य: ईश्वर के प्रति कर्तव्य: आध्यात्मिक सिद्धांतों का पालन और अपने धर्म के प्रति निष्ठा।

दूसरों के प्रति कर्तव्य: अपने देश के प्रति निष्ठा, समाज के विकास में भागीदारी और दूसरों के प्रति सम्मान।

स्वयं के प्रति कर्तव्य: व्यक्तिगत विकास और आत्मनिर्भरता की जिम्मेदारी।

करके सीखना: कैम्पिंग, लंबी पैदल यात्रा और सामुदायिक सेवा जैसी गतिविधियों के माध्यम से सीखने का एक व्यावहारिक दृष्टिकोण।

नेतृत्व कौशल का विकास: टीमवर्क और समस्या समाधान के माध्यम से युवाओं को प्रभावी नेता बनने के लिए प्रशिक्षित करना।

शारीरिक फिटनेस को बढ़ावा देना: बाहरी गतिविधियों और खेलों के माध्यम से स्वस्थ जीवन शैली को प्रोत्साहित करना।

सामुदायिक भागीदारी: पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक सेवा जैसी सामुदायिक लाभ वाली गतिविधियों में संलग्न होना।

व्यावसायिक कौशल: आत्मनिर्भरता और भविष्य के करियर के लिए कौशल विकसित करने के अवसर प्रदान करना।

2. **राष्ट्रीय सेवा योजना (एनएसएस):** यह एक सरकारी पहल है जो छात्रों को स्वैच्छिक सामुदायिक सेवा के माध्यम से सामाजिक जिम्मेदारी और राष्ट्र निर्माण में योगदान के लिए प्रोत्साहित करती है। भारत में राष्ट्रीय सेवा योजना (एनएसएस) का प्राथमिक उद्देश्य सामुदायिक सेवा के माध्यम से छात्र युवाओं के व्यक्तित्व और चरित्र का विकास करना है। एनएसएस का उद्देश्य सामाजिक और नागरिक जिम्मेदारी की भावना पैदा करना, नेतृत्व गुणों का विकास करना और राष्ट्रीय एकीकरण को बढ़ावा देना भी है।

मूल उद्देश्य: व्यक्तित्व विकास: एनएसएस का उद्देश्य छात्रों को सामुदायिक सेवा में सक्रिय भागीदारी के माध्यम से उनके समग्र व्यक्तित्व और चरित्र को विकसित करने में मदद करना है।

सामुदायिक सहभागिता: इसका उद्देश्य परिसर और समुदाय के बीच मजबूत संबंध को बढ़ावा देना तथा छात्रों को स्थानीय आवश्यकताओं को समझने और उनका समाधान करने के लिए प्रोत्साहित करना है।

सामाजिक जिम्मेदारी: एनएसएस युवा व्यक्तियों में सामाजिक और नागरिक जिम्मेदारी की भावना पैदा करने का प्रयास करता है, तथा उन्हें सक्रिय और समर्पित नागरिक बनने के लिए प्रोत्साहित करता है।

राष्ट्रीय एकीकरण: इस कार्यक्रम का उद्देश्य विविध पृष्ठभूमि के छात्रों को एक साथ लाकर और उन्हें मिलकर काम करने के लिए प्रोत्साहित करके राष्ट्रीय एकता, अखंडता और सामाजिक सद्भाव को बढ़ावा देना है।

उद्देश्य: समुदाय को समझना: एनएसएस स्वयंसेवकों को उस समुदाय को समझने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जिसमें वे काम करते हैं, उसकी आवश्यकताओं और समस्याओं को समझते हैं।

नेतृत्व और लोकतांत्रिक मूल्य: यह कार्यक्रम छात्रों को समूह गतिविधियों और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में भागीदारी के माध्यम से नेतृत्व गुणों और लोकतांत्रिक मूल्यों को विकसित करने में मदद करता है।

आपातकालीन प्रबंधन: एनएसएस का उद्देश्य छात्रों को आपात स्थितियों और प्राकृतिक आपदाओं का प्रभावी ढंग से सामना करने के लिए तैयार करना भी है।

3. राष्ट्रीय कैडेट कोर (एनसीसी)

भारत में राष्ट्रीय कैडेट कोर (एनसीसी) का उद्देश्य भारतीय युवाओं में चरित्र, भाईचारा, अनुशासन, नेतृत्व और निस्वार्थ सेवा के आदर्शों का विकास करना है, तथा उन्हें जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में भविष्य की नेतृत्वकारी भूमिकाओं के लिए तैयार करना है। यह युवाओं को सशस्त्र बलों में शामिल होने के लिए प्रेरित करने हेतु उपयुक्त वातावरण भी प्रदान करता है।

एनसीसी के उद्देश्य

चरित्र और भाईचारा विकसित करना: एनसीसी का ध्यान मजबूत चरित्र निर्माण, सौहार्द को बढ़ावा देने तथा कैडेटों के बीच एकता और भाईचारे की भावना को बढ़ावा देने पर केंद्रित है।

अनुशासन और नेतृत्व क्षमता विकसित करना: इसका उद्देश्य युवाओं में अनुशासन, नेतृत्व क्षमता और पहल करने की क्षमता विकसित करना है।

धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण को बढ़ावा देना: एनसीसी धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करती है तथा विभिन्न धर्मों और पृष्ठभूमियों के लोगों के बीच सहिष्णुता और समझ को बढ़ावा देती है।

साहसिकता की भावना को बढ़ावा: एनसीसी साहस की भावना और चुनौतियों का सामना करने की इच्छा पैदा करता है, तथा शारीरिक और मानसिक दृढ़ता को प्रोत्साहित करता है।

निःस्वार्थ सेवा को बढ़ावा देना: एनसीसी राष्ट्र और समाज के प्रति निःस्वार्थ सेवा के महत्व पर जोर देती है तथा कैडेटों को अपने समुदायों की बेहतरी में योगदान करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

सशस्त्र बलों के लिए तैयारी: यह युवाओं को सैन्य जीवन और प्रशिक्षण की झलक प्रदान करके भारतीय सशस्त्र बलों में शामिल होने के लिए प्रेरित करने और तैयार करने हेतु एक मंच प्रदान करता है।

सशक्त मानव संसाधन का निर्माण: एनसीसी का उद्देश्य संगठित, प्रशिक्षित और प्रेरित युवाओं का एक समूह तैयार करना है जो विभिन्न क्षेत्रों में नेतृत्वकर्ता के रूप में कार्य कर सकें।

4. नेहरू युवा केंद्र संगठन (एनवाईकेएस): यह ग्रामीण युवाओं को सशक्त बनाने और नागरिक भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न कार्यक्रम आयोजित करता है। नेहरू युवा केंद्र संगठन (एनवाईकेएस) का उद्देश्य ग्रामीण युवाओं के व्यक्तित्व और नेतृत्व गुणों का विकास करना और उन्हें राष्ट्र निर्माण गतिविधियों में शामिल करना है। यह साक्षरता, स्वास्थ्य, स्वच्छता, पर्यावरण, सामाजिक मुद्दे, महिला सशक्तिकरण, ग्रामीण विकास, कौशल विकास और स्वरोजगार सहित विभिन्न क्षेत्रों पर केंद्रित है। एनवाईकेएस का उद्देश्य अच्छी नागरिकता, धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों को विकसित करना और सामाजिक विकास के लिए स्वैच्छिक प्रयासों को बढ़ावा देना भी है।

विशिष्ट गतिविधियाँ: गांवों में युवा क्लबों का आयोजन करना। विभिन्न सामाजिक एवं विकासात्मक मुद्दों पर जागरूकता अभियान चलाना। व्यावसायिक प्रशिक्षण और कौशल विकास कार्यक्रम प्रदान करना। सामुदायिक विकास परियोजनाओं को सुविधाजनक बनाना। खेलकूद एवं सांस्कृतिक गतिविधियों का आयोजन। स्वच्छता एवं सफाई को बढ़ावा देना। स्वास्थ्य एवं स्वच्छता प्रथाओं के बारे में जागरूकता पैदा करना। आपदा की तैयारी और प्रतिक्रिया को सुविधाजनक बनाना। लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में भागीदारी को प्रोत्साहित करना।

5. मेरा युवा भारत (MY Bharat): मेरा युवा भारत एक अभिनव डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म है, जिसका उद्देश्य देश के युवाओं को राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया से जोड़ना और उन्हें विभिन्न स्वयंसेवी अवसरों से अवगत कराना है। यह पहल युवाओं को कौशल विकास, सामुदायिक सेवा, और जनकल्याणकारी गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी के लिए प्रेरित करती है। प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से युवा न केवल अपने क्षेत्रीय या राष्ट्रीय स्तर पर उपलब्ध स्वयंसेवी अवसरों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, बल्कि अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार परियोजनाओं से जुड़कर योगदान भी दे सकते हैं। इस प्रकार, मेरा युवा भारत एक सशक्त सेतु के रूप में कार्य करता है, जो युवाओं की ऊर्जा और प्रतिभा को देश के सतत् विकास और सामाजिक परिवर्तन के प्रयासों से जोड़ता है(मेरा युवा भारत, 2025)।

6. अन्य क्षेत्रीय और स्थानीय संगठन: इसके अलावा, कई अन्य क्षेत्रीय और स्थानीय संगठन भी हैं जो युवाओं को संगठित करके शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण, और सामाजिक सुधार जैसे विभिन्न क्षेत्रों में काम करते हैं।

ग्राम विकास, स्वराज और राष्ट्र निर्माण तक युवा

ग्राम स्वराज: ग्राम स्वराज, महात्मा गांधी द्वारा गढ़ा गया एक शब्द है, जिसका अर्थ है "स्वतंत्र गांव"। यह अवधारणा प्रत्येक गांव को एक आत्मनिर्भर इकाई के रूप में देखती है, जहां सभी आवश्यक सुविधाएं और व्यवस्थाएं उपलब्ध हों। ग्राम स्वराज का लक्ष्य ग्रामीण समुदायों को सशक्त बनाना और उन्हें अपने विकास के लिए निर्णय लेने में सक्षम बनाना है।

ग्राम विकास, स्वराज और राष्ट्र निर्माण में युवाओं की भूमिका महत्वपूर्ण है। युवा, ग्राम विकास की योजनाओं में सक्रिय रूप से भाग लेकर, स्थानीय स्वशासन को मजबूत करके और सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। राष्ट्रीय ग्राम स्वराज अभियान (आरजीएसए) जैसी योजनाएं युवाओं को सशक्त बनाने और उन्हें ग्रामीण विकास में शामिल करने के लिए कई अवसर प्रदान करती हैं। इस संदर्भ में, युवाओं की भागीदारी को निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है—

* **सामाजिक मुद्दों पर जागरूकता:** विद्यार्थी युवा संगठन सामाजिक कुरीतियों, जैसे गरीबी, बेरोजगारी, और अशिक्षा के खिलाफ जागरूकता फैलाते हैं और समाधान खोजने में मदद करते हैं।

* **कौशल विकास:** ये संगठन युवाओं को विभिन्न कौशल प्रशिक्षण प्रदान करते हैं, जैसे कंप्यूटर साक्षरता, व्यावसायिक प्रशिक्षण, और वित्तीय प्रबंधन, जिससे वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन सकें।

* **नेतृत्व विकास:** विद्यार्थी युवा संगठन युवाओं को नेतृत्व के गुण विकसित करने और उन्हें सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

* **सामुदायिक विकास:** ये संगठन सामुदायिक विकास परियोजनाओं में शामिल होते हैं, जैसे स्वच्छता अभियान, वृक्षारोपण, और स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रम।

* **राष्ट्रवादी विचारधारा को बढ़ावा:** कुछ विद्यार्थी युवा संगठन राष्ट्रवादी विचारधारा को बढ़ावा देते हैं और युवाओं को देश के प्रति अपनी जिम्मेदारी का एहसास कराते हैं।

* **सक्रिय भागीदारी:** युवा ग्राम विकास योजनाओं में सक्रिय रूप से भाग ले सकते हैं, जैसे कि ग्राम पंचायत विकास योजना (जीपीडीपी) तैयार करना और कार्यान्वित करना।

* **स्थानीय स्वशासन को मजबूत करना:** युवा निर्वाचित प्रतिनिधि बनकर या विभिन्न ग्राम पंचायत समितियों में शामिल होकर स्थानीय स्वशासन को मजबूत कर सकते हैं।

* **सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करना:** युवा शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, और पर्यावरण संरक्षण जैसे क्षेत्रों में काम करके सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद कर सकते हैं।

* **डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देना:** युवा, डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देकर और ई-ग्राम स्वराज जैसे प्लेटफार्मों का उपयोग करके ग्रामीण क्षेत्रों में शासन को अधिक पारदर्शी और कुशल बना सकते हैं।

* **नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा देना:** युवा, नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा देकर ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक विकास को गति दे सकते हैं।

* **राष्ट्रीय ग्राम स्वराज अभियान:** यह एक केंद्र प्रायोजित योजना है जिसका उद्देश्य पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त बनाना और उन्हें स्थानीय स्वशासन और आर्थिक विकास के जीवंत केंद्र के रूप में विकसित करना है। यह योजना पंचायतों के निर्वाचित प्रतिनिधियों के क्षमता निर्माण पर जोर देती है, ताकि वे सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में प्रभावी ढंग से काम कर सकें। आरजीएसए के तहत, पंचायतों को बुनियादी प्रशिक्षण और पुनश्चर्या पाठ्यक्रम प्रदान किए जाते हैं, और उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, और स्वच्छता जैसे विशिष्ट क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

निष्कर्ष

विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठन ग्राम विकास और राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संगठन शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक जागरूकता जैसे क्षेत्रों में योगदान देकर ग्रामीण समाज को सशक्त बनाते हैं। भारत स्काउट्स और गाइड्स, राष्ट्रीय सेवा योजना, राष्ट्रीय कैडेट कोर, नेहरू युवा केंद्र संगठन और "मेरा युवा भारत" (MY Bharat) जैसे कार्यक्रम युवाओं को संगठित कर ग्राम स्वराज और सतत् विकास की दिशा में प्रेरित करते हैं।

ग्राम सभा और पंचायतों के साथ मिलकर कार्य करते हुए ये संगठन स्थानीय समस्याओं के समाधान, लोकतांत्रिक सहभागिता और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देते हैं। नई शिक्षा नीति 2020 के तहत डिजिटल साक्षरता और कौशल विकास के साथ जुड़कर वे नवाचार और उद्यमिता को भी प्रोत्साहित कर रहे हैं। इस प्रकार, विद्यार्थी युवा स्वयंसेवी संगठन केवल सेवा तक सीमित न रहकर ग्रामीण समाज को प्रगतिशील बनाने और सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक सिद्ध हो रहे हैं।

संदर्भ

- मौर्य, अर्जुन कुमार एवं शुक्ल, जय शंकर (2022). *ग्रामीण विकास में कौशल विकास की भूमिका एवं अपेक्षाओं का अध्ययन.* https: //ijrrssonline.in/HTMLPaper.aspx?Journal=International+Journal+of+Reviews+and+Research+in+Social+Sciences%3BPID%3D2022-10-4-2
- मेरा युवा भारत (2025). मेरा युवा भारत, https://mybharat.gov.in/
- जोशी, राजेंद्र कुमार. (n.d.). *स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका.* रोजगार समाचार, Retrieved from https: //rojgarsamachar.gov.in/Editorial-for-issue-No-9%28Hindi%29.pdf
- रेन, जे., एवं अन्य. (2024). *ग्रामीण समुदायों में सकारात्मक युवा विकास को बढ़ावा देना. National Institutes of Health.* Retrieved from https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC11414932/
- सिंह, राजेन्द्र. (n.d.). *सोशलॉजी फॉर हेल्थ प्रोफेशनल्स.* [पुस्तक]।
- साइंस डायरेक्ट. (n.d.). *उच्च शिक्षा के विकास में युवा संगठन की भूमिका.* https://www.sciencedirect.com से लिया गया।
- वर्मा (n.d.). *इंट्रोडक्शन टू एप्लाइड सोशियोलॉजी.* [पुस्तक]।

2

पंचायती राज संस्थाओं का सशक्तिकरण

डॉ. पी. सी. गुप्ता रोली गुप्ता

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.21-33

ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

पंचायती राज व्यवस्था भारतीय लोकतंत्र की आधारशिला है जो जमीनी स्तर पर शासन की स्थापना करती है। 73वें संविधान संशोधन (1992) के बाद से पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ है। यह शोध पत्र पंचायती राज संस्थाओं के सशक्तिकरण की वर्तमान स्थिति, चुनौतियों और समाधानों का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन में पाया गया कि वित्तीय, प्रशासनिक और राजनीतिक सशक्तिकरण के तीन स्तंभों पर कार्य करना आवश्यक है। मुख्य चुनौतियों में वित्तीय संसाधनों की कमी, क्षमतावान जनप्रतिनिधियों का अभाव, और पारदर्शिता की समस्याएं शामिल हैं। केरल, राजस्थान और ओडिशा के सफल मॉडल से यह स्पष्ट होता है कि ई-गवर्नेंस, सामाजिक अंकेक्षण और महिला भागीदारी के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को प्रभावी बनाया जा सकता है। शोध का निष्कर्ष यह है कि त्रिआयामी स्वायत्तता और दीर्घकालिक नीति निर्माण के माध्यम से पंचायती राज को विकास का प्रथम सोपान बनाया जा सकता है।

मुख्य शब्द: पंचायती राज, विकेंद्रीकरण, सशक्तिकरण, महिला भागीदारी, ई-गवर्नेंस

प्रस्तावना

भारत में स्थानीय स्वशासन की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। वैदिक काल से लेकर मुगल काल तक, गाँवों में पंचायतों का अस्तित्व रहा है, जो स्थानीय विवादों का निपटारा करती थीं और ग्रामीण जीवन को संचालित करती थीं। महात्मा गांधी ने इसी परंपरा को आधार बनाकर "ग्राम स्वराज" की अवधारणा दी, जिसके अनुसार गाँव ही भारतीय लोकतंत्र की मूल इकाई होनी चाहिए।स्वतंत्रता के बाद, पंचायती राज व्यवस्था को लागू करने की दिशा में पहला महत्वपूर्ण कदम 1957 में बलवंत राय मेहता समिति की स्थापना के साथ उठाया गया। इस समिति ने त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था

की सिफारिश की, जिसमें ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला पंचायत शामिल थे। राजस्थान पहला राज्य था जिसने 1959 में इस व्यवस्था को लागू किया। 1960 के दशक में अधिकांश राज्यों में पंचायती राज संस्थाएं स्थापित हुईं, लेकिन धीरे-धीरे इनकी प्रभावशीलता में गिरावट आई। राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी, वित्तीय संसाधनों की कमी और नौकरशाही के हस्तक्षेप के कारण ये संस्थाएं कमजोर होती गईं। 1970 के दशक तक कई राज्यों में पंचायतें या तो भंग कर दी गईं या वे निष्क्रिय हो गईं।

इस स्थिति को सुधारने के लिए अशोक मेहता समिति (1977) का गठन किया गया, जिसने द्विस्तरीय व्यवस्था का सुझाव दिया। इसके बाद जी.वी.के. राव समिति (1985) और एल.एम. सिंघवी समिति (1986) ने भी पंचायती राज संस्थाओं के सुदृढ़ीकरण के लिए महत्वपूर्ण सुझाव दिए।राजीव गांधी सरकार के दौरान पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा देने का प्रयास किया गया, जिसका परिणाम 73वां संविधान संशोधन (1992) था। यह संशोधन भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में एक मील का पत्थर है, जिसने पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक सुरक्षा प्रदान की। 24 अप्रैल 1993 को यह संशोधन प्रभावी हुआ, जिसे अब राष्ट्रीय पंचायती राज दिवस के रूप में मनाया जाता है।

लोकतंत्र का विकेन्द्रीकरण और स्थानीय शासन की आवश्यकता

लोकतंत्र का विकेन्द्रीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें शक्ति और अधिकार केंद्र से स्थानीय स्तर पर स्थानांतरित किए जाते हैं। भारत जैसे विविधताओं से भरे और विशाल देश में केंद्रीकृत शासन व्यवस्था से सभी क्षेत्रों की समस्याओं का समाधान संभव नहीं था। स्थानीय आवश्यकताओं, परंपराओं और समस्याओं को समझने के लिए स्थानीय स्तर पर शासन की आवश्यकता महसूस हुई।विकेन्द्रीकरण की आवश्यकता के मुख्य कारण थे: प्रशासनिक दक्षता में वृद्धि, जनता की शासन में सहभागिता बढ़ाना, स्थानीय संसाधनों का बेहतर उपयोग, ग्रामीण विकास में तेजी लाना, और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना। केंद्रीकृत व्यवस्था में आम जनता का शासन से दूरी बना रहता था, जिससे लोकतांत्रिक मूल्यों का हनन होता था।स्थानीय शासन की आवश्यकता इसलिए भी जरूरी थी कि यह जमीनी स्तर पर नेतृत्व विकसित करता है। महिलाओं, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षण के माध्यम से सामाजिक न्याय सुनिश्चित करता है। 73वें संविधान संशोधन ने महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण का प्रावधान किया, जिससे ग्रामीण राजनीति में महिलाओं की भागीदारी में क्रांतिकारी वृद्धि हुई।

विकेन्द्रीकरण से योजना निर्माण में भी सुधार आया। ग्राम सभा और पंचायतों के माध्यम से स्थानीय जरूरतों के आधार पर योजनाएं बनाई जाने लगीं। शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, जल व्यवस्था, कृषि विकास जैसे क्षेत्रों में स्थानीय संस्थाओं की प्रभावी भूमिका से बेहतर परिणाम आए।आर्थिक विकास की दृष्टि से भी विकेन्द्रीकरण महत्वपूर्ण है। स्थानीय संसाधनों की पहचान और उनका

उपयोग, कुटीर उद्योगों का विकास, रोजगार सृजन जैसे कार्यों में पंचायती राज संस्थाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। मनरेगा जैसी योजनाओं का सफल क्रियान्वयन भी इन्हीं संस्थाओं के माध्यम से संभव हुआ है। इस प्रकार, पंचायती राज व्यवस्था न केवल भारतीय परंपरा की निरंतरता है, बल्कि आधुनिक लोकतांत्रिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी करती है। यह व्यवस्था भारतीय लोकतंत्र को और मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

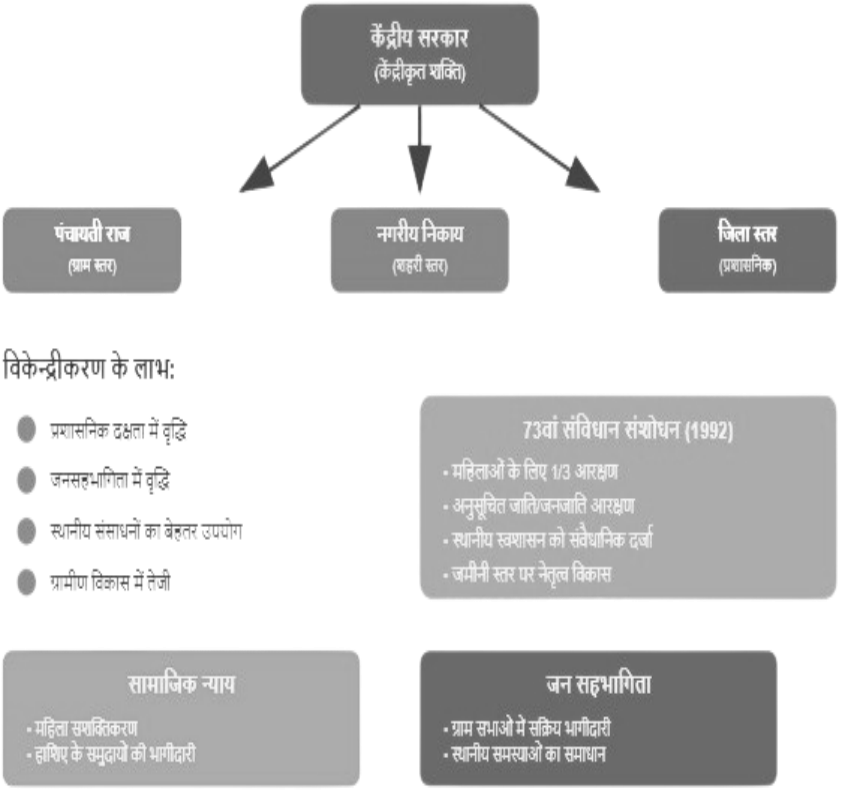

चित्र 2.1: लोकतंत्र के विकेन्द्रीकरण और स्थानीय शासन

शोध विधि

यह अध्ययन मिश्रित शोध पद्धति पर आधारित है। द्वितीयक आंकड़ों का विश्लेषण सरकारी रिपोर्ट्स, शोध पत्रों और नीतिगत दस्तावेजों के आधार पर किया गया है। गुणात्मक विश्लेषण के लिए केरल, राजस्थान और ओडिशा के केस स्टडी का उपयोग किया गया है। मात्रात्मक डेटा का संग्रह राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय सांख्यिकीय रिपोर्ट्स से किया गया है।

पंचायती राज की संरचना और कार्यक्षेत्र

भारत की पंचायती राज व्यवस्था एक त्रिस्तरीय संरचना पर आधारित है, जो विकेंद्रीकृत शासन प्रणाली का एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करती है। यह तीनों स्तर एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं और मिलकर एक समग्र विकास तंत्र का निर्माण करते हैं। ग्राम पंचायत इस व्यवस्था की सबसे निचली और सबसे महत्वपूर्ण इकाई है। यह प्रत्यक्ष लोकतंत्र का प्रतिनिधित्व करती है, जहां गांव के लोग अपने मुद्दों पर सीधे चर्चा करते हैं और निर्णय लेते हैं। ग्राम सभा, जो सभी वयस्क मतदाताओं से मिलकर बनती है, ग्राम पंचायत की निर्णयकारी संस्था है। ग्राम प्रधान या सरपंच इसका मुखिया होता है, जो प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुना जाता है।

मंडल या पंचायत समिति मध्यम स्तर की संस्था है, जो कई ग्राम पंचायतों को जोड़ने का काम करती है। इसे अलग-अलग राज्यों में अलग नामों से जाना जाता है - जैसे तालुका पंचायत, ब्लॉक पंचायत, या क्षेत्र पंचायत। यह स्तर ग्राम और जिला स्तर के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी का काम करता है। इसका अध्यक्ष अप्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुना जाता है। जिला पंचायत सबसे ऊपरी स्तर है, जो पूरे जिले के लिए नीति निर्माण और समन्वय का काम करती है। यह मंडल पंचायतों के बीच समन्वय स्थापित करती है और जिला स्तर पर विकास योजनाओं का क्रियान्वयन सुनिश्चित करती है। जिला पंचायत का अध्यक्ष भी अप्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुना जाता है। यह त्रिस्तरीय संरचना "सब्सिडिएरिटी" के सिद्धांत पर काम करती है, जहां जो काम निचले स्तर पर हो सकता है, उसे ऊपरी स्तर पर नहीं भेजा जाता। इससे प्रशासनिक दक्षता बढ़ती है और स्थानीय जरूरतों का बेहतर समाधान मिलता है।

संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में पंचायतों के 29 विषय निर्दिष्ट हैं, जो इनकी व्यापक जिम्मेदारियों को दर्शाते हैं। योजना निर्माण पंचायतों की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। ग्राम पंचायत स्तर पर ग्राम विकास योजना तैयार की जाती है, जो स्थानीय जरूरतों और प्राथमिकताओं पर आधारित होती है। यह योजना सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास दोनों को ध्यान में रखकर बनाई जाती है। मनरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना, और अन्य केंद्र प्रायोजित योजनाओं का क्रियान्वयन भी इसी के तहत होता है। जल और स्वच्छता क्षेत्र में पंचायतें पेयजल आपूर्ति, हैंडपंप की देखभाल, स्वच्छ भारत मिशन का क्रियान्वयन, और गांव की सफाई की जिम्मेदारी संभालती हैं। जल जीवन मिशन के तहत हर घर तक पानी पहुंचाने में भी इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षा के क्षेत्र में पंचायतें प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था, स्कूल भवनों का निर्माण और रखरखाव, शिक्षकों की नियुक्ति में सहयोग, और मध्याह्न भोजन योजना के संचालन की जिम्मेदारी निभाती हैं।पोषण कार्यक्रमों में आंगनवाड़ी केंद्रों का संचालन, बाल विकास सेवाएं, और महिला एवं बाल कल्याण योजनाओं का क्रियान्वयन शामिल है। कुपोषण की रोकथाम और मातृ-शिशु स्वास्थ्य में सुधार इनकी प्राथमिकता है।स्वास्थ्य सेवाओं में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों का संचालन, टीकाकरण अभियान, महामारी की रोकथाम, और परिवार नियोजन कार्यक्रम शामिल हैं।पंचायती राज व्यवस्था भारत के लोकतंत्र को

मजबूत बनाने और ग्रामीण विकास में तेजी लाने का एक प्रभावी माध्यम है। यह व्यवस्था न केवल शासन को जनता के करीब लाती है, बल्कि स्थानीय नेतृत्व विकसित करने में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है।

सशक्तिकरण के तीन स्तंभ: एक विस्तृत विश्लेषण

वित्तीय सशक्तिकरण: कर संग्रहण, निधियों का स्वामित्व- वित्तीय सशक्तिकरण किसी भी संस्था या व्यक्ति के स्वावलंबन का मूलभूत आधार है। यह न केवल आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान करता है, बल्कि निर्णय लेने की क्षमता भी बढ़ाता है। स्थानीय स्वशासन के संदर्भ में, वित्तीय सशक्तिकरण का अर्थ है कि पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों को अपने वित्तीय संसाधनों पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त हो।कर संग्रहण के अधिकार से स्थानीय निकाय अपने क्षेत्र में संपत्ति कर, व्यापार कर, और सेवा शुल्क लगाने की क्षमता रखते हैं। यह उन्हें केंद्र और राज्य सरकार की अनुदान राशि पर निर्भरता कम करने में सहायक होता है। जब स्थानीय निकाय अपने संसाधन स्वयं जुटाते हैं, तो वे अपनी प्राथमिकताओं के अनुसार विकास योजनाओं को तैयार और क्रियान्वित कर सकते हैं।निधियों का स्वामित्व इस बात को सुनिश्चित करता है कि एकत्रित राजस्व का उपयोग स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जाए। इससे पारदर्शिता बढ़ती है और भ्रष्टाचार की संभावना कम होती है। वित्तीय स्वायत्तता से स्थानीय निकाय शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, और बुनियादी ढांचे के विकास में तत्काल निवेश कर सकते हैं। यह न केवल जीवन स्तर में सुधार लाता है, बल्कि स्थानीय अर्थव्यवस्था को भी मजबूत बनाता है।

प्रशासनिक सशक्तिकरण: निर्णय लेने की स्वतंत्रता, कर्मचारियों की उपलब्धता- प्रशासनिक सशक्तिकरण का तात्पर्य है कि स्थानीय संस्थाओं को अपने कार्यक्षेत्र में स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने और उन्हें क्रियान्वित करने की शक्ति प्राप्त हो। यह केवल कागजी अधिकार नहीं होना चाहिए, बल्कि व्यावहारिक रूप से भी प्रभावी होना चाहिए।निर्णय लेने की स्वतंत्रता में स्थानीय मुद्दों की पहचान, समाधान की योजना बनाना, और संसाधनों का आवंटन शामिल है। जब स्थानीय निकाय अपने क्षेत्र की समस्याओं को बेहतर समझते हैं, तो वे अधिक प्रभावी और लक्षित समाधान तैयार कर सकते हैं। यह केंद्रीकृत नीति निर्माण की तुलना में अधिक फलदायक साबित होता है।कर्मचारियों की उपलब्धता प्रशासनिक सशक्तिकरण का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है। स्थानीय निकायों के पास पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित और योग्य कर्मचारी होने चाहिए जो विभिन्न विभागों में काम कर सकें। इनमें इंजीनियर, डॉक्टर, शिक्षक, लेखाकार, और प्रशासनिक अधिकारी शामिल हैं। जब तक मानव संसाधन उपलब्ध नहीं होते, तब तक सबसे अच्छी योजनाएं भी धरती पर नहीं उतर सकतीं।प्रशासनिक सशक्तिकरण से जवाबदेही भी बढ़ती है। स्थानीय प्रशासन सीधे नागरिकों के संपर्क में रहता है, जिससे शासन में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व की भावना पैदा होती है।

राजनीतिक सशक्तिकरण

चुनाव, आरक्षण, महिला भागीदारी- राजनीतिक सशक्तिकरण लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की आत्मा है। यह सुनिश्चित करता है कि शक्ति का वितरण न केवल संस्थागत स्तर पर हो, बल्कि सामाजिक स्तर पर भी न्यायसंगत हो।नियमित और निष्पक्ष चुनाव राजनीतिक सशक्तिकरण का आधार हैं। जब स्थानीय प्रतिनिधि प्रत्यक्ष मतदान से चुने जाते हैं, तो वे जनता के प्रति अधिक जवाबदेह होते हैं। पांच साल की निश्चित अवधि के बाद चुनाव होना यह सुनिश्चित करता है कि गैर-प्रदर्शनकारी प्रतिनिधियों को हटाया जा सके और नई प्रतिभाओं को अवसर मिले।आरक्षण व्यवस्था राजनीतिक सशक्तिकरण का क्रांतिकारी पहलू है। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण से यह सुनिश्चित होता है कि समाज के हाशिए पर खड़े लोगों की आवाज भी सुनी जाए। यह केवल प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व नहीं है, बल्कि वास्तविक शक्ति साझाकरण है।महिला भागीदारी राजनीतिक सशक्तिकरण का सबसे महत्वपूर्ण घटक है। 33% आरक्षण के माध्यम से महिलाओं को स्थानीय राजनीति में समान भागीदारी का अवसर मिलता है। महिला नेतृत्व अक्सर शिक्षा, स्वास्थ्य, और सामाजिक कल्याण के मुद्दों को प्राथमिकता देता है। उनकी भागीदारी से न केवल निर्णय लेने की गुणवत्ता में सुधार होता है, बल्कि पारंपरिक पितृसत्तात्मक संरचनाओं में भी परिवर्तन आता है।राजनीतिक सशक्तिकरण का अंतिम उद्देश्य यह है कि प्रत्येक नागरिक को लगे कि उसकी आवाज सुनी जाती है और उसकी भागीदारी से वास्तविक परिवर्तन आ सकता है।

चुनौतियाँ

वित्तीय संसाधनों की कमी

वित्तीय संसाधनों की कमी भारतीय शासन व्यवस्था की सबसे बड़ी बाधाओं में से एक है। यह समस्या केंद्र सरकार से लेकर स्थानीय निकायों तक हर स्तर पर दिखाई देती है। राज्य सरकारों के पास अक्सर पर्याप्त बजट नहीं होता जिससे वे विकास योजनाओं को सफलतापूर्वक क्रियान्वित कर सकें। शिक्षा, स्वास्थ्य, और अवसंरचना जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में निवेश की कमी के कारण जनता को गुणवत्तापूर्ण सेवाएँ नहीं मिल पातीं। पंचायती राज संस्थानों की स्थिति और भी दयनीय है। ग्राम पंचायतों और नगर पालिकाओं के पास अपने बुनियादी कार्यों को पूरा करने के लिए भी पर्याप्त धन नहीं होता। सड़कों की मरम्मत, पानी की व्यवस्था, और स्वच्छता जैसी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में वे असमर्थ रहती हैं। केंद्र सरकार द्वारा आवंटित धन अक्सर देर से मिलता है और कई बार राज्य सरकारें भी अपना हिस्सा समय पर नहीं देतीं।इस वित्तीय संकट का मूल कारण कर संग्रह की अक्षम व्यवस्था भी है। स्थानीय निकायों के पास कर लगाने और वसूलने के सीमित अधिकार हैं।

भ्रष्टाचार और कर चोरी की समस्या इस स्थिति को और भी गंभीर बना देती है। परिणामस्वरूप, विकास परियोजनाएँ अधूरी रह जाती हैं और जनता की समस्याएँ बनी रहती हैं।

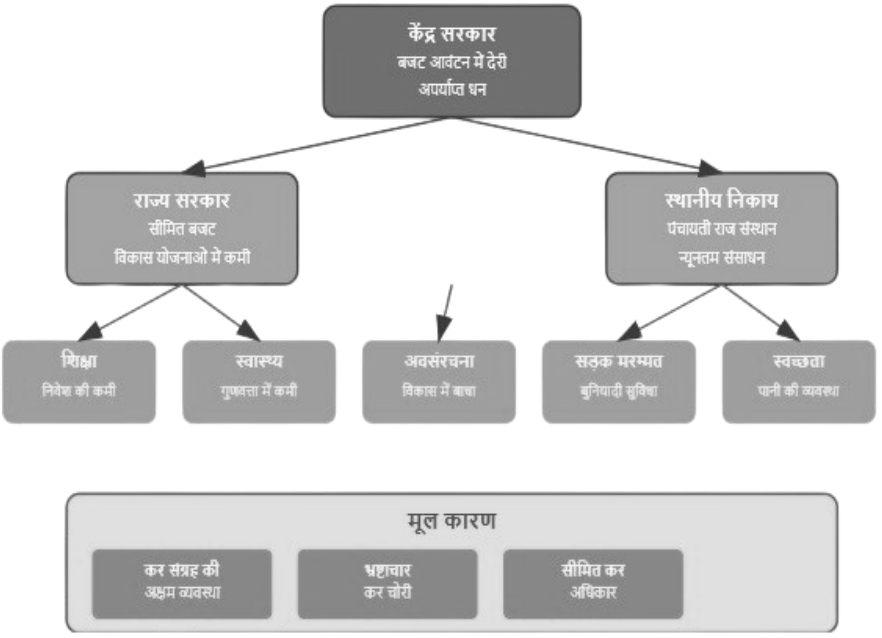

चित्र 2.2: वित्तीय संसाधनों की कमी

क्षमतावान जनप्रतिनिधियों और कर्मचारियों का अभाव

भारतीय लोकतंत्र की सफलता के लिए आवश्यक है कि शासन-प्रशासन में ऐसे जनप्रतिनिधि और कर्मचारी हों जो योग्य, कुशल और उत्तरदायी हों। वर्तमान समय में इस दिशा में सुधार की आवश्यकता महसूस की जा रही है। राजनीति और प्रशासन में शिक्षित, अनुभवी तथा सेवा-भाव से प्रेरित लोगों की भागीदारी बढ़ाने से शासन व्यवस्था और अधिक प्रभावी बन सकती है। नीति निर्माण जैसे जटिल कार्यों के लिए आर्थिक, सामाजिक और तकनीकी विषयों की गहन समझ आवश्यक होती है। इसलिए जनप्रतिनिधियों के लिए निरंतर प्रशिक्षण और ज्ञानवर्धन के अवसर प्रदान करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसी प्रकार, सरकारी कर्मचारियों की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए भी आधुनिक तकनीकों, पारदर्शी भर्ती प्रक्रियाओं और क्षमता-विकास कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी जा रही है। इन सुधारात्मक प्रयासों के माध्यम से प्रशासनिक कार्यकुशलता में वृद्धि, संसाधनों के बेहतर उपयोग और जनसेवा की गुणवत्ता में सुधार संभव है। यदि यह प्रवृत्ति निरंतर जारी रहती है, तो भारतीय लोकतंत्र और प्रशासन दोनों अधिक सक्षम, उत्तरदायी और जनहितैषी बनेंगे।

पारदर्शिता और जवाबदेही की समस्याएँ

तीसरी और संभवतः सबसे गंभीर समस्या पारदर्शिता और जवाबदेही की कमी है। लोकतंत्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि सरकार अपने कार्यों के लिए जनता के सामने जवाबदेह हो। दुर्भाग्य से, भारत में यह जवाबदेही का भाव लगातार घट रहा है।सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के बाद स्थिति में कुछ सुधार हुआ था, लेकिन अभी भी बहुत कुछ छुपाया जाता है। सरकारी फैसले अक्सर बंद कमरों में लिए जाते हैं और जनता को उनकी जानकारी नहीं मिलती। बजट का वितरण, सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन, और अधिकारियों की नियुक्ति जैसे मामलों में पारदर्शिता की कमी है।

समाधान और नवाचार

ई-गवर्नेंस और डिजिटल ग्राम पंचायतें

ई-गवर्नेंस का मतलब है इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से शासन प्रक्रिया का संचालन। डिजिटल ग्राम पंचायतों के माध्यम से यह अवधारणा ग्रामीण स्तर तक पहुंच गई है। इस व्यवस्था में पंचायतों के कामकाज को कंप्यूटर और इंटरनेट की सहायता से संचालित किया जाता है।डिजिटल ग्राम पंचायतों में सभी रिकॉर्ड्स डिजिटल रूप में संग्रहीत होते हैं। जन्म-मृत्यु प्रमाणपत्र, आय प्रमाणपत्र, जाति प्रमाणपत्र जैसी सेवाओं के लिए अब लोगों को कई बार कार्यालय के चक्कर नहीं लगाने पड़ते। ऑनलाइन आवेदन प्रणाली के माध्यम से घर बैठे ही ये सेवाएं प्राप्त की जा सकती हैं।ई-ग्राम स्वराज पोर्टल इस दिशा में एक महत्वपूर्ण पहल है। इस पोर्टल पर पंचायतों की सभी गतिविधियों की जानकारी उपलब्ध होती है। योजनाओं का क्रियान्वयन, बजट का उपयोग, विकास कार्यों की प्रगति सभी की रियल-टाइम मॉनिटरिंग हो सकती है। इससे न केवल पारदर्शिता बढ़ती है बल्कि भ्रष्टाचार पर भी नियंत्रण पाया जा सकता है। डिजिटल पेमेंट सिस्टम के माध्यम से मनरेगा के तहत मजदूरों का भुगतान सीधे उनके बैंक खातों में होता है। इससे बिचौलियों का खत्म होना और भ्रष्टाचार में कमी आना प्रमुख लाभ हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म पर ग्राम सभा की कार्यवाही का रिकॉर्ड रखा जाता है। उपस्थिति, निर्णयों का विवरण और अनुपालन की स्थिति सभी डेटा सुरक्षित रूप से संग्रहीत होता है। यह व्यवस्था जवाबदेही को बढ़ावा देती है।

सामाजिक अंकेक्षण, प्रबंधन सूचना प्रणाली और पंचायत साक्षरता अभियान तथा जन-सुनवाई व बजट पारदर्शिता

सामाजिक अंकेक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें समुदाय के लोग स्वयं पंचायत के कार्यों की जांच करते हैं। यह एक सहभागी निगरानी प्रणाली है जो यह सुनिश्चित करती है कि सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन उचित तरीके से हो रहा है या नहीं। इस प्रक्रिया में ग्राम सभा के सदस्य मनरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना, स्वच्छ भारत अभियान जैसी योजनाओं के तहत हुए कार्यों की गुणवत्ता, मात्रा और वास्तविकता की जांच करते हैं। यह जांच नियमित अंतराल पर की जाती है

और इसके परिणाम सार्वजनिक रूप से साझा किए जाते हैं। प्रबंधन सूचना प्रणाली (एमआईएस) प्रणाली पंचायती राज संस्थानों में एक व्यवस्थित डेटाबेस का काम करती है। इसके माध्यम से योजनाओं की प्रगति, वित्तीय स्थिति, लाभार्थियों की जानकारी और कार्यों की गुणवत्ता का आकलन किया जाता है। यह प्रणाली निर्णय लेने में सहायक होती है और नीति निर्माताओं को सटीक जानकारी प्रदान करती है।पंचायत साक्षरता अभियान का उद्देश्य ग्रामीण जनता को उनके अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में जागरूक करना है। इसके अंतर्गत लोगों को पंचायती राज व्यवस्था, सरकारी योजनाओं, सूचना का अधिकार (RTI) के अधिकार और सामाजिक अंकेक्षण की प्रक्रिया के बारे में शिक्षित किया जाता है।

चित्र 2.3: कार्यान्वयन प्रक्रिया

जन-सुनवाई, पंचायत स्तर पर बजट पारदर्शिता

जन-सुनवाई एक महत्वपूर्ण लोकतांत्रिक प्रक्रिया है जिसमें नागरिकों को अपनी समस्याओं और सुझावों को प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत करने का अवसर मिलता है। पंचायत स्तर पर नियमित जन-सुनवाई का आयोजन किया जाता है जहां लोग अपनी शिकायतें दर्ज करा सकते हैं और तत्काल समाधान प्राप्त कर सकते हैं।बजट पारदर्शिता के तहत पंचायत का पूरा बजट सार्वजनिक किया जाता है। आय-व्यय का विवरण, योजनाओं के लिए आवंटित राशि, और उनका उपयोग - सभी की जानकारी नोटिस बोर्ड और डिजिटल प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध होती है। इससे भ्रष्टाचार पर नियंत्रण पाया जाता है और जनता का विश्वास बढ़ता है।ये सभी पहल मिलकर पंचायती राज व्यवस्था को अधिक जनोन्मुखी, पारदर्शी और प्रभावी बनाती हैं। डिजिटल तकनीक के साथ-साथ जन भागीदारी को प्रोत्साहित करके वास्तविक अर्थों में लोकतांत्रिक शासन की स्थापना की जा सकती है।

केस स्टडी

i. केरल की योजना ग्राम सभा मॉडल

केरल राज्य ने पंचायती राज व्यवस्था में एक अनूठा नवाचार करते हुए योजना ग्राम सभा मॉडल विकसित किया है, जो जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक भागीदारी को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यह मॉडल 1996 में शुरू किए गए केरल के विकेंद्रीकरण अभियान का एक अभिन्न हिस्सा है।योजना ग्राम सभा की सबसे विशिष्ट विशेषता यह है कि यह प्रत्येक वार्ड स्तर पर नियमित रूप से आयोजित की जाती है। इसमें स्थानीय निवासी अपनी आवश्यकताओं, समस्याओं और प्राथमिकताओं पर सीधे चर्चा करते हैं। ग्राम सभा की बैठकों में महिलाओं, दलितों, आदिवासियों और अन्य वंचित समुदायों की अनिवार्य भागीदारी सुनिश्चित की जाती है।इस मॉडल की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता सामाजिक ऑडिट की प्रक्रिया है। प्रत्येक योजना ग्राम सभा में पिछली योजनाओं के क्रियान्वयन की समीक्षा की जाती है और भविष्य की योजनाओं के लिए सुझाव दिए जाते हैं। यह प्रक्रिया पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करती है।केरल के इस मॉडल की सफलता का प्रमाण यह है कि राज्य सरकार के कुल बजट का लगभग 35-40 प्रतिशत हिस्सा पंचायतों के माध्यम से खर्च किया जाता है। यह भागीदारी बजटिंग का एक उत्कृष्ट उदाहरण है जहां आम जनता सीधे तौर पर विकास योजनाओं के निर्माण और क्रियान्वयन में शामिल होती है।

ii. राजस्थान की महिला प्रधान नेतृत्व पहल

राजस्थान ने पंचायती राज संस्थानों में महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी कदम उठाया है। राज्य ने न केवल संविधान के 73वें संशोधन द्वारा निर्धारित 33 प्रतिशत आरक्षण को लागू किया है, बल्कि कई अतिरिक्त पहल भी शुरू की हैं जो महिला नेतृत्व को प्रोत्साहित करती हैं। राजस्थान की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यहां महिला पंचायत प्रतिनिधियों के लिए विशेष क्षमता निर्माण कार्यक्रम चलाए जाते हैं। इन कार्यक्रमों में नेतृत्व विकास, वित्तीय साक्षरता, कानूनी जागरूकता और तकनीकी प्रशिक्षण शामिल है। राज्य ने महिला पंचायत प्रतिनिधियों के लिए अलग से हेल्पलाइन भी स्थापित की है।राजस्थान में महिला सरपंचों की संख्या राष्ट्रीय औसत से काफी अधिक है। राज्य में लगभग 60 प्रतिशत पंचायतों में महिला सरपंच हैं। इन महिला नेताओं ने जल संरक्षण, स्वच्छता, शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य किए हैं।राज्य सरकार ने महिला पंचायत प्रतिनिधियों के लिए अलग से बजट आवंटन की व्यवस्था भी की है। इसके अंतर्गत महिला कल्याण, बाल विकास और सामुदायिक स्वास्थ्य से संबंधित योजनाओं को प्राथमिकता दी जाती है। यह पहल ग्रामीण क्षेत्रों में लैंगिक समानता स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

iii. ओडिशा में पंचायत निधियों की पारदर्शिता प्रणाली

ओडिशा राज्य ने पंचायती राज संस्थानों में वित्तीय पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए एक अत्याधुनिक डिजिटल प्रणाली विकसित की है। यह प्रणाली सरकारी फंड के उपयोग में

पूर्ण पारदर्शिता लाने का एक अभिनव प्रयास है।ओडिशा की पारदर्शिता प्रणाली का केंद्रीय तत्व ऑनलाइन फंड ट्रैकिंग सिस्टम है। इस सिस्टम के माध्यम से राज्य सरकार से लेकर ग्राम पंचायत तक के सभी स्तरों पर धन के हस्तांतरण और उपयोग की रियल टाइम जानकारी उपलब्ध होती है। प्रत्येक लेन-देन का डिजिटल रिकॉर्ड रखा जाता है जो सार्वजनिक रूप से उपलब्ध है।राज्य ने सामाजिक ऑडिट की एक मजबूत प्रणाली भी स्थापित की है। प्रत्येक ग्राम सभा में पंचायत के खर्च का विस्तृत हिसाब प्रस्तुत किया जाता है। इसके लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित सामाजिक ऑडिटर्स की टीम कार्य करती है जो स्वतंत्र रूप से सभी परियोजनाओं की समीक्षा करती है।ओडिशा की यह प्रणाली भ्रष्टाचार रोकने में अत्यधिक प्रभावी साबित हुई है। राज्य में पंचायत स्तर पर भ्रष्टाचार की घटनाएं काफी कम हुई हैं। इस डिजिटल पारदर्शिता प्रणाली के कारण ओडिशा को राष्ट्रीय स्तर पर सराहना मिली है और अन्य राज्य भी इस मॉडल को अपनाने पर विचार कर रहे हैं।यह तीनों पहल भारत में पंचायती राज व्यवस्था को और भी प्रभावी बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं, जो भविष्य में अन्य राज्यों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन सकती हैं।

निष्कर्ष और नीति सुझाव

पंचायती राज की सफलता के लिए संस्थाओं की त्रिआयामी स्वायत्तता अत्यंत महत्वपूर्ण है। वर्तमान में अधिकांश पंचायतें केवल नाममात्र की संस्थाएं हैं, जिनके पास वास्तविक शक्ति और अधिकार नहीं हैं।निर्णय की स्वायत्तता का अर्थ है कि पंचायतों को स्थानीय मुद्दों पर स्वतंत्र निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए। वर्तमान में अधिकांश निर्णय राज्य सरकार या जिला प्रशासन के स्तर पर लिए जाते हैं, जिससे स्थानीय आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं की अनदेखी होती है। पंचायतों को शिक्षा, स्वास्थ्य, जल प्रबंधन, सड़क निर्माण और कृषि विकास जैसे विषयों में स्वतंत्र निर्णय लेने का अधिकार मिलना चाहिए।वित्तीय स्वायत्तता के बिना कोई भी योजना या निर्णय अधूरा रह जाता है। वर्तमान में पंचायतों को अपने बजट का एक छोटा हिस्सा ही स्वतंत्र रूप से खर्च करने की अनुमति है। उन्हें अपने संसाधन जुटाने, कर लगाने, और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार धन का आवंटन करने का पूर्ण अधिकार मिलना चाहिए। केंद्र और राज्य सरकारों से मिलने वाली राशि के साथ-साथ, पंचायतों को स्थानीय व्यापार, संपत्ति कर, और अन्य स्रोतों से आय उत्पन्न करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।तकनीकी स्वायत्तता आज के डिजिटल युग में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। पंचायतों के पास अपनी तकनीकी जरूरतों को समझने और उन्हें पूरा करने की क्षमता होनी चाहिए। इसमें डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग, ई-गवर्नेंस का क्रियान्वयन, और आधुनिक कृषि तकनीकों का प्रयोग शामिल है। तकनीकी स्वायत्तता से न केवल कार्यप्रणाली में सुधार होगा, बल्कि पारदर्शिता भी बढ़ेगी।

पंचायती राज व्यवस्था को केवल एक प्रशासनिक इकाई नहीं, बल्कि विकास के प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण सोपान के रूप में देखा जाना चाहिए। इसके लिए दीर्घकालिक सोच और रणनीतिक नीति निर्माण की आवश्यकता है।विकास का प्रथम सोपान होने का अर्थ यह है कि सभी विकास

योजनाओं की शुरुआत पंचायत स्तर से होनी चाहिए। वर्तमान में अधिकांश योजनाएं टॉप-डाउन अप्रोच से बनाई जाती हैं, जहां केंद्र या राज्य सरकार नीतियां बनाती है और पंचायतों को उन्हें लागू करने का काम दिया जाता है। इसके विपरीत, बॉटम-अप अप्रोच अपनाकर स्थानीय जरूरतों को प्राथमिकता देना आवश्यक है।दीर्घकालिक नीति निर्माण में 20-25 साल का विजन होना चाहिए। इसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, रोजगार, और पर्यावरण संरक्षण जैसे सभी क्षेत्रों के लिए व्यापक योजना बनानी चाहिए। नीति निर्माण में स्थानीय भौगोलिक, सामाजिक, और आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखना आवश्यक है।इस दृष्टिकोण से पंचायती राज व्यवस्था न केवल ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में योगदान देगी, बल्कि राष्ट्रीय विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। जब पंचायतें मजबूत होंगी, तो राज्य और केंद्र सरकारें भी मजबूत होंगी।

पंचायती राज व्यवस्था को सशक्त बनाने के लिए संवैधानिक प्रावधानों के साथ-साथ व्यावहारिक कार्यान्वयन पर भी ध्यान देना आवश्यक है। स्वायत्तता और दीर्घकालिक नीति निर्माण के इन दोनों पहलुओं पर काम करके ही भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में वास्तविक विकास लाया जा सकता है।

संदर्भ

- अहमद, ए., और कबीर, एस. (2025). पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण का एक केस स्टडी। *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रूरल डेवलपमेंट, एनवायरनमेंट एंड हेल्थ रिसर्च*, 9(2), 610578
- आलम, टी. (2025). पंचायती राज संस्थाओं में महिला नेतृत्व की दक्षता और चुनौतियाँ: कश्मीर घाटी का एक अध्ययन। *सेक्सुएलिटी, जेंडर एंड पॉलिसी*, 8(2), e70007
- कबीर, एस. (2025). पर्यावरणीय शासन के लिए ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण: राजौरी जिले में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका। *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एनवायरनमेंटल साइंसेज*, 11(1), 385-396।
- कुमार, चं. (2023). महिला सशक्तिकरण और पंचायती राज: बिहार में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन। *राष्ट्रीय संगोष्ठी कार्यवाही*, 7।
- कुमार, चं., और शर्मा, एम. (2023). पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति। *इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन*, 69(4), 877-902।
- कुमार, एम. ए. (2023). पंचायती राज और महिला सशक्तिकरण: एक अवलोकन। *यथार्थवादी जर्नल ऑफ एडवांस्ड रिसर्च इन प्रोग्रेसिव स्पेक्ट्रम्स*, 2(09), 54-59।
- कुमार, पी. (2024). गाँवों का सशक्तिकरण: गांधीवादी आदर्श और पंचायत राज की भूमिका। *अकादमिक विमर्श*, 13(1), 1-11।

- खान, आई. (2024). ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने में पंचायती राज का महत्व: अंतर्दृष्टि और निहितार्थ। *महत्व*, 1(2)।
- गोस्वामी, खु. (2021). भारत में पंचायती राज संस्थाओं के विकास के माध्यम से शक्तियों का लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण। *मनोविज्ञान और शिक्षा*, 58(2), 8856-8860।
- घोषाल, अ. (2022). भारत की जनगणना, 2011 के परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका, *शोध प्रबंध*।
- दलाल, आर. एस., और ढिल्लों, एस. (2023). भारत में विकेंद्रीकृत शासन: पंचायती राज संस्थाओं के संदर्भ में एक मूल्यांकन, *इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन*, 69(3), 638-650
- दास, मा. (2022). भारत में पंचायती राज संस्थाएँ। *गैलोर इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एप्लाइड साइंसेज एंड ह्यूमैनिटीज़*, 6(2), 6-14
- पाल, बृ. (2023). भारत में ग्रामीण विकास पर पंचायती राज संस्थाओं के प्रभाव का आकलन। *अकादमिक विमर्श*, 12(1), 26-37
- परवीन, शि., और हुसैन, एम. आई. (2024). महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और सशक्तिकरण: 1993 से 2024 तक भारत में पंचायत राज संस्थाओं पर एक अध्ययन। *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस एंड गवर्नेंस*, 6(1), 342-345
- हक, अ. (2020). भारत में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण। *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस्ड रिसर्च इन इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी*, 11(10), 1827-1840
- शर्मा, अ., और हांडा, एस. (2022). पंचायती राज और महिला सशक्तिकरण। *एशियन जर्नल ऑफ एप्लाइड साइंस एंड टेक्नोलॉजी*, 6(3), 35-38
- सफीरा, कं., और हिलाल, ए. (2024). पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिला सशक्तिकरण: राजौरी जिले का एक सर्वेक्षण। *लाइब्रेरी ऑफ प्रोग्रेस-लाइब्रेरी साइंस, सूचना प्रौद्योगिकी और कंप्यूटर*, 44(3)
- तिरुपति, एल., ऐजाज़, एस., और भास्कर, के. (2021). समानांतर निकायों का निर्माण भारत में पंचायती राज संस्थाओं के प्रभावी कामकाज को कमजोर कर रहा है। *यूरोपियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस स्टडीज*, 5(1)
- उल्लाह, अ. (2020). भारत की पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने में सार्वजनिक-निजी भागीदारी। *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी एजुकेशनल रिसर्च*, 9(12), 5

3

विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह और उनके विकास संबंधी मुद्दे

डॉ. नीलांजन खटुआ

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.34-47
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

यह शोधपत्र मुख्य रूप से विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों और विशेष रूप से पहाड़ी कोरवा जनजाति और चोलनायकन जनजाति के विकास संबंधी मुद्दों पर प्रकाश डालता है। जनजाति, विशेष रूप से 'आदिम' जनजातीय समूहों पर विचार करते समय, कुछ प्रमुख विशेषताएँ उभर कर सामने आती हैं, जैसे निरक्षरता, उत्पादन प्रणाली में आदिमता, आर्थिक रूप से पिछड़ापन और स्थिर जनसंख्या आदि। पहाड़ी कोरवा और चोलनायकन जनजाति के संबंध में भी ये असामान्य नहीं हैं।

जनजातीय समुदाय विभिन्न भू-जलवायु परिस्थितियों जैसे वर्षा वन, पहाड़ी जंगल, अनावृत जंगल वाली पहाड़ियाँ, मैंग्रोव वन में रहते हैं और शिकार से लेकर औद्योगिक श्रम तक विभिन्न सामाजिक-आर्थिक विकासों में भी पाए जाते हैं। किसी भी जनजातीय समूह के जीवन के तरीके को जाने बिना संबंधित लोगों की कोई भी विकासात्मक गतिविधियाँ करना कठिन है। जो लोग जनजातीय विकास विभाग में कार्य करते हैं उन्हें नृवंशविज्ञान संबंधी विवरणो का सम्यक ज्ञान होना चाहिए। आम तौर पर यह पाया गया है कि आदिम जनजातीय समूहों के लिए प्रारंभ की गई विशेष विकास एजेंसी की देखभाल के लिए एक नव-नियुक्त आईएएस अधिकारी को परियोजना अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जाता है। प्रत्येक एजेंसी कार्यालय में एक विशेषज्ञ / नृवंशविज्ञानी की भी नियुक्त की जानी चाहिए, जो मानवविज्ञान विषय से हो तथा जनजातीय समूहों / जातीय समूह के बीच क्षेत्रकार्य में दक्ष और अनुभवी हो तथा अधीनस्थ अधिकारी के रूप में कार्य करें। क्रिया-उन्मुख अनुसंधान केवल आदिम समूहों की समस्याओं के समाधान और सरकार का ध्यान

आकर्षित करने के लिए ही उपयोगी है। आर्थिक विकास के लिए उनके पारंपरिक कौशल को बढ़ावा देने पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

मुख्य शब्द: आदिवासी विकास, पंचवर्षीय योजना, सांस्कृतिक पारिस्थितिकी, सामाजिक-सांस्कृतिक मुद्दे, नृजातीय अध्ययन

प्रस्तावना

विकास का तात्पर्य किसी जीव या सामाजिक व्यवस्था के निचले स्तर से उच्च स्तर की ओर व्यवस्थित गति और एकीकरण से है। अधिकांश लोग प्रति व्यक्ति आय या सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी) में वृद्धि को विकास का मानदंड मानते हैं, जबकि कुछ अन्य साक्षरता वृद्धि या स्वास्थ्य एवं स्वच्छता में वृद्धि को समूह के विकास का प्रतीक मानते हैं। विकास का संबंध किसी एक भाग या क्षेत्र के सुधार से है। मानवविज्ञानी मानते हैं कि विकास में किसी समूह के जीवन की गुणवत्ता में समग्र सुधार शामिल है। जीवन की गुणवत्ता भोजन, पानी, वस्त्र और आवास जैसी जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं की उपलब्धता और पहुँच पर निर्भर करती है।

भौगोलिक अलगाव, आर्थिक पिछड़ापन, विशिष्ट संस्कृति, बड़े पैमाने पर समुदाय के साथ संपर्क करने में संकोच के बावजूद, आदिवासी लोग अपने स्वदेशी ज्ञान के लिए जाने जाते हैं ताकि वे अपने आवास में उपलब्ध भौतिक संसाधनों का न्यायिक उपयोग कर सकें, उनके आश्रय के निर्माण से लेकर जीवित रहने की दिन-प्रतिदिन की जरूरतों तक। आदिवासी समुदाय विभिन्न भू-जलवायु परिस्थितियों जैसे वर्षा वन, पहाड़ी जंगल, नंगे जंगल वाली पहाड़ियां, मैंग्रोव वन में रहते हैं और शिकार से लेकर औद्योगिक श्रम तक विभिन्न सामाजिक-आर्थिक विकासों में भी पाए जाते हैं। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि आदिम जनजातीय समूह (पीटीजी) को अब विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह (पीवीटीजी) के रूप में जाना जाता है। वर्तमान पत्र मुख्य रूप से विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों और विशेष रूप से पहाड़ी कोरवा जनजाति और चोलनायकन जनजाति के विकास के मुद्दों पर प्रकाश डालता है।

जनजाति, विशेष रूप से 'आदिम' जनजातीय समूहों पर विचार करते समय कुछ प्रमुख विशेषताएं सामने आती हैं, जैसे निरक्षरता, उत्पादन प्रणाली में आदिमता, आर्थिक रूप से पिछड़ापन और स्थिर जनसंख्या आदि। पहाड़ी कोरवा और चोलनायकन जनजाति के मामले में भी ये असामान्य नहीं हैं।

आदिवासी विकास के मुद्दों पर विचार करने से पहले, यह जानना ज़रूरी है कि आदिवासी जनसंख्या के उत्थान के लिए आदिवासी विकास हेतु कौन-कौन से दृष्टिकोण अपनाए गए हैं। संविधान लागू होने के बाद, पचास के दशक के आरंभ में विशेष बहुउद्देशीय आदिवासी खंडों और आदिवासी विकास खंडों के रूप में विशेष कार्यक्रम शुरू किए गए। ये क्षेत्रीय विकास के दृष्टिकोण

पर आधारित थे। ये कार्यक्रम चौथी पंचवर्षीय योजना के अंत तक जारी रहे और इनका उद्देश्य देश की कुल आदिवासी जनसंख्या का केवल 40 प्रतिशत भाग ही कवर करना था।

पंचवर्षीय योजना (पाँचवीं योजना) में एक नया दृष्टिकोण अपनाया गया, जिसमें उन सभी क्षेत्रों की स्पष्ट रूप से पहचान की गई जहाँ जनजातीय आबादी 50 प्रतिशत से अधिक थी। इस नए कार्यक्रम के अंतर्गत कुल जनजातीय आबादी का लगभग 65 प्रतिशत भाग शामिल किया गया। शेष 35 प्रतिशत जनजातीय आबादी अब भी उपेक्षित रह गई। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, संविधान की भावना के अनुरूप छठी योजना में एक संतोषजनक समाधान की कल्पना की गई, जिसके अंतर्गत संपूर्ण जनजातीय आबादी चाहे वह जनजातीय बहुल क्षेत्रों में निवास करती हो या इनके बाहर को उपयुक्त विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत शामिल किया गया।

जनजातीय विकास की समग्र रूपरेखा को किसी क्षेत्र में जनजातीय जनसंख्या के वितरण के प्रकार और उनकी आर्थिक स्थिति के स्तर पर निर्भर करना होगा। जहाँ जनजातीय आबादी सघन रूप में निवास करती है, वहाँ 'क्षेत्र आधारित दृष्टिकोण' अपनाना उपयुक्त रहेगा, जिसमें जनजातीय समुदायों के समग्र विकास पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। लेकिन जहाँ जनजातीय लोग बिखरे हुए रूप में रहते हैं, वहाँ उनके लिए 'समुदाय-आधारित कार्यक्रमों' को विकसित किया जाना चाहिए। वहीं, जो 'आदिम जनजातीय समूह' अत्यंत विशेष समस्याओं का सामना कर रहे हैं और जिनकी संख्या बहुत कम है, उनके लिए एक अत्यंत सावधानीपूर्वक 'व्यक्तिकेंद्रित दृष्टिकोण' अपनाना होगा, विशेषकर तब जब उनकी नाजुक सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना पूरी तरह से टूटने के कगार पर हो। इस प्रकार जनजातीय समुदायों की समस्याओं को निम्नलिखित तीन वर्गों के आधार पर संबोधित किया जाएगा-

- जनजातीय सघनता वाले क्षेत्र
- अन्य क्षेत्रों में बिखरी हुई जनजातीय आबादी
- आदिम जनजातीय समुदाय

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान लगभग 50 आदिम जनजातीय समूहों की पहचान की गई थी। उनकी अत्यंत दयनीय और संकटग्रस्त स्थिति को ध्यान में रखते हुए, इनके लिए विशेष रूप से पृथक् वित्तीय आवंटन किए गए, जिनमें राज्यों की भागीदारी पर ज़ोर नहीं दिया गया। दुर्भाग्यवश, ये कार्यक्रम संतोषजनक रूप से प्रगति नहीं कर सके।

सांस्कृतिक पारिस्थितिकी और आजीविका का स्वरूप

पारिस्थितिकी शब्द का तात्पर्य जीवों एवं उनके पर्यावरण के परस्पर संबंधों के अध्ययन से है, जिसमें किसी विशेष क्षेत्र की भौतिक विशेषताएँ तथा वहाँ पाई जाने वाली जीवन-प्रकार की

विविधता सम्मिलित होती है। *सांस्कृतिक पारिस्थितिकी* समाज और पर्यावरण के मध्य संबंधों के अध्ययन को कहा जाता है। नृवंशविज्ञानी *आजीविका के स्वरूप* का अध्ययन करते हैं, अर्थात विभिन्न समाजों में लोग अपनी खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति किस प्रकार करते हैं।

आदिम जनजातीय समूह अपने परिवेश को भोजन और आश्रय का स्रोत मानते हैं। यह परिवेश उन्हें शांतिपूर्ण जीवन प्रदान करता है। वे पर्यावरणीय संसाधनों का उपयोग केवल अपनी तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करते हैं। वे संसाधनों का दुरुपयोग कभी नहीं करते, और इस प्रकार का उपयोग *"सतत् आजीविका"* कहलाता है (रेड्डी, 2000, पृ. 32) । आदिकाल से ही जनजातीय समुदायों ने अपने आवासीय क्षेत्रों से एक गहरा आत्मीय संबंध स्थापित कर लिया है। यह संबंध केवल भौतिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक महत्त्व भी रखता है। जो विभिन्न विकास एजेंसियाँ (सरकारी एवं गैर-सरकारी) इन आदिम जनजातीय समूहों के बीच कार्यरत हैं, उन्हें इन सांस्कृतिक आत्मीयताओं के प्रति संवेदनशील और जागरूक होना चाहिए।

जंगलों में निवास करने वाले जनजातीय लोगों के लिए वन एक पूर्ण और समग्र संसाधन आधार है, जो उन्हें पीने का पानी, भोजन (फल, कंद, पत्तेदार सब्जियाँ, औषधियाँ), वस्त्र (पटसन और रेशों के रूप में) तथा आश्रय जैसी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। राष्ट्रीय वन नीति में अनुसूचित जनजातियों के लिए जो सुरक्षात्मक उपाय किए गए हैं, वे उनकी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पर्याप्त नहीं हैं। उन्हें वनों से संसाधन एकत्र करने के अधिकार पूर्ण रूप से नहीं दिए गए हैं, जो जनजातीय हितों के अनुकूल नहीं है।

नृजातीय अध्ययन की आवश्यकता

किसी भी जनजातीय समूह की जीवन-पद्धति को जाने बिना, संबंधित समुदाय के लिए कोई भी विकासात्मक गतिविधि प्रभावी ढंग से संचालित नहीं की जा सकती। जो लोग जनजातीय विकास विभाग में कार्य करते हैं, उन्हें जनजातीय समुदायों का नृजातीय विवरण जानना आवश्यक है। किसी भी जनजातीय समाज का नृजातीय विवरण *प्रशिक्षित मानवशास्त्रियों द्वारा गहन क्षेत्रीय अध्ययन* के माध्यम से एकत्रित प्रायोगिक तथ्यों पर आधारित होता है। विशेषकर *आदिम जनजातीय समूहों* के लिए विकास योजनाएँ बनाते समय, उस जनजाति की *पारिस्थितिकी*, *आर्थिक स्थिति* और *सामाजिक-सांस्कृतिक घटकों* का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए।

आमतौर पर यह देखा गया है कि *विशेष विकास एजेंसी* की देखरेख के लिए एक *नव नियुक्त आईएएस अधिकारी* को *परियोजना अधिकारी* के रूप में नियुक्त कर दिया जाता है। ऐसी प्रत्येक एजेंसी कार्यालय में एक *विशेषज्ञ/नृजातीयविद्* को अधीनस्थ अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जाना चाहिए, जो मानवशास्त्र विषय का जानकार हो और जिसे जनजातीय या जातीय समूहों के बीच क्षेत्रीय अनुसंधान करने का व्यावहारिक अनुभव हो। इसके अतिरिक्त, किसी भी प्रकार के विकास कार्य के लिए *शोध-आधारित निष्कर्षों* की आवश्यकता होती है। *जनजातीय विकास* के

संदर्भ में *मानवशास्त्री* ऐसे शोधकर्ता माने गए हैं जो प्रशासक एवं योजनाकार दोनों की भूमिका सफलतापूर्वक निभा सकते हैं।

यह उल्लेख करना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि सर हर्बर्ट रिस्ले ने 1901 में भारत का नृजातीय सर्वेक्षण आरंभ किया था, और उनकी मानवशास्त्रीय शोध को भारत सरकार की *आधिकारिक मान्यता* प्राप्त हुई थी। भारत सरकार के निर्देशों के अनुसार, अधिकांश *प्रांतों* और *देशी रियासतों* ने नृजातीय अधीक्षक की नियुक्ति की, जिनमें अधिकांश *भारतीय सिविल सेवा* के सदस्य थे। मद्रास में यह सर्वेक्षण डॉ. एडगर थर्स्टन द्वारा संचालित किया गया और कोचीन राज्य में डॉ. अनंतकृष्ण अय्यर को *नृजातीय अधीक्षक* के रूप में नियुक्त किया गया, जिन्होंने विभिन्न समुदायों का गहन नृजातीय अध्ययन किया।

जनजातीय जीवन में प्रशिक्षण की आवश्यकता

प्रत्येक जनजाति के अपने विशिष्ट सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवहार प्रतिरूप होते हैं। *शैजा (2003)* ने इस बात पर बल दिया कि जनजातीय जीवन और संस्कृति में प्रशिक्षण किसी भी विकास गतिविधियों की सफलता के लिए अनिवार्य शर्त है। जनजातीय लोगों के बीच काम करने वाले अधिकारियों को, चाहे वे कितने भी ईमानदार क्यों न हों, जनजातीय लोगों के जीवन और संस्कृति के प्रति प्रशिक्षित और अभिमुख होना आवश्यक है। नृवंशविज्ञान सर्वेक्षण और समस्या-उन्मुख केस अध्ययनों के माध्यम से वास्तविक क्षेत्र स्थितियों में प्रशिक्षण प्रदान किया गया है। प्रशिक्षण का मूल उद्देश्य जनजातीय जीवन शैली और संस्कृति के ज्ञान की सीमाओं का विस्तार करना है, ताकि वे उन जनजातीय लोगों के प्रति प्रेम और सम्मान की सच्ची भावना विकसित कर सकें जिनके बीच उन्हें काम करना है। इसलिए, महान भाग्य जनजातीय क्षेत्रों में काम करने वाले प्रशासकों, विकास कार्यकर्ताओं और अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं के दृष्टिकोण और गतिविधियों पर निर्भर करता है।

मध्य भारत की आदिम जनजातियाँ

यह देखा गया कि सामान्य जनजातीय उप-योजना की पद्धति कुछ जनजातीय समुदायों के कुछ वर्गों के लिए उपयोगी नहीं हो रही है क्योंकि ये समुदाय अतीत में उनके सापेक्ष पिछड़ेपन, अलगाव और उपेक्षा का शिकार रहे हैं । इन समुदायों को विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ा और वे कृषि और तकनीकी विकास के विभिन्न स्तरों पर हैं। पाँचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-79) के दौरान, पाँच जनजातीय समूहों, अर्थात् बैगा, पहाड़ी कोरवा, भारिया, सहरिया और अबूझमाड़िया को आदिम जनजातियों के रूप में पहचाना गया था। इन समूहों के लिए कार्यक्रमों की योजना बनाने और उन्हें लागू करने के उद्देश्य से, प्रशासनिक इकाई का सामान्य एकीकृत जनजातीय विकास कार्यक्रम (आईटीडीपी) ढाँचा अपर्याप्त पाया गया। इसलिए इनमें से प्रत्येक समुदाय के लिए पाँच अलग-अलग एजेंसियां पंजीकृत की गईं। छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) के दौरान, कमार

की पहचान की गई और उन्हें आदिम समूहों की सूची में शामिल किया गया। सातवीं पंचवर्षीय योजना (1986-1990) के दौरान बिरहोर को मध्य प्रदेश की आदिम जनजातियों की सूची में शामिल किया गया। इन आदिम समूहों का विकास लगभग पूरी तरह से परिवार लाभार्थी कार्यक्रमों के माध्यम से परिकल्पित किया गया था। आदिम समूहों के संबंध में मध्य प्रदेश सरकार के सामने एक महत्वपूर्ण प्रशासनिक समस्या एजेंसी के प्रशासनिक नियंत्रण के लिए अपनाई जाने वाली प्रणाली और पद्धति से संबंधित है। ये एजेंसियां स्वायत्त निकायों के रूप में पंजीकृत हैं, लेकिन कार्यक्रमों की समग्र योजना और कार्यान्वयन के लिए, आईटीडीपी के साथ उनका समन्वय बहुत आवश्यक है; अन्यथा, एजेंसी क्षेत्र में बुनियादी सुविधाओं को विकसित करने वाले कार्यक्रम मुख्य रूप से आईटीडीपी के पास ही रहने चाहिए। वास्तव में, परिवार लाभ उन्मुख कार्यक्रमों को लागू करने के लिए बुनियादी ढांचे का विकास लगभग एक पूर्वापेक्षा है, जिसे साथ-साथ शुरू किया जाना चाहिए। 2001 में नए राज्य छत्तीसगढ़ के गठन के बाद, राज्य में पाँच आदिवासी समूहों को पीवीटीजी के रूप में अधिसूचित किया गया है, अर्थात, अबुझमारिया, कमार, बैगा, बिरहोर और पहाड़ी कोरवा।

भारत सरकार द्वारा जारी आदिम जनजातियों के लिए योजना तैयार करने के सामान्य दिशानिर्देशों में कहा गया है कि:

- ❖ प्रत्येक समूह के लिए एक विशिष्ट विकास योजना होनी चाहिए।
- ❖ विकास योजना में विशेष रूप से पारिस्थितिकी तंत्र को ध्यान में रखा जाना चाहिए।
- ❖ लोगों की प्राथमिक शिक्षा को समूहों के विशिष्ट चरित्र और प्राकृतिक क्षमताओं पर ज़ोर देते हुए कल्पनाशील ढंग से व्यवस्थित किया जाना चाहिए; उच्च आयु वर्ग के व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नागरिक शिक्षा कार्यक्रम की भी योजना बनाई जा सकती है।
- ❖ प्रथम चरण में, मूल कौशल के उन्नयन और पुनर्गठन तथा समूह की तात्कालिक आवश्यकताओं को पूरा करके विकास का प्रयास किया जाना चाहिए।
- ❖ उपयुक्त प्रशासनिक ढाँचा प्रस्तावित किया जाना चाहिए।

आदिम जनजातियों के निवास वाले क्षेत्र अधिकांशतः दुर्गम हैं। अनुभव बताता है कि सरकारी अधिकारियों की ओर से इन क्षेत्रों में तैनाती के प्रति काफी अनिच्छा है। सामाजिक कार्यों में लगे स्वयंसेवी संगठनों को अभी तक इन क्षेत्रों में काम करने के लिए प्रेरित नहीं किया गया है। आदिम जनजातियों के कार्यक्रमों के क्रियान्वयन हेतु निर्मित संगठनात्मक ढाँचा अभी भी अस्पष्ट है। यद्यपि युवागृह या छात्रावास, सामुदायिक शिकार, पारस्परिकता और विनिमय प्रणाली तथा जाति पंचायत जैसी पारंपरिक जनजातीय संस्थाएँ ऐसे समूहों के बीच मौजूद हैं, फिर भी उनका सहयोग और सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए शायद ही कोई प्रयास किया गया हो।

आदिम जनजातियों के संबंध में कार्य को एक क्रियात्मक कार्यक्रम की प्रकृति में अधिक प्रवृत्त होना होगा। तिवारी (1984) ने सुझाव दिया कि निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखते हुए विशेष विकास परियोजनाओं के बारे में विस्तृत जानकारी प्रस्तुत करना आवश्यक है:

- पारिस्थितिक संतुलन का ह्रास समुदाय की विकास दर को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। झूम खेती करने वाले लोगों का पुनर्स्थापन *पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने* के लिए आवश्यक है।

- इन समुदायों के नियोजित विकास के लिए जनजातीय मूल्यों और संभावनाओं का वास्तविक और सूचित मूल्यांकन आवश्यक है।

- यह आम धारणा कि सड़कों के निर्माण से किसी क्षेत्र के आर्थिक विकास में स्वतः ही लाभ होता है, ऐसे जनजातीय क्षेत्रों के मामले में भ्रामक पाई गई है। वास्तव में, आंतरिक क्षेत्रों को खोलने से आदिवासियों का शोषण हुआ है।

- आदिम जनजाति विकास कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने के लिए गठित एजेंसियाँ, (आई टी डी पी) या किसी अन्य संगठन के साथ कोई संबंध स्थापित करने में विफल रहीं।

- केवल 'जनजातीय शाखा' जैसी विशिष्ट एजेंसियाँ ही झूम खेती करने वालों (अबूझमाड़िया) और कारीगर समूह (कमार) की समस्या का समाधान कर सकती हैं।

पहाड़ी कोरवा - छत्तीसगढ़ का एक निजी जनजाति समूह

पहाड़ी कोरवा मध्य प्रदेश (अब छत्तीसगढ़) के सात सबसे कम ज्ञात, 'आदिम' आदिवासी समूहों में से एक है। सरकार द्वारा उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाने और उनके जीवन स्तर को ऊपर उठाने के लिए विभिन्न विकास कार्यक्रम लागू किए गए हैं। 1978 में जशपुरनगर में पहाड़ी कोरवा विकास एजेंसी की स्थापना के बाद से कृषि, सिंचाई, पशुपालन, हस्तशिल्प, स्वास्थ्य, शिक्षा और रेशम उत्पादन जैसे लघु उद्योग के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया है। बगीचा स्थित प्रखंड विकास कार्यालय के सहयोग से पहाड़ी कोरवा विकास एजेंसी उनके क्षेत्र में विभिन्न कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करती है। निरक्षरता, उत्पादन और उपभोग का निम्नतम स्तर, पड़ोसी समुदायों द्वारा शोषण, कुपोषण, सूजाक और उपदंश जैसी बीमारियों से पीड़ित होना, कम उपजाऊ और अपर्याप्त भूमि जोत, पेयजल की कमी, उच्च शिशु मृत्यु दर (प्रति 1000 जीवित जन्मों पर 162) उनकी प्रमुख समस्याएँ हैं। पहाड़ी कोरवाओं के लिए, विकास का मतलब दिन में दो बार भरपेट भोजन प्राप्त करना है, जिससे वे खुश रहें और अपने पारिस्थितिक क्षेत्र में जीवित रहने के लिए पर्याप्त साधन प्राप्त करें। न तो वे लाभ के बारे में सोचते हैं और न ही कल के भविष्य के बारे में।

आवास की समस्या

परंपरागत रूप से, पहाड़ी कोरवाओं के घर स्थायी और अच्छी तरह से निर्मित नहीं होते, बल्कि अस्थायी रूप से कमज़ोर ढाँचे होते हैं। लेकिन एक घर के साथ हमेशा एक बाड़ी-भूमि होनी चाहिए। वे जंगल के बीच पहाड़ियों पर एकांत में रहना पसंद करते हैं ताकि अन्य समुदाय उन्हें परेशान न करें। इन सभी घरों में स्थायी दरवाज़े और खिड़कियाँ नहीं होतीं। इसके अलावा, उन्हें अपने जानवरों को सुरक्षित रखने में भी समस्या होती है।

कार्यान्वित योजनाएँ

इस आवास समस्या के समाधान के लिए इंदिरा आवास योजना लागू की गई। यह शत-प्रतिशत केंद्र प्रायोजित योजना है। इस योजना के अंतर्गत पहाड़ी कोरवाओं के लिए सरकार द्वारा पक्के भवन निर्मित किए जाते हैं और चयनित लाभार्थियों को दिए जाते हैं। पंडरापाट पंचायत में पहाड़ी कोरवाओं के लिए ईंटों से बने 20 कमरों के भवन बनाए गए।

इंदिरा आवास योजना की विफलता

पहाड़ी कोरवाओं को आवंटित या दिए गए एक कमरे वाले भवन स्वीकार नहीं हैं। इसके कई कारण हैं।

- उनकी कृषि योग्य भूमि इंदिरा आवास योजना के तहत बने घर के पास स्थित नहीं है।
- वे ऐसे घनी आबादी वाले क्षेत्र में रहना पसंद नहीं करते क्योंकि कमरे अन्य सरकारी अधिकारियों के आवासों के आसपास बने हैं और प्राकृतिक, शांत क्षेत्र में स्थित नहीं हैं।
- उनकी बसावट बिखरी हुई है। एक झोपड़ी से दूसरी झोपड़ी के बीच दूरी बनाए रखना आवश्यक है। लेकिन इंदिरा आवास योजना के तहत दो अज्ञात परिवारों के लिए आवंटित कमरे एक-दूसरे के बगल में केवल एक दीवार से अलग स्थित हैं।
- उन्हें ऐसा सीमेंट का ठंडा फर्श पसंद नहीं है, जो गर्मी और आराम का एहसास न दे।

स्वास्थ्य योजना

यह देखा गया है कि कुछ बीमार पहाड़ी कोरवा लोग डॉक्टर से परामर्श करते हैं, जबकि अन्य समान लक्षण होने के बावजूद ऐसा नहीं कर पाते। डॉक्टर से परामर्श न करने का प्रमुख कारण यह है कि गरीब पहाड़ी कोरवा सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं में होने वाले चिकित्सा खर्च को वहन नहीं कर सकते। इसके अलावा, उन्हें डॉक्टर से मिलने के लिए 1-2 घंटे तक इंतजार करना पड़ता है, क्योंकि नजदीकी सिविल डिस्पेंसरी में केवल एक ही चिकित्सा अधिकारी उपलब्ध है। साथ ही, इस

सिविल डिस्पेंसरी में लंबी अवधि के उपचार के लिए बिस्तर की सुविधा नहीं होने के कारण मरीजों के लिए ठहरने की व्यवस्था भी उपलब्ध नहीं है। संचार सुविधाओं की कमी के कारण मरीज को परिवार के सदस्यों द्वारा पहाड़ी-जंगल क्षेत्र से 10-20 किलोमीटर की दूरी तय करनी पड़ती है। विशेषकर बरसात के मौसम में ऐसा होता है जब कच्ची सड़कों की स्थिति और भी खराब हो जाती है।

दो विभागों और अंतर-विभागों के बीच समन्वय और सहयोग की कमी इस स्वास्थ्य देखभाल योजना की असफलता का कारण बनती है। उदाहरण के लिए, सन्ना प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (पीएचसी) और मिनी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, पंड्रापाट के पास कोई वाहन नहीं है, आपातकालीन अवधि में वे ग्रामीणों को यह संचार सुविधा प्रदान करने में असमर्थ हैं। भले ही बगीचा सीएचसी में दो वाहन (एम्बुलेंस) हैं, वे शायद ही सन्ना पीएचसी और मिनी पीएचसी पंड्रापाट को उपलब्ध कराते हैं। दवाओं और मेडिकल किट की आपूर्ति बहुत खराब है। यह भी देखा जाता है कि मरीज को पीएचसी आने के बाद अपने इलाज के लिए भुगतान करना पड़ता है, खासकर जब मरीजों को इंजेक्शन की आवश्यकता होती है। डॉक्टर या स्वास्थ्य कार्यकर्ता अपने इंजेक्शन (जो मेडिकल स्टोर से खरीदे जाते हैं) रखते हैं और जरूरत के समय उनका उपयोग करते हैं।

स्वास्थ्य केंद्र द्वारा आपूर्ति की गई दवाइयाँ स्वास्थ्य कार्यकर्ता को वितरित होने के तुरंत बाद अपनी समाप्ति तिथि खो देती हैं। यह भी देखा गया है कि स्वास्थ्य कार्यकर्ता कई बार समाप्ति तिथि वाली दवाओं को लेकर अपनी लाचारी दिखाते हुए, अपने घर के लिए रख लेती हैं। उन्होंने बताया कि साल में एक बार उन्हें प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र से विशेष रूप से दवाइयाँ (गोलियाँ, कैप्सूल) दी जाती हैं। वितरण के 4-5 महीने बाद, समाप्ति तिथि समाप्त हो जाती है, लेकिन दवाइयाँ जल्दी उपयोग में नहीं आतीं। इसलिए, साल के बाकी महीनों में वह ग्रामीणों की स्वास्थ्य देखभाल के लिए अपनी खरीदी हुई दवाओं का उपयोग करती हैं। बहुउद्देशीय स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं (एमपीएचडब्ल्यू) का पूरे सप्ताह का एक संक्षिप्त कार्यक्रम होता है। आमतौर पर देखा गया है कि वे साइकिल या पैदल ही गाँवों का दौरा करते हैं। चूँकि इन आदिम जनजातीय समूहों के प्रत्येक गाँव पहुँच मार्गों से ठीक से जुड़े नहीं हैं, इसलिए बहुउद्देशीय स्वास्थ्य कार्यकर्ता (एमपीएचडब्ल्यू) को, खासकर बरसात के मौसम में, काफी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

इस क्षेत्र में महिला एमपीएचडब्ल्यू सबसे ज्यादा पीड़ित हैं। पहाड़ी क्षेत्र, दुर्गम सड़क इन महिला कार्यकर्ताओं के लिए अपरिहार्य परिस्थितियां पैदा करती हैं। इसके अलावा, इन महिला कार्यकर्ताओं को 6-7 गांवों का दौरा करना पड़ता है। सन्ना पीएचसी में साप्ताहिक बैठक में भाग लेने के लिए, स्वास्थ्य कार्यकर्ता को हर सोमवार को सन्ना जाना पड़ता है। स्वास्थ्य कार्यकर्ता उसी दिन अपनी दवाइयां और टीके एकत्र करते हैं। हालांकि पंडरापाट में एक मिनी पीएचसी है, लेकिन इस मिनी पीएचसी के प्रत्येक कार्यकर्ता को साप्ताहिक बैठक और दवाओं के संग्रह के लिए पीएचसी सन्ना जाना पड़ता है। असमान सड़क के कारण महिला कार्यकर्ता कभी-कभी अपनी साइकिल से

फिसल जाती हैं और टीके, स्लाइड आदि को खराब कर देती हैं। साइकिल में वे टीके की किट ले जाती हैं, क्योंकि उनके पास कोई विकल्प नहीं है।

चूँकि कोई दवा की दुकान नहीं है, पहाड़ी कोरवाओं को दवा लेने और बीमारियों से मुक्ति पाने के लिए स्वास्थ्य कर्मियों पर निर्भर रहना पड़ता है। सुरक्षित पेयजल सुविधाओं का अभाव, स्वच्छता की अवधारणा के बारे में अनभिज्ञता, अपने पशुशाला के आसपास रहना, खराब हवादार घर, अशिक्षा, कुपोषण पहाड़ी कोरवाओं के बीच निराशाजनक स्वास्थ्य स्थितियों के संभावित योगदान कारक हैं। आमतौर पर देखा गया है कि आदिवासी ओझाओं पर उनके पारंपरिक विश्वासों के कारण, वे अपनी बीमारी के इलाज के लिए हर्बल ओझा, प्रेतात्मवादी, ओझाओं से परामर्श करते हैं। लोकप्रिय लोक क्षेत्रों में उपचार की विफलता उन्हें आधुनिक स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं के उपयोग की ओर ले जाती है। कभी-कभी रोगी की स्वास्थ्य समस्या या बीमारी के बारे में धारणा आधुनिक स्वास्थ्य विशेषज्ञ के सामने स्पष्ट तस्वीर पेश नहीं कर पाती है। इसके परिणामस्वरूप रोगी के वास्तविक उपचार में अंतराल पाया जाता है।

पहाड़ी कोरवा आबादी पर किसी भी सार्वजनिक या निजी कार्रवाई के परिणाम

- वन नीति के नाम पर राज्य ने आदिवासियों की ज़मीनें अधिग्रहित कर उन्हें उनके प्राकृतिक आवासों से बेदखल कर दिया है।

- सदियों पुरानी झूम खेती (बेओंरा या दही), ईंधन की लकड़ी/वनोपज संग्रहण और शिकार पर प्रतिबंध ने उन्हें सीमित साधनों के साथ कृषि करने के लिए मजबूर किया।

- भूमि की निम्न गुणवत्ता, मवेशियों और बीजों की कमी और अज्ञानता

- पर्याप्त दवा/एक्सपायरी दवाओं की आपूर्ति का अभाव आधुनिक चिकित्सा के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण को जन्म दे रहा है।

- प्रशासनिक कर्मचारियों/सार्वजनिक वितरण प्रणाली की लापरवाही भी चिंता का एक अन्य कारण है।

- किसी भी प्रकार के ऋण का भुगतान न करने के बावजूद, लाभार्थियों को अन्य ऋण वितरित किए जाते हैं। तो कोरवाओं की आदत थी कि वे कभी कर्ज़ नहीं चुकाते थे। उन्हें हमेशा भरोसा रहता था कि सरकार उन्हें शत-प्रतिशत सब्सिडी वगैरह के साथ कर्ज़ देगी।

केरल की आदिम जनजातियाँ

केरल राज्य में पाँच आदिवासी समुदायों को विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह (पीवीटीजी) के रूप में पहचाना जाता है। ये हैं कासरगोड जिले के कोरागा, मलप्पुरम जिले के नीलांबुर घाटी के

चोलनायकन, अट्टापडी जिले के कुरुम्बा, वायनाड, मलप्पुरम और कोझीकोड जिलों के कट्टुनायकन एवं पलक्कड़ तथा त्रिशूर जिले के कादर। ये पीवीटीजी राज्य की कुल अनुसूचित जनजाति आबादी का केवल 5.3 प्रतिशत हैं और 1996-97 में उनकी कुल अनुमानित जनसंख्या 16678 थी (सर्वेक्षण रिपोर्ट-2000)। यह सर्वेक्षण केरल अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अनुसंधान, प्रशिक्षण और विकास अध्ययन संस्थान (KIRTADS), कोझीकोड द्वारा किया जाता है।

अब तक प्रत्येक विशिष्ट आदिम जनजातीय समूह (पीवीटीजी) के लिए अलग-अलग विशेष विकास योजनाएँ और उनके व्यय विवरण उपलब्ध नहीं हैं, क्योंकि विशेष रूप से पाँच आदिम जनजातीय समूहों कदार, कत्तुनायक्कन, चोलनायक्कन, कोरगा और कुरुंबा के लिए एक विशेष पीवीटीजी प्रकोष्ठ की स्थापना मार्च 2012 में की गई थी। यह प्रकोष्ठ केरल के आदिम जनजातीय समूहों पर केरल अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अनुसंधान, प्रशिक्षण और विकास अध्ययन संस्थान, कोझिकोड द्वारा 2007–08 में किए गए बेसलाइन सर्वेक्षण और सिफारिशों के आधार पर गठित किया गया। तेरहवें वित्त आयोग ने आदिम जनजातीय समूहों के विकास के लिए पाँच वर्षों की अवधि में ₹148.00 करोड़ की धनराशि प्रदान की थी, ताकि स्वास्थ्य, मृदा संरक्षण, प्राथमिक शिक्षा, पेयजल और पोषण जैसे क्षेत्रों में अतिरिक्त हस्तक्षेप किया जा सके। इस योजना का कार्यान्वयन अनुसूचित जनजाति विकास विभाग, तिरुवनंतपुरम, केरल द्वारा किया गया।

केवल 2011 से 2015 तक की भविष्य की योजना राशि उपलब्ध थी । वर्ष 2012 तक इन जनजातीय समूहों के लिए जो भी विकास कार्य हुए, वे जनजातीय विकास कार्यालय के जनजातीय विकास अधिकारी (TDO) द्वारा समन्वित किए जाते थे।

चोलनायकन - केरल का एक निजी समूह

चोलनायकन जनजाति केरल के मलप्पुरम जिले की नीलाम्बुर घाटी के करुलाई और वज़िकादावु पर्वतमाला में निवास करते हैं। चोलनायकन की कुल अनुमानित जनसंख्या 281 है। वे अर्ध-खानाबदोश या अर्ध-घुमंतू जनजाति हैं। वे आमतौर पर नदियों के किनारे स्थित चट्टानी गुफाओं में रहते हैं। वे सामान्यतः नदियों के किनारे स्थित चट्टानी गुफाओं में निवास करते हैं। ये लोग वनों के विभिन्न क्षेत्रों में 2 से 7 एकल परिवारों के समूहों में क्षेत्रीय इकाइयों के रूप में वितरित हैं। चोलनायकन समुदाय की ये क्षेत्रीय इकाइयाँ बैंडस (Bands) कहलाती है । प्रत्येक समूह एक निर्धारित क्षेत्र में निवास करते है और उसी क्षेत्र में संचरण करता है जिसे त्सेनमम (tsenmam) कहा जाता है । त्सेनमम चोलनायकन समुदाय की क्षेत्रीय विभाजन की इकाई है । प्रत्येक त्सेनमम की सीमाएं पहाड़ों, नदियों, वृक्षों आदि जैसे प्राकृतिक अवरोधों द्वारा स्पष्ट रूप से चिन्हित होती है । प्रत्येक जेन्मन / चेम्मन /त्सेनमम का एक प्रमुख होता है जिसे त्सेनमक्करन कहा जाता है। प्रत्येक त्सेनमम को कई नाडु में विभाजित किया जाता है जिनके अलग-अलग नाम होते हैं ।

मंचेरी पुनर्वास गांव है जहां आईटीडीपी कार्यालय/विभाग ने वर्ष 2008-2009 में चोलानाइकन समुदाय के 18 परिवारों के लिए पक्के मकान बनाए थे। वर्तमान में 5 परिवार 5 घरों में रह रहे हैं, अन्य इमारतों को अछूता छोड़ दिया गया है। यहां यह बताना महत्वपूर्ण है कि चूंकि यह गांव रिजर्व फॉरेस्ट क्षेत्र के अंदर स्थित है और करीब 21 किलोमीटर दूर करुलाई नामक एक छोटे कस्बे से अलग-थलग है। इस क्षेत्र में जंगली हाथियों का खतरा आम बात है। इससे बचने के लिए सभी पाँच परिवारों ने मकानों की छत के ऊपर एक अस्थायी आश्रय बनाया है, जहाँ चढ़ने के लिए बाँस की बनी सीढ़ी का उपयोग किया जाता है। हालाँकि गाँव में एक खुला कुआँ है, परंतु उसका पानी सूख चुका है। अब ये परिवार एक झरने पर निर्भर हैं, जहाँ से प्लास्टिक पाइप के माध्यम से पानी को प्रत्येक घर तक पहुँचाया गया है।

नवनिर्मित घरों में बसे पाँच परिवार, मैलाडीपट्टी नामक बस्ती के निवासी हैं, जो मंचेरी पुनर्वासित कॉलोनी से 500 गज की दूरी पर स्थित है। अन्य लाभार्थी नवनिर्मित घरों को स्वीकार नहीं करते। इसका मुख्य कारण उनकी क्षेत्रीय सीमा प्रणाली है। प्रत्येक त्सेनमम (क्षेत्रीय इकाई) की सीमाएँ प्राकृतिक अवरोधों जैसे पहाड़ियों, नदियों, पेड़ों आदि द्वारा चिह्नित की जाती है। प्रत्येक त्सेनमम (क्षेत्र) में रहने वाले सदस्य उस क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों का सामूहिक रूप से उपयोग करते हैं। अतः वे किसी अन्य क्षेत्र में जाकर निवास करना *अपनी परंपरा, स्वायत्तता और अधिकारों के विरुद्ध* मानते हैं।

समाधान

योजना संबंधित समुदाय की विश्वदृष्टि और मानवीय एवं भौतिक संसाधनों को ध्यान में रखकर बनाई जानी चाहिए। सरकार औषधीय पौधों के संरक्षण, जल संचयन तंत्र, पारंपरिक वास्तुकला, पवित्र घाटों के रूप में वनों के संरक्षण, विभिन्न समुदायों में प्रचलित अन्य पारंपरिक ज्ञान में उनकी क्षमताओं को उजागर करके समुदाय के लोगों को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। चयनित लोगों के बीच सामाजिक-आर्थिक जाँच/स्थिति को जाने बिना विकास गतिविधियाँ शुरू नहीं की जा सकतीं। क्रिया-उन्मुख अनुसंधान केवल आदिम समूहों की समस्याओं के समाधान और सरकार का ध्यान आकर्षित करने के लिए ही उपयोगी है। आर्थिक विकास के लिए उनके पारंपरिक कौशल - बाँस का काम, मछली पकड़ने के जाल बुनना, मिट्टी के खपरा बनाना आदि - को बढ़ावा देने पर ध्यान दिया जाना चाहिए। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम (भाषा के माध्यम से विकास योजनाओं के बारे में जागरूकता से संबंधित) विभिन्न विकास योजनाओं की सफलता में काफी हद तक सहायक हो सकते हैं। सामाजिक मानचित्रण और केंद्रित समूह चर्चा किसी भी विकास योजना के सर्वोत्तम मॉड्यूल को विकसित करने के सर्वोत्तम साधन हैं। अंत में, अनुवर्ती कार्रवाई/निगरानी और मूल्यांकन को किसी भी विकासात्मक गतिविधि के लिए सर्वोत्तम उपाय माना जाना चाहिए।

निष्कर्ष

आदिवासी समुदायों के लिए विकास का अर्थ है दिन में दो बार भरपेट भोजन प्राप्त करना एवं अपने पारिस्थितिक परिवेश में संतुलित जीवन निर्वाह करना। वे लाभ-हानि की मानसिकता से दूर रहते हैं तथा भविष्य की चिंता कम करते हैं। अज्ञानता, जागरूकता की कमी, सरलता और नशे की प्रवृत्तियों के कारण वे स्वयं को वंचित एवं हीन स्थिति में बनाए रखते हैं। इसलिए विकास सहायता योजनाएँ आदिवासी समुदायों की वास्तविक आवश्यकताओं और सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित होनी चाहिए। विशेष रूप से पहाड़ी कोरवा और चोलनायकन जैसी कमजोर जनजातियों के लिए योजनाएँ इस प्रकार बनाई जाएँ कि उनकी पारंपरिक अर्थव्यवस्था समाप्त न हो। पूर्व की योजनाएँ गलत योजना निर्माण, नौकरशाही की उदासीनता तथा सांस्कृतिक उपेक्षा के कारण असफल रहीं। अतः आवश्यक है कि विकास रणनीति प्राकृतिक पारितंत्र की पुनःस्थापना, पारंपरिक कौशलों के संवर्धन एवं आवश्यक कच्चे माल व मध्यम तकनीक की उपलब्धता पर केंद्रित हो ताकि आजीविका टिकाऊ बन सके।

संदर्भ

- कक्कोथ, एस. (2005). केरल की आदिम जनजातीय समूह: एक परिस्थितिजन्य मूल्यांकन, "स्टडीज़ ऑफ ट्राइब्स एंड ट्राइबल्स", 3(1), 47–55
- मजूमदार, डी. एन. (1944). "द फॉर्चून्स ऑफ प्रिमिटिव ट्राइब", लखनऊ: यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन लिमिटेड।
- रैजादा, अजीत.(1983). "मध्यप्रदेश में जनजातीय विकास" इंटर-इंडिया पब्लिकेशन नई दिल्ली।
- राव, पी. वी. (1986). "जनजातीय विकास हेतु संस्थागत ढांचा", नई दिल्ली: इंटर-इंडिया पब्लिकेशन।
- रेड्डी, प्रकाश जी. (2000). आदिम जनजातीय समूह: अस्तित्व, संरक्षण और विकास "योजना", 31–34।
- राइज़ली, एच. एच. (1891). "बंगाल की जनजातियाँ और जातियाँ: नृवंशविज्ञान शब्दावली" (पृ. 511–519), कलकत्ता।
- रिज़वी, बी. आर. (1989). "छत्तीसगढ़ के पहाड़ी कोरवा" ज्ञान पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।

- अनुसूचित जनजाति विकास निदेशालय. (2000).आदिम जनजातियों का सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण (1996–97) की रिपोर्ट, तिरुवनंतपुरम।

- भारत सरकार, गृह मंत्रालय. (1977). छठी योजना में जनजातीय विकास हेतु एक दृष्टिकोण: प्रारंभिक परिप्रेक्ष्य, नई दिल्ली।

- संधवार, ए. एन. (1990). कोरवा जनजाति – उनका समाज और अर्थव्यवस्था, अमर प्रकाशन दिल्ली।

- शैज़ा, डब्ल्यू. (2003). जनजातीय जीवन और संस्कृति में प्रशिक्षण की आवश्यकता और उद्देश्य। एल. पी. विद्यार्थी (सम्पा.), एप्लाइड एंथ्रोपोलॉजी।

- विद्यार्थी, एल. पी. (2003). एप्लाइड एंथ्रोपोलॉजी इन इंडिया, किताब महल नई दिल्ली।

4

आत्मनिर्भर ग्राम पंचायत: वित्तीय स्वायत्तता से सतत् विकास तक

डॉ. बलकार सिंह पूनियां

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.48-63
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

ग्राम पंचायतें भारत की त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था की नींव हैं, जो ग्रामीण विकास और स्थानीय शासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वित्तीय स्वायत्तता किसी भी संस्थान की स्वतंत्र और प्रभावी कार्यप्रणाली के लिए आवश्यक होती है। ग्राम पंचायतों की वित्तीय स्वायत्तता का तात्पर्य है कि उन्हें अपने कार्यों के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधनों की योजना बनाने, उन्हें एकत्र करने और व्यय करने की स्वतंत्रता हो। इस शोध में ग्राम पंचायतों की वर्तमान वित्तीय स्थिति, आय के स्रोत, व्यय की संरचना, राज्य और केंद्र सरकार से मिलने वाली निधियों की भूमिका तथा वित्तीय स्वतंत्रता में आ रही बाधाओं का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि संविधान के 73वें संशोधन द्वारा ग्राम पंचायतों को अधिक अधिकार दिए गए हैं, फिर भी वे पूर्ण वित्तीय स्वायत्तता से वंचित हैं। निधियों की निर्भरता, सीमित कराधान शक्ति, तकनीकी ज्ञान की कमी तथा पारदर्शिता की चुनौतियाँ पंचायतों की वित्तीय कार्यक्षमता को प्रभावित करती हैं।अतः, ग्राम पंचायतों की वित्तीय स्वायत्तता को सुदृढ़ करने हेतु स्थायी राजस्व स्रोतों का विकास, क्षमता निर्माण, पारदर्शी वित्तीय प्रणाली और बेहतर निगरानी तंत्र की आवश्यकता है। यह न केवल लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को सशक्त करेगा, बल्कि ग्रामीण भारत के समग्र विकास में भी सहायक सिद्ध होगा।

मुख्य शब्द: पंचायत, संशोधन, संवैधानिक, ग्राम स्वराज, स्वायत्तता, वित्त आयोग

प्रस्तावना

स्थानीय शासन और जवाबदेही बढ़ाने के लिए ग्राम पंचायतों की वित्तीय स्वायत्तता महत्वपूर्ण है। अपने पूर्ण विकास के लिए ग्राम पंचायतो को वित्तीय स्वायत्तता में आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता है | ग्राम पंचायते केन्द्रीय एवं राज्य के अनुदान पर मुख्य रूप से निर्भर रहती है | ग्राम पंचायतो की वित्तीय स्वयत्तता के संबंध में किये गए अध्ययन (वर्मा और मीना, 2024) ने पाया कि ग्राम पंचायतों के लिए वित्तीय स्वायत्तता महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उन्हें आवश्यक धन के साथ सशक्त बनाती है, बल्कि सरकारी योजनाओं के प्रभावी कार्यान्वयन को सक्षम करती है और स्थानीय मुद्दों को हल करती है। इस स्वायत्तता से गांवों में स्पष्ट समृद्धि आती है, जिससे समग्र ग्रामीण शासन और विकास में वृद्धि होती है।

ग्राम पंचायतों की परिभाषा

ग्राम पंचायत भारत की त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली की सबसे निचली और मूल इकाई है, जो ग्राम स्तर पर स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था प्रदान करती है। यह संस्था संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम, 1992 के तहत स्थापित की गई है, जिसने पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया। ग्राम पंचायतों का गठन सीधे ग्राम सभा द्वारा चुने गए सदस्यों से होता है, जिसमें एक प्रधान (सरपंच) होता है जो पंचायत का निर्वाचित प्रमुख होता है।

ग्राम पंचायत का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को शासन की प्रक्रियाओं में भागीदारी का अवसर देना और स्थानीय समस्याओं का समाधान स्थानीय स्तर पर करना है। इसकी जिम्मेदारियों में स्वच्छता, पीने के पानी की आपूर्ति, सड़क निर्माण, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएँ, कृषि विकास तथा अन्य सामुदायिक सेवाएँ शामिल हैं।

वित्तीय दृष्टि से, ग्राम पंचायतें सीमित संसाधनों के साथ कार्य करती हैं, जिनमें राज्य और केंद्र सरकारों से प्राप्त अनुदान, कर संग्रह (जैसे कि घर कर, पेशा कर), तथा अन्य स्थानीय स्रोतों से प्राप्त आय शामिल होती है। यह संस्था लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत करती है और 'ग्राम स्वराज्य' की अवधारणा को साकार करती है।

वित्तीय स्वायत्तता का महत्व

शुक्ला एवं पंकज, 2023 ने ग्राम पंचायतों की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए वित्तीय स्वायत्तता को महत्वपूर्ण कहा है, क्योंकि यह उन्हें स्वतंत्र रूप से संसाधनों का प्रबंधन करने, कल्याणकारी योजनाओं को कुशलतापूर्वक लागू करने और स्थानीय जरूरतों को पूरा करने, अंततः समग्र विकास को बढ़ावा देने और ग्रामीण क्षेत्रों में शासन में सुधार करने में सक्षम बनाता है। पंचायते ग्रामीण विकास की आधारशिला है देश में ग्रामीण विकास तभी संभव है जब पंचायतों को वित्तीय स्वायत्तता दी जाएगी और उन्हे अपनी आवश्यकता अनुरूप योजनाएं बनाने का अधिकार दिया

जाएगा एवं ग्राम पंचायतों की वित्तीय आवश्यकताओं को पर्याप्त मोनिट्रिंग के द्वारा पुरा किया जाएगा | ग्राम पंचायतो को वित्तीय संसाधन उतने ही आवश्यक है जितनी की मानव को जीने के लिए ऑक्सिज (गौड़ा एवं शशिकुमार, 2024)| ग्राम पंचायतों की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए वित्तीय स्वायत्तता महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उन्हें स्वतंत्र रूप से संसाधनों का आवंटन करने, विकास परियोजनाओं को लागू करने और स्थानीय जरूरतों को पूरा करने में सक्षम बनाता है, जिससे समुदाय के भीतर जवाबदेही, पारदर्शिता और स्थायी ग्रामीण विकास को बढ़ावा मिलता है।

वित्तीय संसाधनों ही ग्राम पंचायतो के कार्य एवं योजना का आधार होते है | भारतीय संविधान के भाग 9 के अनुछेद 243छ पंचायतो की शक्तियां और उत्तरदायित्वो को देने के साथ इन्हें आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की योजना बनाने व उनको लागु करने की शक्ति प्रदान करती है।

73वें संविधान संशोधन के द्वारा पंचायतो को वित्तीय अधिकार दिए गए जैसे की अनुच्छेद 243 के अनुसार राज्य विधान मंडल विधि द्वारा निर्धारित प्रक्रिया व सीमाओं के भीतर पथ कर और शुल्क लगाने का अधिकार दे सकती है | कुछ विशेष सीमाओं और नियमो के अंदर राज्य सरकार ग्राम पंचायतो को शुल्क, चुंगी व महसूल उगाही का अधिकार भी दे सकती है | इसी क्रम में पंचायतो की आर्थिक स्थति मजबूत करने के लिए राज्य वित्त आयोग भी गठित किया गया है जो की विभिन्न केन्द्रीय पोषित योजनाओं के अतिरिक्त केन्द्रीय वित्त आयोग द्वारा भी पंचायतो को वित्तीय संसाधन हस्तांतरित करता है | वित्तीय स्वायत्तता के महत्त्व के उपर किये गए अध्ययन में द्विवेदी, 2024 ने पाया कि ग्राम पंचायतों के लिए वित्तीय स्वायत्तता महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उन्हें राजस्व संग्रह बढ़ाने, सेवा वितरण में सुधार करने और स्थानीय जरूरतों को प्रभावी ढंग से पूरा करने में सक्षम बनाती है। यह स्वायत्तता आर्थिक विकास को बढ़ावा देती है और अंतर-सरकारी हस्तांतरण पर निर्भरता को कम करती है, जिससे समग्र ग्रामीण शासन में वृद्धि होती है।

ऐतिहासिक संदर्भ

भारत में ग्राम पंचायतों का विकास

भारत में गांवों का अस्तित्व प्राचीन काल से रहा है | मौर्यकाल में कौटिल्य द्वारा लिखित 'अर्थशास्त्र' तत्कालीन समय की राजनीति पर लिखा गया पहला प्रामाणिक ग्रंथ है जिसके अध्ययन से पता चलता है की तत्कालीन समय में स्थानीय प्रशासन पर अत्यधिक ध्यान दिया जाता था | सम्राट चन्द्रगुप्त ने शासन में विकेन्द्रीकरण की नीति अपनाकर अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया | गुप्त काल तक स्थानीय प्रशासन मौर्य काल जैसा ही चलता रहा परंतु मध्यकाल तक आते आते पंचायतों का अस्तित्व खत्म हो गया ओर उन पर सामंतों की सत्ता स्थापित हो गई | औपनिवेशिक काल में विदेशी ताकतों ने भारत में पंचायती राज को लगभग खत्म कर दिया | पंचायतों की शक्तियां एवं अधिकार छिन लिए गए |

गांधीजी की ग्राम स्वराज की अवधारणा एक आदर्श ग्राम पंचायत की परिकल्पना प्रस्तुत करती है वास्तव में महात्मा जी स्थानीय शासन को एक आत्मनिर्भर इकाई बनाना चाहते थे | आजादी के बाद समय समय पर पंचायती राज के लिए प्रयास हुए जिसमे भारत के संविधान में पंचायतों को राज्य सूची का विषय बनाया गया इसके साथ ही संविधान के भाग 4 में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत अनुच्छेद 40 जोड़ा गया जिसमे राज्य द्वारा ग्राम पंचायतों को संगठित करने के लिए कदम को उठाने का कहा गया था |

आजादी के बाद पंचायती राज को सुदृढ़ करने का पहला प्रयास 1956 में बलवंतराय मेहता समिति के गठन के साथ हुआ। समिति ने अपनी रिपोर्ट 24 नवंबर, 1957 को सरकार के समक्ष प्रस्तुत की और सिफारिश की कि देश में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था लागू की जाए, जिसमें जिला स्तर पर जिला पंचायत, खंड स्तर पर मंडल पंचायत और ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत शामिल हों। समिति ने यह भी कहा कि ग्रामीण विकास योजनाओं में आम लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए प्रशासनिक सत्ता का लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण किया जाना चाहिए और पंचायतों को अधिकार तथा वित्तीय सुदृढ़ीकरण प्रदान किया जाना चाहिए। बलवंतराय मेहता समिति की सिफारिशों के आधार पर पंचायती राज व्यवस्था अपनाने वाला देश का पहला राज्य राजस्थान का नागौर जिला था, जहां 2 अक्टूबर, 1959 को यह व्यवस्था लागू की गई।

इसके बाद 12 दिसंबर, 1977 को अशोक मेहता समिति का गठन किया गया। समिति ने अगस्त, 1978 में अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की और सिफारिश की कि देश में द्विस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था लागू की जाए, जिसमें जिला स्तर पर जिला परिषद और ब्लॉक स्तर पर मंडल पंचायत शामिल हों। समिति ने यह भी स्पष्ट किया कि ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत गठित करना आवश्यक नहीं है।

अशोक मेहता समिति के बाद योजना आयोग ने 25 मार्च, 1985 को ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन से संबंधित प्रशासनिक व्यवस्थाओं की समीक्षा के लिए जी.के.वी. राव समिति का गठन किया। इस समिति ने दिसंबर, 1985 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और पंचायतों की आर्थिक स्थिति, चुनाव और कार्यकाल पर प्रकाश डालते हुए कहा कि राज्य सरकारें लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया के प्रति उदासीन रही हैं।

राव समिति की रिपोर्ट के उपरांत एल. एम. सिंघवी की अध्यक्षता में पंचायती राज संबंधी प्रपत्र तैयार करने के लिए समिति गठित की गई। इस समिति ने 27 नवंबर, 1986 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और सिफारिश की कि पंचायतों को सशक्त बनाने के लिए आवश्यक सुधार किए जाएँ। इसके बाद 1988 में पी. के. थुंगन की अध्यक्षता में संसदीय सलाहकार समिति की एक उपसमिति ने पंचायतों को संवैधानिक दर्जा देने की सिफारिश की थी।

इन सभी समितियों की सिफारिशों के बावजूद पंचायती राज में कई कमियाँ थीं। इनमें नियमित चुनाव न होना, कमजोर वर्गों विशेषकर अनुसूचित जाति-जनजाति का उचित प्रतिनिधित्व न होना, महिलाओं की भागीदारी का अभाव, पंचायतों के पास पर्याप्त शक्ति और अधिकार का न होना तथा वित्तीय समस्याएँ शामिल थीं। इन कमियों को दूर करने के लिए 16 सितंबर, 1991 को संविधान (73वां संशोधन) विधेयक पेश किया गया। इसे 22 दिसंबर, 1992 को संसद द्वारा पारित किया गया और 24 अप्रैल, 1993 को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होने के बाद संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 के रूप में अंतिम रूप दिया गया। अधिनियम में यह प्रावधान था कि इसके लागू होने के एक वर्ष के भीतर सभी राज्यों को अपने पंचायती राज अधिनियमों में आवश्यक संशोधन करना होगा। इस प्रकार, 24 अप्रैल, 1993 से पहले सभी राज्यों ने अपने पंचायती राज अधिनियम संशोधित कर लिए।

वित्तीय स्वायत्तता का समर्थन करने वाला विधायी ढांचा

वित्तीय स्वायत्तता का समर्थन करने वाला विधायी ढांचा स्थानीय सरकारों और संस्थानों के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उनके अधिकारों, जिम्मेदारियों और वित्तीय क्षमताओं को परिभाषित करता है। यह ढांचा सभी देशों में भिन्न भिन्न होता है, जो संवैधानिक प्रावधानों और विधायी प्रथाओं से प्रभावित होता है।

भारत में ग्राम पंचायतों की वित्तीय स्वायत्तता का समर्थन करने वाला विधायी ढांचा मुख्य रूप से 1992 के 73 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम में निहित है, जिसने स्थानीय स्व-सरकारों को वित्तीय स्वायत्तता सहित शक्तियों और जिम्मेदारियों को हस्तांतरित करके पंचायती राज संस्थानों को महत्वपूर्ण रूप से सशक्त बनाया है। इस ढांचे का उद्देश्य ग्राम पंचायतों को अपने वित्तीय संसाधनों का स्वतंत्र रूप से प्रबंधन करने में सक्षम बनाकर स्थानीय शासन को बढ़ाना है, जिससे स्थानीय विकास और जवाबदेही को बढ़ावा मिलता है। विधायी प्रावधानों और उनके प्रभावों को विभिन्न अध्ययनों और विश्लेषणों के माध्यम से और विस्तृत किया गया है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 243-I में राज्य और पंचायतों के बीच कर बंटवारे की सिफारिश करने के लिए राज्य वित्त आयोगों की स्थापना का प्रावधान है। प्रारंभिक राज्य वित्त आयोग का गठन संविधान (73वाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 के लागू होने के एक वर्ष के भीतर किया जाना था। इसके बाद, हर पाँच साल में नए राज्य वित्त आयोग का गठन किया जाना था। हालाँकि छठे राज्य वित्त आयोग का गठन 2019-20 में सभी राज्यों के लिए निर्धारित था, लेकिन इसका गठन सभी राज्यों में एक समान और समय पर नहीं हुआ है। पंद्रहवें केन्द्रीय वित्त आयोग रिपोर्ट के अनुसार, केवल 4 राज्यों, अर्थात् असम, बिहार, पंजाब और राजस्थान ने अपना छठा राज्य वित्त आयोग स्थापित किया था, और अन्य 11 राज्यों ने तब तक अपना पाँचवाँ राज्य वित्त आयोग गठित किया था। पंचायती राज मंत्रालय के अनुसार, केवल 9 राज्यों ने 2022 तक अपना छठा

राज्य वित्त आयोग गठित किया है । स्थानीय निकायों के लिए राज्य वित्त आयोग अनुदानों के महत्व को ध्यान में रखते हुए, पंद्रहवें राज्य वित्त आयोग ने सिफारिश की है कि स्थानीय निकायों को 2024-25 और 2025-26 के लिए अनुदान वितरित करने हेतु राज्य वित्त आयोग से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों का अनुपालन एक आवश्यक शर्त होगी ।

तालिका 4.1: केंद्रीय वित्त आयोग द्वारा आरएलबी को अनुदान

केंद्रीय वित्त आयोग	**अनुदान की मात्रा (₹ करोड़ में)**	**संवितरण का प्रकार**	**अनुदान से जुड़ी शर्तें (यदि कोई हों)**	**संवितरण में अंतर (प्रतिशत में)**
X (1995-2000)	4, 381	पूर्ण	अनुदान का उपयोग वेतन और मजदूरी देने के लिए नहीं किया जाएगा	18.4
XI (2000-05)	8, 000	पूर्ण	1. खातों का रखरखाव पहली प्राथमिकता होगी। 2. नागरिक सेवाओं का प्रावधान	17.5
XII (2005-10)	20, 000	पूर्ण	जल आपूर्ति और स्वच्छता को प्राथमिकता	5.4
XIII (2010-15)	64, 408	विभाज्य पूल का आनुपातिक	खातों और लेखा परीक्षा प्रणालियों को बनाए रखने के लिए प्रदर्शन अनुदान	9.3
XIV (2015-20)	2, 00, 292	पूर्ण	बजट डेटाबेस और स्वयं के राजस्व में सुधार से जुड़े प्रदर्शन अनुदान	10.4
XV (2021-26)	2, 36, 805	पूर्ण	1. अनुदान प्राप्त करने के लिए लेखा परीक्षित खातों की ऑनलाइन उपलब्धता एक पूर्व शर्त है 2. 60 प्रतिशत अनुदान जल और स्वच्छता पर खर्च किए जाएंगे।	-

टिप्पणियाँ:

1 आनुपातिक अनुदान को करों के विभाज्य पूल के प्रतिशत (राज्यों के हिस्से से अधिक) के रूप में व्यक्त किया जाता है; जबकि पूर्ण अनुदान को निश्चित राशि के रूप में व्यक्त किया जाता है। सीएफसी-XIII के लिए वास्तविक विभाज्य पूल के आधार पर आवंटन की सिफारिश की गई थी।

2 संवितरण में अंतर की गणना XV सीएफसी रिपोर्ट से अनुशंसित अनुदानों के प्रतिशत के रूप में जारी किए गए अनुदानों के आंकड़ों का उपयोग करके की जाती है।

स्रोत: केंद्रीय वित्त आयोग की रिपोर्टें।

इस तालिका में पंचायतो को मिलने वाले अनुदान वृद्धि को देखा जा सकता है दसवें वित्त आयोग (1995-2000) में जहाँ पंचायतो को 4, 381 करोड़ का अनुदान मिला वहीँ ग्यारहवें वित्त आयोग (2000-2005) में 8000 करोड़ का अनुदान प्राप्त हुआ वहीँ बारहवें वित्त आयोग (2005-2010) में यह राशी बढ़कर दुगुनी से अधिक लगभग 20, 000 करोड़ रूपए, तेरहवें वित्त आयोग (2010-2015) में 64, 408 करोड़, चौदहवें वित्त आयोग (2015-2020) में 2, 00, 292 करोड़ रुपये हो गई और निरंतर वित्त आयोग की सिफारिश पर पंचायतो के लिए अनुदान बढाया गया | इस प्रकार हम देखतें है की पंचायतो को मिलने वाला अनुदान प्रत्येक वित्त आयोग ने बढाया और यह सीधे रूप से इंगित करता है कि पंचायते अनुदान के लिए केन्द्रीय अनुदान पर निर्भर हैं |

पंद्रहवें केंद्रीय वित्त आयोग (2021-26) ने अपने अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले पाँच वर्षों की अवधि के लिए ग्रामीण स्थानीय निकायों के लिए 2.4 लाख करोड़ रुपये की एक निश्चित राशि की सिफारिश की। ये अनुदान 73वें संशोधन अधिनियम के दायरे से बाहर के क्षेत्रों के लिए भी थे। इनमें से 60 प्रतिशत अनुदान विशेष रूप से जल और स्वच्छता से संबंधित क्षेत्रों के लिए थे। आयोग ने किसी भी अनुदान का लाभ उठाने के लिए लेखापरीक्षित खातों की ऑनलाइन उपलब्धता को एक पूर्वापेक्षा के रूप में निर्दिष्ट किया। स्थानीय निकायों को धनराशि का समय पर हस्तांतरण सुनिश्चित करने के लिए, आयोग ने राज्य सरकारों द्वारा केंद्र सरकार से ऐसे अनुदान प्राप्त होने के दस कार्य दिवसों के भीतर स्थानीय निकाय अनुदान जारी करना अनिवार्य कर दिया, जिसमें उक्त अवधि से अधिक किसी भी देरी के लिए एक विशिष्ट ब्याज दर का भुगतान किया जाना था।

वित्तीय स्वायत्तता की वर्तमान स्थिति

वर्तमान में देश की अधिकतर पंचायते अपने वित्त पोषण के लिए बाहरी अनुदानों पर ही निर्भर है जिसमे की अगर देखा जाये तो ग्राम पंचायत की कुल आय का मात्र 1% ही स्वयं द्वारा अर्जित है एवं कुल अनुदानों का 80% केंद्र एवं 15% राज्य सरकार से अनुदान के रूप में प्राप्त होता है | इसके अलावा भारतीय संविधान 73वें संशोधन के बाद भी अधिकांश राज्यों में पूरी तरह से 29 निहित

कार्यो का हस्तांतरण नहीं हुआ है | मध्य प्रदेश राज्यमंत्री की रिपोर्ट 2022 के अनुसार, केवल 20% से कम राज्य पूरी तरह फण्ड एवं निर्णय-निर्माण अधिकार संप्रेषित कर चुके है | इसके अलावा कई राज्यों में पंचायत सचिवो की नियुक्ति और वित्तीय जिम्मेदारी निभाने के लिए प्रशिक्षित कर्मचारी की कमी है, इसके साथ ही कर दिशा निर्देश अस्पष्ट है, और स्थानीय कर संग्रह तंत्र कमजोर है |

हाल ही के वर्षो में इस प्रकार की कमी को देखते हुए पंचायती राज मंत्रालय के तत्वाधान में आई आई एम अहमदाबाद के सहयोग से आत्म निर्भर पंचायत हेतु स्वयं के स्रोत से राजस्व प्रशिक्षण मॉड्यूल के लिए 'समर्थ डिजिटल पोर्टल' विकसित किया गया है| जो कि samarthpanchayat.gov.in पर देखा जा सकता है |

ग्राम पंचायतों के लिए राजस्व के स्रोत

ग्राम पंचायत द्वारा स्वउत्पन्न आय जिसे अंग्रेजी में स्वयं के स्रोत भी कहा जाता है के दो प्रकार है पहला टैक्स राजस्व जिसे अंग्रेजी में स्वयं का कर राजस्व कहा जाता है जो कि सम्पति/घर कर, व्यवसाय/पेशा कर, वाहन कर, मनोरंजन/मेला कर, विज्ञापन कर, भूमि एवं बाजार कर यह सभी राजस्व स्त्रोत राज्य के पंचायती राज अधिनियम द्वारा ग्राम पंचायतो को दिए जाते है तथा दूसरा है गैर-टैक्स राजस्व जिसे अंग्रेजी में स्वयं का गैर-कर राजस्व कहा जाता है इसमें जल शुल्क, स्वच्छता/नाली शुल्क, सार्वजनिक शौचालय शुल्क, पंचायत भवन, बाजार तथा तालाबो का रेंट/लीज, विवाह या ग्राम सभा गतिविधियों की लाइसेंस फ़ीस, जन्म/मृत्यु प्रमाणपत्र शुल्क तथा ब्याज आय, जुर्माना, स्क्रेप बिक्री आदि हो सकता है | (सुरोवका के., 2017) पेपर स्थानीय स्व-सरकारों की वित्तीय स्वायत्तता पर चर्चा करता है, जिसमें ग्राम पंचायतों के लिए सार्वजनिक कार्यों को प्रभावी ढंग से करने के लिए स्वतंत्र वित्तीय स्रोतों के महत्व पर जोर दिया जाता है, जिससे व्यापक लोकतांत्रिक शासन ढांचे के भीतर उनका सशक्तिकरण और स्वायत्तता सुनिश्चित होती है।

पंचायतो की राजकोषीय शक्तियां और कार्य

तालिका 4.2: पंचायतों को 29 विषयों के राज्य-वार हस्तांतरण की स्थिति

क्र.सं.	राज्य	हस्तांतरित विषयों की संख्या
1	आंध्र प्रदेश	25
2	असम	21
3	बिहार	26
4	छत्तीसगढ़	20
5	गोवा	-
6	गुजरात	21
7	हरियाणा	29
8	हिमाचल प्रदेश	29
9	झारखंड	18
10	कर्नाटक	29

11	केरल	29
12	मध्य प्रदेश	14
13	महाराष्ट्र	29
14	मणिपुर	5
15	ओडिशा	21
16	पंजाब	9
17	राजस्थान	25

18	सिक्किम	29
19	तमिलनाडु	28
20	तेलंगाना	14
21	त्रिपुरा	12
22	उत्तर प्रदेश	26
23	उत्तराखंड	11
24	पश्चिम बंगाल	28

स्रोत: पंचायती राज मंत्रालय

अनुच्छेद 243(छ) के तहत भारतीय संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में 29 विषयों का उल्लेख है जिन्हें राज्यों द्वारा स्थानीय स्वशासन संस्थाओं को सौंपा गया है। पंचायती को इन 29 विषयो पर कानून बनाने एवं कार्य करने का प्रावधान भारत के संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में दिया गया है हालाँकि ये विषय ग्राम स्तर पर विकास और कल्याण कार्यों से संबंधित हैं। भारत के संविधान में तिहत्तरवें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के द्वारा भारत के संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची जोड़ी गई, जिसमें पंचायतों की शक्तियां, प्राधिकार और उत्तरदायित्व सम्बन्धी 29 विषय सूचीबद्ध किए गए, जिन पर ग्राम पंचायते काम कर सकती है परन्तु बहुत से राज्यों ने इन विषयो को पूरी तरह से पंचायतो को हस्तांतरित नहीं किया है जैसे आंध्र प्रदेश ने 25, असम ने 21, बिहार ने 26 इस प्रकार पंचायतो को हस्तांतरित विषयों की संख्या राज्यवर अलग अलग है | अगर बात की जाये तो पंचायतो को पूर्ण विषय हस्तांतरित करने वाले राज्यों की तो उनमे हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, सिक्किम अग्रणी राज्य है, वही इस मामले में पिछड़े राज्य जो की अभी तक पंचायतो को पूर्ण विषय हस्तांतरित नहीं कर पाए उनमे गोवा, मणिपुर, पंजाब, तेलंगाना, मध्य प्रदेश, उत्तराखंड प्रमुख है | ग्यारहवी अनुसूची के प्रमुख विषय इस प्रकार है -

ग्यारहवीं अनुसूची

(अनुच्छेद 243 छ)

1. कृषि, जिसके अंतर्गत कृषि- विस्तार है
2. भूमि विकास, भूमि सुधार का कार्यान्वयन, चकबंदी और भूमि संरक्षण
3. लघु सिंचाई, जल प्रबंध और जलविभाजक क्षेत्र का विकास
4. पशुपालन, डेरी उद्योग और कुक्कुट-पालन
5. मत्स्य उद्योग

6. सामाजिक वानिकी और फार्म वानिकी
7. लघु वन उपज
8. लघु उद्योग, जिसके अंतर्गत खाद प्रसंस्करण उद्योग भी हैं
9. खादी, ग्रामोद्योग और कुटीर उद्योग
10. ग्रामीण आवासन
11. पेयजल
12. इंधन और चारा
13. सड़के, पुलिया, पुल, फेरी, जलमार्ग और अन्य संचार साधन
14. ग्रामीण विद्युतीकरण, जिसके अंतर्गत विधुत का वितरण है
15. अपारंपरिक उर्जा स्त्रोत
16. ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रम
17. शिक्षा, जिसके अंतर्गत प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय भी है
18. तकनिकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा
19. प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा
20. पुस्तकालय
21. संस्कृतिक क्रियाकलाप
22. बाजार और मेले
23. स्वस्थ्य और स्वछता, जिसके अंतर्गत अस्पताल, प्राथमिक स्वस्थ्य केंद्र और औषधालय भी हैं
24. परिवार कल्याण
25. महिला और बाल विकास
26. समाज कल्याण, जिसके अंतर्गत विकलांगों और मानसिक रूप से मंद व्यक्तियों का कल्याण भी है
27. दुर्बल वर्गों का और विशिष्टतया, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का कल्याण|
28. सार्वजनिक वितरण प्रणाली
29. सामुदायिक अस्तियों का अनुरक्षण

संविधान (तिहत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1992 की धारा 4 द्वारा (24 – 4 -1993 से) अन्तः स्थापित

यहाँ हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है की पंचायतो को जब तक ग्यारहवीं अनुसूची के विषय हस्तांतरित नहीं किये जायेंगे एवं उन्हें इनके लिए पूर्ण वित्तीय अनुदान नहीं दिया जायेगा जब तक ग्राम विकास की दिशा में आगे की राह तथा पूर्ण विकेंद्रीकरण का लक्ष्य अधुरा रहेगा |

वित्तीय स्वायत्तता के लिए चुनौतियाँ

राज्य और केंद्र सरकार के अनुदान पर निर्भरता

बाबू एम. डी. (2009) 73वें संशोधन अधिनियम की धाराएँ 243(H) और 243(I) पंचायतों के लिए वित्तीय शक्तियों का वर्णन करती हैं।अनुच्छेद 243(I) एक राज्य वित्त आयोग की नियुक्ति की व्यवस्था करती है तथा अनुच्छेद 280(bb) और 280(c) केंद्रीय वित्त आयोग पर स्थानीय निकायों के संसाधनों की जांच करने की जिम्मेदारी डालती हैं।

तालिका 4.3: पंचायत वित्त- 2020-23 के लिए प्रमुख अनुपात (प्रतिशत में)

पंचायत वित्त	2020-21	2021-22	2022-23
अपना-कर राजस्व कुल राजस्व प्राप्तियों से	1.1	1.1	1.0
राज्यों के अनुदान कुल राजस्व प्राप्तियों से	17.8	15.8	15.4
केंद्र सरकार के अनुदान कुल राजस्व प्राप्तियों से	77.5	79.6	70.8
संयुक्त (केंद्र + राज्य) अनुदान कुल राजस्व प्राप्तियों से	95.7	95.7	95.5
पंचायत की राजस्व प्राप्तियाँ वर्तमान मूल्यों पर जीडीपी से	0.21	0.16	0.13
पंचायत के व्यय का वर्तमान मूल्यों पर जीडीपी से अनुपात	0.13	0.10	0.08

नोट:

1- अनुपात प्रति पंचायत औसत अनुमानों का उपयोग करके गणना किए जाते हैं।

2- संयुक्त अनुदान में केंद्र, राज्य सरकारों और अन्य संस्थानों से प्राप्त अनुदान शामिल हैं।

स्रोत: पंचायती राज मंत्रालय

2022-23 तक पंचायती राज मंत्रालय के आंकड़ो के अनुसार पंचायतो को मिलने वाले कुल राजस्व का लगभग 1% ही पंचायतो द्वारा स्व अर्जित टैक्स से प्राप्त होता है जिसमे की 3-4% गैर टैक्स राजस्व से प्राप्त होता है इसके साथ ही कुल राजस्व का 15.4% राजस्व राज्य सरकार से एवं 79.8% राजस्व केंद्र सरकार की मद से प्राप्त होता है | कुल मिलकर यह कहा जा सकता है की कुल टैक्स राजस्व का 95.5% राजस्व केंद्र एवं राज्य सरकार के अनुदान से प्राप्त होता है | वर्ष 2020-21 की तुलना में पंचायतो का स्व अर्जित टैक्स राजस्व में 0.1% प्रतिशत की गिरावट आई है एवं राज्य द्वारा दिए गए राजस्व अनुदान में 2020-21 की तुलना में 2022-23 में 0.4 प्रतिशत की गिरावट आई है इसके अलावा केंद्र द्वारा दिए गए अनुदान में वर्ष 2020-21 की तुलना में 2022-23 में 2.3% की बढ़ोतरी हुई है | तथा केंद एवं राज्य सरकार द्वारा प्राप्त कुल अनुदानों में वर्ष 2020-21 की तुलना में वर्ष 2022-23 में 0.2% की गिरावट आई है |

पंचायते अपने वित्त पोषण के लिए पुर्णतः केंद्र सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा प्राप्त अनुदानों पर निर्भर है | यही कारण है की पंचायतो में योजनायें केंद्र से पंचायतो के लिए बनाई जाती है | ग्रामीण विकास के लिए योजनाओं का धरातल से बनना जरुरी है एवं पंचायतो की आवश्यकता अनुरूप उन्हें अपने स्वयं के लिए राजस्व स्रोत को और मजबूत करने की जरूरत है ताकि वे पूरी क्षमता के साथ ग्रामीण विकास कर सकें |

वित्तीय प्रबंधन कौशल की कमी

प्रतीप (2015) ने अध्ययन में पाया की किस प्रकार अपर्याप्त संसाधनों एवं वित्तीय प्रबंधन क्षमता की कमी, राजस्व के निम्नतम स्रोत आदि मुख्य मुद्दों को पंचातो में वित्तीय प्रबंधन कौशल की कमी के रूप में निम्न बिन्दुओं में अंकित किया जो इस प्रकार है-

1. ग्राम पंचायतों को वित्तीय हस्तांतरण न केवल अपर्याप्त है, बल्कि यह राज्यों के अनुसार भी भिन्न है। संविधान भारत में पंचायत राज संस्थाओं को राजस्व के अनेक स्रोत प्रदान करता है। लेकिन कई राज्य अभी तक राज्यों को पर्याप्त वित्त, कार्य और कार्यकर्ता हस्तांतरित करने के लिए आगे नहीं आए हैं।

2. राजस्व के स्वयं के खराब स्रोत भारत में ग्राम पंचायतों के महत्वपूर्ण मुद्दों में से एक रहे हैं। राजस्व के अपने स्रोतों का राष्ट्रीय औसत राजस्व के कुल राजस्व स्रोतों के दस प्रतिशत से कम है। अधिकांश राज्यों में राजस्व के अपने स्रोत नगण्य रूप से कम हैं। इस खेदजनक स्थिति के कई कारण हैं और वे हैं ग्राम पंचायतों को कम संख्या में कराधान और गैर-कराधान शक्तियां सौंपना, राज्य सरकार द्वारा निर्धारित कम राजस्व दरें, ग्राम पंचायत के अधिकारियों की अनिच्छा, लोगों पर कर और गैर-कर लगाने के लिए प्रतिनिधि।

3. ग्राम पंचायतों की कर राजस्व जुटाने की क्षमता सीमित है। उनकी आर्थिक स्थिति मुख्य रूप से स्वयं के राजस्व स्रोतों, जनसंख्या, आर्थिक गतिविधियों की व्यापकता, शहरी विशेषताओं और नजदीकी शहरी क्षेत्रों पर निर्भर करती है।

4. ग्राम पंचायत का खराब वित्तीय प्रबंधन। ग्राम पंचायतों में संसाधनों के संग्रहण, अभिलेखन तंत्र, आंकड़ा संग्रहण तंत्र, राजस्व स्रोतों का आकलन, व्यय प्रबंधन, कर निर्धारण की गणना, बकाया की वसूली, घर-घर जाकर कर संग्रहण तंत्र, राजस्व मूल्यांकन एवं संग्रहण का कम्प्यूटरीकरण आदि में प्रबंधकीय कौशल कई तरह से दोषपूर्ण है।

5. डेटा संग्रह और भंडारण की कमी है। केन्द्र और राज्य स्तर पर सभी वित्त आयोगों द्वारा इंगित की गई प्रमुख समस्याओं में से एक पंचायती राज संस्थाओं में उपलब्ध आंकड़ों की दयनीय स्थिति है। ग्राम पंचायतें अपने राजस्व के स्त्रोतों, राजस्व संभाव्यता, कुछ वर्षों में ग्राम पंचायतों के राजस्व संग्रहण, पिछले कुछ वर्षों में व्यय, ग्राम पंचायत क्षेत्र में कार्यरत संस्थानों, श्रमिकों और कर्मचारियों की संख्या, खेती के तहत क्षेत्र, विभिन्न खनिजों, रेत, ग्रामीण उद्योगों, छोटे व्यवसायों आदि की उपलब्धता में लगभग अंधी हैं।

6. ग्राम पंचायतों में केंद्र और राज्य सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं और कार्यक्रमों की अधिकता का अस्तित्व। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ऐसी योजनाओं की आवश्यकता है, लेकिन इससे पंचायतों का कार्यभार बढ़ गया है। मौजूदा जिम्मेदारियों का सामना करने के लिए कर्मचारी पर्याप्त नहीं हैं। वास्तविक व्यवहार में, ग्राम पंचायतें उन्हें आबंटित धनराशि को बंधे हुए प्रायोजित कार्यक्रमों और योजनाओं का उपयोग करने के लिए खर्च करने में सक्षम नहीं हैं। ग्राम पंचायतें भारत में पंचायती राज संस्थानों की महत्वपूर्ण घटक हैं। अस्तित्व और निष्पादन संसाधनों की उपलब्धता और उपयोग तथा ग्राम पंचायतों के राजस्व के नए स्त्रोतों का पता लगाने की क्षमता और वित्तीय प्रबंधन पर निर्भर करता है। ग्राम पंचायतों का वर्तमान वित्तीय प्रबंधन कई तरह से कुशल नहीं है। यदि विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया और वास्तविक लोकतंत्र को सफल बनाना है तो ग्राम पंचायतों के वित्तीय प्रबंधन को सुदृढ़ करना होगा।

कैन एवं कावुगाना (2023) ने इस बात पर प्रकाश डाला है कि ग्राम पंचायतों जैसी स्थानीय सरकारों के लिए वित्तीय स्वायत्तता महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उन्हें प्रशासनिक कर्तव्यों को प्रभावी ढंग से निभाने में सक्षम बनाती है और ग्रामीण विकास को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है, जिससे स्थानीय समुदायों पर खराब पूंजी वित्त पोषण के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है।

राजनीतिक हस्तक्षेप

कई बार राजनीति का निम्न स्तर भी ग्राम विकास एवं पंचायतो के विकास में बाधा बन सकता है गांवो में कई छोटे छोटे ग्रुप होंते है जो की किसी भी कार्य को करने में अपने निजी राजनितिक हित

को साधने के लिए हस्तक्षेप करते है जिससे पंचायते अपना कार्य नहीं कर पाती है एवं इससे सीधे रूप से ग्रामीण विकास पर असर पड़ता है |

वित्तीय स्वायत्तता बढ़ाने के अवसर

स्थानीय राजस्व सृजन को मजबूत करना एवं राजस्व के अधिक से अधिक उपायों को खोजना |

- क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण कार्यक्रम का विकास करना जिससे की पंचायतो की वित्तीय स्वयत्तता को बढाया जा सके |
- नीतिगत सिफारिशें करना जिससे की ग्राम पंचायतों की स्वयत्तता को बढाया जा सके |

राज्यवार अधययन

अध्ययन में पाया गया है कि आंध्र प्रदेश में विभाजन से पहले और बाद की दोनों अवधियों के दौरान ग्राम पंचायतों ने मंडल प्रजा परिषदों और जिला प्रजा परिषदों की तुलना में अपेक्षाकृत बेहतर वित्तीय स्वायत्तता का प्रदर्शन किया, जो पीआरआई के तीन स्तरों के बीच उनकी मजबूत वित्तीय स्वतंत्रता को उजागर करता (गुन्टुपल्ली एवं अन्य, 2023) |

पश्चिम बंगाल में ग्राम पंचायतों की वित्तीय स्वायत्तता उनके स्वयं के स्रोत राजस्व उत्पन्न करने, अनुदान प्राप्त करने और व्यय का प्रबंधन करने की उनकी क्षमता से प्रभावित होती है, जिसमें जनसांख्यिकीय, सामाजिक-आर्थिक और भौगोलिक कारकों के कारण असमानताएं उनके वित्तीय प्रदर्शन को प्रभावित करती हैं (चट्टोपाध्याय, 2023)।

निष्कर्ष

ग्राम पंचायतों की प्रभावशीलता में बाधा के रूप में अपर्याप्त वित्तीय हस्तांतरण पर प्रकाश डाला गया है। स्थानीय शासन को सशक्त बनाने, पारदर्शिता को बढ़ावा देने और यह सुनिश्चित करने के लिए कि ग्राम सभाएं स्थायी ग्रामीण विकास में प्रभावी रूप से योगदान दे सकें, वित्तीय स्वायत्तता बढ़ाना महत्वपूर्ण है।

1992 में, भारतीय संविधान का 73वां संशोधन पंचायत राज संस्थाओं को ग्रामीण भारत में तीन स्तरों पर संस्थागत किया: ग्राम पंचायतें गाँव स्तर पर, मंडल पंचायतें मध्यवर्ती/ब्लॉक स्तर पर और ज़िला परिषद जिला स्तर पर। भारत में कुल 2.62 लाख पीआरआई हैं, जिनमें 2.55 लाख ग्राम पंचायतें, 6, 707 मंडल पंचायतें और 665 ज़िला परिषदें शामिल हैं, जो अक्टूबर 2023 के अंत तक की स्थिति है।

प्रभावी कामकाज के लिए ग्राम पंचायतों की वित्तीय स्वायत्तता आवश्यक है, जिसके लिए अनुदानों पर निर्भरता कम करने और कर संग्रह के माध्यम से राजस्व में वृद्धि की आवश्यकता होती है।

सिफारिशों में उन्हें कर लगाने के लिए सशक्त बनाना और उनकी वित्तीय स्थिति को बढ़ाने के लिए समय-समय पर वित्तीय समीक्षा सुनिश्चित करना शामिल है| वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या का 68.84 प्रतिशत भारत के गांवो में निवास करते हैं और विकास के दृष्टिकोण से ग्राम पंचायतो को वित्तीय सहायता देना एवं उनका पूर्ण विकास सुनिश्चित करना देश के विकास के लिए आवश्यक है जैसे की महात्मा गाँधी ने कहा था कि "गांवो के विकास के बिना भारत के विकास की कल्पना अधूरी है"|

सन्दर्भ

- गौड़ा, एन. एवं डॉ. शशिकुमार, टी. पी. (2024). ग्राम सभा: स्थानीय शासन में सामुदायिक भागीदारी हेतु उत्प्रेरक के रूप में. *आईओएसआर जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस,* 29(12), 35–39. https: //doi.org/10.9790/0837-2912073539

- गोन्टुपुलुगु, जे., पदाकण्डला, एस. आर., एवं माकेनी, सी. (2023). पंचायत राज संस्थाओं (PRIs) का राजकोषीय प्रदर्शन: आंध्र प्रदेश राज्य का पूर्व और पश्च-विभाजन काल का एक अनुभवजन्य विश्लेषण. *जर्नल ऑफ़ रूरल एंड डेवलपमेंट.* https: //doi.org/10.25175/jrd/2022/v41/i3/153966

- चट्टोपाध्याय, एस. (2023). पश्चिम बंगाल में ग्राम पंचायतों की वित्त व्यवस्था: विषमताएँ और निर्धारक. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ रूरल मैनेजमेंट,* 20(1), 145–164. https: //doi.org/10.1177/09730052231183218

- द हिन्दू बिज़नेस लाइन. (2024, 16 नवम्बर). पंचायतों के लिए स्वयं के स्रोतों से राजस्व प्रति व्यक्ति ₹59 पर सीमित. *द हिन्दू बिज़नेस लाइन.*

- द्विवेदी, एच. के. (2024). स्थानीय निकायों की वित्त व्यवस्था को सुदृढ़ बनाना (पृ. 181–197). *ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.* https: //doi.org/10.1093/oso/9780198903116.003.0011

- बाबू, एम. डी. (2009). भारत में पंचायतों का राजकोषीय सशक्तिकरण: वास्तविकता या अलंकार. *द इंस्टिट्यूट फ़ॉर सोशल एंड इकोनॉमिक चेंज,* बेंगलुरु.

- भारतीय संविधान. भारत सरकार.

- भारतीय रिज़र्व बैंक (2024). पंचायती राज संस्थाओं की वित्त व्यवस्था (रिपोर्ट). *भारतीय रिज़र्व बैंक, भारत सरकार.*

- महिपाल (2012). ग्राम नियोजन. *नेशनल बुक ट्रस्ट,* नई दिल्ली.

- महिपाल (2015). पंचायती राज: चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ. *नेशनल बुक ट्रस्ट,* नई दिल्ली.
- मेहता, ए. (1978). पंचायती राज संस्थाओं पर समिति की रिपोर्ट. *भारत सरकार.*
- पंथ, ए. एस. एवं बोहरा, ओ. पी. (1995). पंचायत राज संस्थाओं की वित्त व्यवस्था. *इंडियन जर्नल ऑफ़ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन,* 41(1), 68–77. https: //doi.org/10.1177/0019556119950105
- पंचायत राज मंत्रालय – https: //panchayat.gov.in/
- पंचायत राज मंत्रालय (2020). चुने गए भारतीय राज्यों में ग्राम पंचायतों को 14वें वित्त आयोग अनुदान के उपयोग और प्रभाव का मूल्यांकन.
- प्रथीप, सी. (2015). भारत में ग्राम पंचायतों का वित्तीय प्रबंधन. *इंटरनेशनल जर्नल इन मैनेजमेंट एंड सोशल साइंस.*
- वर्मा, जे. के. एवं मीणा, एम. के. (2024). ग्रामीण विकास में ग्राम पंचायतों का योगदान: अलवर ज़िले की श्री चाँदपुरा, नायगाँव बोलका, थाना राजाजी और कलेशन ग्राम पंचायतों का अध्ययन. *रिसर्च हब,* 11(4), 64–70. https: //doi.org/10.53573/rhimrj.2024.v11n4.011
- शुक्ला, एस. एवं पंकज, ए. (2023). ग्रामीण भारत के परिवर्तन में ग्राम पंचायत की संभावनाएँ: एक समाज-कानूनी विश्लेषण. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ लॉ एंड सोशल साइंसेज़,* 70–78. https: //doi.org/10.60143/ijls.v8.i1.2022.76
- कान, वाई. एस. एवं कावुगाना, ए. (2023). राष्ट्रीय विकास की आधारशिला के रूप में स्थानीय सरकार की वित्तीय स्वायत्तता का विश्लेषण (बाउची स्थानीय सरकार का अध्ययन). *जर्नल ऑफ अकाउंटिंग एंड फ़ाइनेंशियल मैनेजमेंट.* https: //doi.org/10.56201/jafm.v9.no9.2023.pg144.152
- केंद्रीय वित्त आयोग की रिपोर्टें. *केंद्रीय वित्त आयोग. नई दिल्ली*

5

महिला नेतृत्व एवं सामाजिक समावेश

डॉ. संगीता रानी

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.64-76
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

पंचायती राज संस्थाएँ भारत के लोकतांत्रिक ढाँचे की आधारशिला हैं, जिनके माध्यम से स्थानीय स्तर पर शासन और विकास कार्य संपन्न होते हैं। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम (1992) के अंतर्गत महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया, जिसने ग्रामीण राजनीति में उनकी भागीदारी को उल्लेखनीय रूप से बढ़ाया है। इस संवैधानिक सुधार ने न केवल महिलाओं को राजनीतिक अधिकार प्रदान किए, बल्कि उन्हें सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप से सशक्त बनाने का मार्ग भी प्रशस्त किया।

वर्तमान शोध में पंचायती राज संस्थाओं में महिला नेतृत्व विकास की वर्तमान स्थिति, चुनौतियाँ एवं अवसरों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि यद्यपि महिलाओं की सहभागिता में वृद्धि हुई है, तथापि उन्हें अभी भी सामाजिक रूढ़िवादिता, संसाधनों की कमी, राजनीतिक अनुभव के अभाव तथा पुरुष-प्रधान मानसिकता जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। फिर भी, पंचायत स्तर पर महिलाओं का सक्रिय योगदान ग्रामीण विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक न्याय की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन ला रहा है।यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि महिला नेतृत्व का सतत् विकास तभी संभव है जब शिक्षा, प्रशिक्षण, सामाजिक जागरूकता एवं नीति-निर्माण में उनकी समान भागीदारी सुनिश्चित की जाए। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की प्रभावी भूमिका न केवल लोकतंत्र को मजबूत बनाती है, बल्कि समाज के समग्र विकास में भी महत्त्वपूर्ण योगदान देती है।

मुख्य शब्द: पंचायती राज संस्थाएँ, महिला नेतृत्व, सामाजिक समावेश, 73वें संविधान संशोधन अधिनियम

प्रस्तावना

भारत में महिलाएँ सदियों से सामाजिक और पारिवारिक जीवन की धुरी रही हैं। किंतु, आधुनिक युग में उनका योगदान केवल घर तक सीमित नहीं रहा। उन्होंने नेतृत्व के ऐसे उदाहरण प्रस्तुत किए हैं जिन्होंने न केवल समाज में बदलाव लाया, बल्कि सामाजिक न्याय और समावेशन की भावना को भी सशक्त किया।

आज जब हम महिला नेतृत्व की बात करते हैं, तो इसका दायरा राजनीति, शिक्षा, स्वास्थ्य, विज्ञान, तकनीक, पर्यावरण संरक्षण और ग्रामीण विकास तक फैला हुआ है। महिला नेतृत्व सामाजिक समावेश की कुंजी इसलिए है क्योंकि महिलाएँ अक्सर समाज के हाशिए पर खड़े वर्गों के प्रति अधिक संवेदनशील और न्यायपूर्ण दृष्टिकोण अपनाती हैं। यदि हम अपने अतीत पर दृष्टि डालें, तो प्राचीन काल में महिलाओं को समाज और राजनीति में भागीदारी की पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त थी। लेकिन समय के साथ यह स्थिति बदल गई। मध्यकालीन और औपनिवेशिक काल में महिलाओं की स्थिति और भी दुर्बल होती गई।

स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं ने पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर भाग लिया। 15 अगस्त 1947 को जब भारत स्वतंत्र हुआ, तब संविधान सभा में डॉ. भीमराव आंबेडकर और अन्य सदस्यों ने महिलाओं के अधिकारों का समर्थन किया। फिर भी, संसद और सरकार के विभिन्न स्तरों पर महिलाओं को अपेक्षित प्रतिनिधित्व नहीं मिला। संविधान सभा में मात्र 15 महिला सदस्य थीं। बलवंतराय मेहता और अशोक मेहता समितियों ने पंचायती राज व्यवस्था की सिफारिशें तो कीं, लेकिन महिलाओं के प्रतिनिधित्व और नेतृत्व के विषय में कुछ विशेष नहीं कहा गया। केवल दो महिला सदस्यों को ही पंचायतों में नियुक्त किया गया था। महिला नेतृत्व और सशक्तिकरण की दिशा में 73वां संविधान संशोधन एक मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इस संशोधन अधिनियम के माध्यम से पंचायतों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई, जो आज कई राज्यों में 50 प्रतिशत तक लागू है।

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में समाज के सभी वर्गों की समान भागीदारी और प्रतिनिधित्व अत्यंत आवश्यक है। इसमें महिलाओं की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि वे समाज की लगभग आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हैं। महिला नेतृत्व का तात्पर्य है महिलाओं की नीति निर्धारण, प्रशासन, राजनीति, सामाजिक संगठनों तथा अन्य निर्णयात्मक भूमिकाओं में सक्रिय भागीदारी। जब महिलाएं नेतृत्व की भूमिकाओं में आती हैं, तो वे केवल स्वयं को सशक्त नहीं करतीं, बल्कि पूरे समाज के वंचित और हाशिए पर खड़े वर्गों को भी आवाज़ देती हैं। वहीं सामाजिक समावेश का अर्थ है समाज के सभी वर्गों को, चाहे वे किसी भी जाति, धर्म, लिंग, वर्ग या भौगोलिक क्षेत्र से हों, समान अवसर, सम्मान और भागीदारी का अधिकार देना। महिला नेतृत्व और सामाजिक समावेश एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। जहां महिला नेतृत्व समाज में समरसता,

संवेदनशीलता और न्यायपूर्ण दृष्टिकोण को बढ़ावा देता है, वहीं सामाजिक समावेश से महिलाओं को अपने नेतृत्व कौशल को विकसित करने का अवसर मिलता है।

पंचायतों में आरक्षण के माध्यम से देश के ग्रामीण स्तर पर महिलाओं की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। पहले जहां महिलाओं के कार्य को केवल घरेलू कामों तक सीमित माना जाता था, अब वही महिलाएं राजनीतिक स्तर पर पुरुषों के बराबर पहुँच रही हैं। लोकतांत्रिक नीति निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि वह एक सहभागी प्रक्रिया बने। जिन लोगों के लिए नीतियाँ बनाई जा रही हैं, उनकी समस्याओं को ध्यान में रखते हुए नीति निर्माण किया जाना चाहिए, ताकि वे खुद उसके समाधान का हिस्सा बन सकें। ग्रामीण स्तर पर महिला नेतृत्व भारतीय लोकतंत्र को सशक्त बना रहा है। देश की लोकतांत्रिक प्रक्रिया में बदलाव आ रहा है। पंचायत स्तर पर इतनी सक्रिय महिला भागीदारी ने स्थानीय जीवन, उसकी सोच और संस्कृति में भी परिवर्तन ला दिया है।

स्वतंत्रता से पूर्व पंचायती राज और महिलाएँ

भारत में महिलाएँ सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न दौर से गुज़री हैं। जाति, गोत्र और वर्ग व्यवस्था ने उन्हें समाज के साथ उचित संवाद स्थापित करने और अपने आपको अभिव्यक्त करने का उचित अवसर प्रदान नहीं किया। प्राचीन काल में कुछ ऐसे उदाहरण मिलते हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त थे। उपलब्ध साक्ष्य बताते हैं कि ऋषि-मुनि भी स्त्रियों को पर्याप्त स्वतंत्रता प्रदान करते थे। लड़कियों को अपनी इच्छा से वर चुनने का अधिकार था।

लेकिन उसके बाद के समय में महिलाओं की सामाजिक स्थिति में अधिक गिरावट आई। उनके अधिकार छीन लिए गए, उनके कार्यक्षेत्र को सीमित कर दिया गया और केवल घरेलू कार्यों तक सीमित कर दिया गया।

प्राचीन काल में पंचायतों में सदस्यता के लिए कुछ निश्चित योग्यताएँ निर्धारित थीं भूमि का स्वामित्व, शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार, दान देने की क्षमता, व्यापार में दक्षता, और अपने सम्मान की रक्षा करने की सामर्थ्य। इन मानकों के आधार पर महिलाएँ चुनाव में भाग लेने की पात्रता से वंचित रहती थीं, भले ही कुछ को शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। भूमि स्वामित्व और आर्थिक गतिविधियों में सीमित भागीदारी के कारण उनका पंचायतों से जुड़ाव अत्यंत कम था।ऐतिहासिक अध्ययनों से ज्ञात होता है कि यद्यपि कुछ प्रावधान महिलाओं को ग्रामीण समितियों की सदस्यता की अनुमति देते थे, व्यवहार में ऐसा नहीं होता था। इन समितियों पर अनेक सार्वजनिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उत्तरदायित्व थे, जबकि महिलाओं का जीवन-परिसर इतना सीमित था कि वे इन उत्तरदायित्वों में सक्रिय भूमिका निभाने में सक्षम नहीं थीं।

मुगल काल में स्थानीय प्रशासनिक ढाँचे में महिलाओं की स्थिति में कोई ठोस सुधार नहीं हुआ। इसके विपरीत, इस काल में महिलाओं को और अधिक घरेलू सीमाओं में बाँध दिया गया।

ब्रिटिश शासन के दौरान पंचायतों के पुनर्गठन हेतु कुछ महत्वपूर्ण पहलें हुईं—

- 14 दिसंबर 1870: स्थानीय स्वशासन और विकेंद्रीकरण का प्रस्ताव
- 1882: लॉर्ड रिपन द्वारा स्थानीय स्वशासन के गठन का प्रस्ताव
- 1907: चार्ल्स होम्स की अध्यक्षता में ग्रामीण विकेंद्रीकरण आयोग का गठन

हालाँकि, इन सभी पहलों में भी महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया।

राष्ट्रीय आंदोलन के पूर्व के सुधारवादी आंदोलनों में महिलाओं को सम्मान और समानता देने की चर्चा हुई, परंतु यह विचार अधिकतर सैद्धांतिक रहा। महात्मा गांधी ने पहली बार स्वतंत्रता आंदोलन को महिलाओं के हित और उनकी सक्रिय भागीदारी से जोड़ा। उनका स्पष्ट मत था—

"*जब तक महिलाएँ सार्वजनिक जीवन में सक्रिय भागीदारी नहीं निभातीं, तब तक भारत को वास्तविक स्वतंत्रता और विकास प्राप्त नहीं हो सकता।*"

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महिलाएँ पहली बार व्यापक रूप से सार्वजनिक जीवन में सक्रिय हुईं और यह प्रमाणित किया कि वे पुरुषों के समान कार्य कर सकती हैं। गांधीजी के अनुसार, भारत के पिछड़ेपन का एक प्रमुख कारण महिलाओं की उपेक्षा है।संविधान निर्माण के समय, डॉ. भीमराव आंबेडकर ने गाँवों में अज्ञान, असमानता और सामाजिक अलगाव की प्रवृत्ति को देखते हुए पंचायतों का विरोध किया और उन्हें संविधान का अंग न बनाने की राय दी । किंतु गांधीजी के प्रभाव से अंततः पंचायतों को संविधान में स्थान मिला। इसके बावजूद, पंचायतों में महिलाओं की भूमिका पर पर्याप्त विचार-विमर्श नहीं हुआ ।

महिला नेतृत्व का महत्व

महिला नेतृत्व का मतलब केवल पद पाना नहीं, बल्कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेना और समाज के हर वर्ग को प्रतिनिधित्व देना है। महिलाएँ जब नेतृत्व में आती हैं तो वे सामाजिक मुद्दों को गहराई से समझती हैं, जैसे पोषण, शिक्षा, स्वास्थ्य, बाल विवाह, घरेलू हिंसा आदि।

महिला नेतृत्व समाज के समग्र विकास और लोकतांत्रिक सशक्तिकरण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। जब महिलाएं नेतृत्व की भूमिका में आती हैं, तो वे केवल स्वयं के लिए ही नहीं, बल्कि पूरे समाज के वंचित और उपेक्षित वर्गों के लिए भी आवाज़ बनती हैं। महिला नेता निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया में ऐसी दृष्टि लेकर आती हैं जो संवेदनशील, समावेशी और व्यावहारिक होती है। वे शिक्षा, स्वास्थ्य, जल, पोषण, महिला सुरक्षा, बालिका कल्याण जैसे जीवनोपयोगी विषयों को प्राथमिकता देती हैं, जो सीधे तौर पर समाज की नींव को मजबूत करते हैं। महिला नेतृत्व से न केवल लोकतांत्रिक ढांचे में संतुलन आता है, बल्कि यह लैंगिक समानता को भी बढ़ावा देता है। यह

नेतृत्व लड़कियों और अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा का स्रोत बनता है, जिससे उनमें आत्मविश्वास और भागीदारी की भावना विकसित होती है । अनेक अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि महिला नेता अपने कार्य में अधिक पारदर्शिता, जवाबदेही और ईमानदारी बरतती हैं, जिससे शासन व्यवस्था में भ्रष्टाचार की संभावनाएं कम होती हैं। इस प्रकार, महिला नेतृत्व समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने, समानता स्थापित करने और समावेशी विकास सुनिश्चित करने की दिशा में एक प्रभावशाली माध्यम है।

महिला नेतृत्व, विशेषकर ग्रामीण और स्थानीय निकायों में, उन महिलाओं को भी मंच प्रदान करता है जो पहले सार्वजनिक जीवन से वंचित थीं। जब एक महिला ग्राम पंचायत या नगर निकाय की प्रमुख बनती है, तो वह न केवल अपने परिवार, बल्कि अपने पूरे समुदाय की सोच बदलने में सक्षम होती है। इससे सामाजिक ढांचे में लिंग आधारित भेदभाव धीरे-धीरे टूटने लगता है और महिलाओं को शिक्षा, रोजगार और निर्णय लेने के अवसर मिलने लगते हैं।महिला नेतृत्व का प्रभाव केवल राजनीति तक सीमित नहीं है। शिक्षा, स्वास्थ्य, विज्ञान, उद्योग, खेल और रक्षा जैसे क्षेत्रों में भी महिलाओं ने यह सिद्ध किया है कि वे नेतृत्व में पुरुषों के समान ही नहीं, बल्कि कई बार उनसे बेहतर प्रदर्शन करने में सक्षम हैं। महिला नेतृत्व सामाजिक परिवर्तन की वह चाबी है, जिससे समरस, समान और सशक्त समाज का निर्माण संभव हो सकता है। यह नेतृत्व भावी पीढ़ी को एक नई दिशा देता है, जिसमें महिलाएं केवल अनुयायी नहीं, बल्कि समाज की मार्गदर्शक बनकर उभरती हैं। अतः महिला नेतृत्व केवल प्रतिनिधित्व का सवाल नहीं, बल्कि समाज को नया दृष्टिकोण देने का एक सशक्त माध्यम है, जिसकी आज सबसे अधिक आवश्यकता है।

महिला नेतृत्व विकास में चुनौतियाँ

1. पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था

पितृसत्तात्मक सोच और पारंपरिक सांस्कृतिक ढाँचा ग्रामीण भारत में पंचायत स्तर पर महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को प्रभावित करता है। अधिकांश परिवार आज भी घर की महिलाओं को पंचायत कार्यों में भाग लेने की अनुमति नहीं देते और उन्हें घरेलू कार्यों तक सीमित मानते हैं। चुनाव के समय महिलाएँ आरक्षित सीटों पर तो खड़ी होती हैं, लेकिन वास्तविक नेतृत्व उनके पति या पुरुष अभिभावक के हाथ में होता है। इससे महिला प्रतिनिधि केवल औपचारिक हस्ताक्षर करने तक सीमित रह जाती हैं। यह स्थिति उनके आत्मविश्वास और निर्णय क्षमता को कमजोर करती है।

2. ग्रामीण महिला शिक्षा का निम्न स्तर

पंचायत राज संस्थाओं में महिला नेतृत्व के सामने सबसे बड़ी चुनौती शिक्षा का अभाव है। वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों में महिला साक्षरता दर लगभग 65% है, जबकि पुरुष साक्षरता दर 82% है। शिक्षा की कमी के कारण महिलाएँ विकास योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाती हैं और प्रशासनिक प्रक्रियाओं को समझने में कठिनाई महसूस करती हैं। प्रशिक्षित होने के बाद भी कई महिला

प्रतिनिधियाँ अपने अधिकारों का प्रभावी उपयोग नहीं कर पातीं और घर-परिवार की जिम्मेदारियों के कारण काम में बाधित होती हैं।

3. गरीबी, भूमि और संपत्ति से वंचित होना

गरीबी और संपत्ति के अभाव के कारण महिलाएँ निर्णय प्रक्रिया में कमजोर स्थिति में होती हैं। आँकड़ों के अनुसार ग्रामीण जनसंख्या का लगभग 24% हिस्सा गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करता है, जिनमें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की महिलाएँ सबसे अधिक प्रभावित होती हैं। कई गरीब महिलाएँ ऐसी हैं जिनके पास भूमि या स्थायी संपत्ति नहीं है, जिससे उनका सामाजिक-आर्थिक आधार कमजोर रहता है। वित्तीय संसाधनों की कमी के कारण वे चुनाव प्रचार में भी पीछे रह जाती हैं, जिससे पंचायत में उनकी प्रतिनिधित्व क्षमता सीमित हो जाती है।

महिला नेतृत्व के लाभ

महिला नेतृत्व के लाभ निम्नलिखित हैं:

1. समानता और समावेशिता को बढ़ावा

महिलाओं के नेतृत्व में आने से समाज में लैंगिक समानता को बढ़ावा मिलता है। यह सामाजिक न्याय की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होता है, जिससे महिलाओं को समान अवसर प्राप्त होते हैं। महिला नेतृत्व समानता और समावेशिता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब महिलाएं नेतृत्व की भूमिका में आती हैं, तो वे समाज के सभी वर्गों के लिए समान अवसर सुनिश्चित करने का प्रयास करती हैं, चाहे वह लिंग, जाति, धर्म, आर्थिक स्थिति या शारीरिक क्षमता से जुड़ा हो। महिला नेता स्वाभाविक रूप से सहानुभूतिपूर्ण और संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाती हैं, जिससे वे हाशिए पर मौजूद समुदायों की आवाज़ को न केवल सुनती हैं बल्कि उनके हित में नीतियाँ भी बनाती हैं। उनका नेतृत्व लैंगिक भेदभाव, सामाजिक असमानता और सांस्कृतिक बाधाओं को तोड़ने का कार्य करता है। कार्यस्थल से लेकर प्रशासनिक व्यवस्थाओं तक, वे सभी के लिए न्यायसंगत और समावेशी वातावरण तैयार करने की दिशा में कार्य करती हैं। इस प्रकार महिला नेतृत्व समाज में समानता, न्याय और सहभागिता को सशक्त रूप से स्थापित करता है, जो समृद्ध और संतुलित विकास के लिए आवश्यक है।

2. सहृदय और सहानुभूति पूर्ण निर्णय

महिलाएं स्वाभाविक रूप से सहानुभूतिपूर्ण और भावनात्मक बुद्धिमत्ता (emotional intelligence) से परिपूर्ण होती हैं, जिससे वे सामूहिक निर्णयों में सबकी भावना का ध्यान रखती हैं। सहृदय और सहानुभूति पूर्ण निर्णय महिला नेतृत्व की एक विशिष्ट विशेषता है, जो उन्हें एक संवेदनशील और मानव केंद्रित दृष्टिकोण अपनाने में सक्षम बनाती है। महिलाएं स्वभाव से सहानुभूतिशील होती हैं, जिससे वे दूसरों की भावनाओं, कठिनाइयों और आवश्यकताओं को

गहराई से समझ पाती हैं। इस विशेषता के कारण, उनके द्वारा लिए गए निर्णय केवल नियमों और आंकड़ों पर आधारित नहीं होते, बल्कि मानवीय मूल्यों, करुणा और सामाजिक संवेदनशीलता को भी ध्यान में रखते हैं। चाहे वह स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार हो, शिक्षा की पहुंच को सुनिश्चित करना हो या सामाजिक सुरक्षा से जुड़ी नीतियाँ बनाना हो महिला नेतृत्व में यह देखा गया है कि निर्णयों में भावनात्मक बुद्धिमत्ता और व्यावहारिक समझ का समन्वय होता है। ऐसे निर्णय समाज के कमजोर और वंचित वर्गों के लिए विशेष रूप से लाभकारी होते हैं। इस प्रकार, सहृदयता और सहानुभूति के साथ लिए गए निर्णय समाज को अधिक समावेशी, न्यायपूर्ण और मानवोचित दिशा में आगे ले जाते हैं।

3. सामाजिक परिवर्तन की उत्प्रेरक

महिला नेतृत्व सामाजिक मुद्दों जैसे बाल विवाह, महिला शिक्षा, पोषण, स्वास्थ्य, और घरेलू हिंसा जैसे मुद्दों पर विशेष ध्यान देता है, जिससे सकारात्मक सामाजिक बदलाव आते हैं। महिला नेतृत्व सामाजिक परिवर्तन की एक प्रभावशाली उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है। जब महिलाएं नेतृत्व के स्थान पर आती हैं, तो वे केवल नीति निर्धारण तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि समाज की सोच, दृष्टिकोण और व्यवहार में भी सकारात्मक बदलाव लाती हैं। वे शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सशक्तिकरण, बाल अधिकार, स्वच्छता और लैंगिक समानता जैसे मुद्दों को प्राथमिकता देती हैं, जिनका सीधा संबंध सामाजिक विकास से होता है। महिला नेता पारंपरिक रूढ़ियों को तोड़कर नए मानदंड स्थापित करती हैं, जिससे अन्य महिलाएं और युवा वर्ग भी प्रेरित होते हैं। उनके नेतृत्व में योजनाएं और कार्यक्रम अधिक जमीनी, संवेदनशील और समावेशी होते हैं, जिससे समाज में जागरूकता बढ़ती है और बदलाव की गति तेज होती है। इस प्रकार, महिला नेतृत्व समाज में सकारात्मक विचारों, व्यवहारों और संरचनात्मक परिवर्तनों को उत्प्रेरित करने की दिशा में एक सशक्त साधन बनकर उभरता है।

4. भ्रष्टाचार में कमी

अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि महिला नेता तुलनात्मक रूप से अधिक ईमानदार और पारदर्शी शासन देती हैं, जिससे प्रशासन में भ्रष्टाचार की संभावनाएं कम होती हैं। महिला नेतृत्व भ्रष्टाचार में कमी लाने में अहम भूमिका निभाता है। शोधों और अनुभवों से यह स्पष्ट हुआ है कि महिलाएं नेतृत्व की भूमिकाओं में अधिक पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और नैतिक मूल्यों का पालन करती हैं। वे स्वभावतः ईमानदारी, जवाबदेही और सेवा भावना से कार्य करती हैं, जिससे प्रशासनिक प्रक्रियाओं में धोखाधड़ी, पक्षपात और अन्य अनैतिक गतिविधियों की संभावना घट जाती है। महिला नेता निर्णय लेते समय व्यक्तिगत लाभ की बजाय जनहित को प्राथमिकता देती हैं और संसाधनों के न्यायसंगत वितरण पर बल देती हैं। इसके अलावा, वे वित्तीय अनुशासन और निगरानी को प्रभावी ढंग से लागू करती हैं, जिससे सरकारी योजनाएं और कार्यक्रम अधिक पारदर्शी और प्रभावशाली

तरीके से क्रियान्वित होते हैं। इस प्रकार महिला नेतृत्व एक ईमानदार, उत्तरदायी और स्वच्छ प्रशासन की दिशा में समाज को आगे बढ़ाने में सहायक होता है।

5. संतुलित विकास और निर्णय क्षमता

महिला नेतृत्व सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक सभी पहलुओं में संतुलन बनाए रखने में सक्षम होता है। वे भावनात्मक और तार्किक दृष्टिकोण को मिलाकर निर्णय लेती हैं। महिला नेतृत्व संतुलित विकास और निर्णय क्षमता का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। महिलाएं स्वभावतः संवेदनशील, व्यावहारिक और दूरदर्शी होती हैं, जिससे वे किसी भी परिस्थिति में संतुलन बनाए रखते हुए निर्णय लेने में सक्षम होती हैं। वे केवल आर्थिक विकास पर ही नहीं, बल्कि सामाजिक, शैक्षिक, स्वास्थ्य और पर्यावरणीय पहलुओं पर भी बराबर ध्यान देती हैं, जिससे समग्र और टिकाऊ विकास को बढ़ावा मिलता है। महिला नेता तर्क और भावना, दोनों का संतुलित उपयोग करती हैं, जिससे उनके निर्णय न केवल प्रभावशाली होते हैं, बल्कि समाज के विभिन्न वर्गों की आवश्यकताओं को भी संबोधित करते हैं। वे संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण सुनिश्चित करती हैं और दीर्घकालिक परिणामों को ध्यान में रखते हुए योजनाएं बनाती हैं। इस प्रकार महिला नेतृत्व संतुलित सोच और समग्र दृष्टिकोण के माध्यम से समाज में न्याय, स्थिरता और समावेशिता को सुदृढ़ करता है।

6. नई दृष्टिकोण और नवाचार

महिलाएं नए विचार और कार्यशैली के साथ नेतृत्व करती हैं, जिससे संस्थान, संगठन या समुदाय में रचनात्मकता और नवाचार को बढ़ावा मिलता है। महिला नेतृत्व नई दृष्टिकोण और नवाचार को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। महिलाएं परंपरागत सोच से हटकर समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने में सक्षम होती हैं और विविध अनुभवों तथा संवेदनशीलता के आधार पर नीतियों व कार्यप्रणालियों में नवीनता लाती हैं। वे सहयोगात्मक नेतृत्व शैली को अपनाते हुए टीमवर्क, विचार-विमर्श और रचनात्मकता को प्राथमिकता देती हैं, जिससे नवाचार को प्रोत्साहन मिलता है। महिला नेता शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला कल्याण, पर्यावरण संरक्षण जैसे क्षेत्रों में नई योजनाएं और कार्यनीतियाँ लागू करती हैं, जो अधिक व्यावहारिक और समाजोपयोगी होती हैं। वे तकनीकी उपयोग, डिजिटलीकरण और सामाजिक सुधारों के माध्यम से न केवल व्यवस्था को सशक्त बनाती हैं, बल्कि समाज को प्रगतिशील दिशा में अग्रसर करती हैं। इस प्रकार महिला नेतृत्व सामाजिक और प्रशासनिक ढांचे में नयापन और सकारात्मक बदलाव लाने का माध्यम बनता है।

7. अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा स्रोत

जब महिलाएं नेतृत्व की भूमिका में आती हैं, तो वे अन्य महिलाओं और लड़कियों को भी आगे बढ़ने और नेतृत्व की भूमिका निभाने के लिए प्रेरित करती हैं।यदि आप इसे किसी विशेष संदर्भ (जैसे राजनीति, शिक्षा, स्वास्थ्य क्षेत्र आदि) में चाहें तो मैं उस अनुसार विस्तार भी कर सकती हूँ।

यहाँ महिला नेतृत्व के कुछ और लाभ विस्तार से दिए गए हैं, जो सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक और आर्थिक सभी क्षेत्रों में इसकी प्रभावशीलता को दर्शाते हैं महिला नेतृत्व अन्य महिलाओं के लिए एक सशक्त प्रेरणा स्रोत के रूप में कार्य करता है। जब कोई महिला नेतृत्व की भूमिका में सफलता प्राप्त करती है, तो वह यह संदेश देती है कि महिलाएं भी समान रूप से सक्षम, निर्णय लेने में दक्ष और समाज का मार्गदर्शन करने में समर्थ हैं। ऐसे उदाहरण अन्य महिलाओं और लड़कियों में आत्मविश्वास और साहस का संचार करते हैं, जिससे वे अपने जीवन के हर क्षेत्र चाहे वह शिक्षा हो, राजनीति, व्यवसाय या सामाजिक कार्य में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित होती हैं। महिला नेता रूढ़िवादी सोच और सामाजिक बाधाओं को तोड़कर यह प्रमाणित करती हैं कि लिंग कोई सीमा नहीं है, बल्कि एक शक्ति है। उनका संघर्ष, समर्पण और सफलता नई पीढ़ी की महिलाओं को सपने देखने और उन्हें साकार करने का हौसला देता है। इस प्रकार महिला नेतृत्व न केवल समाज में परिवर्तन लाता है, बल्कि भविष्य की अनेक महिला नेताओं की नींव भी रखता है।

8. सामुदायिक विकास में तेजी

महिला नेता अक्सर जमीनी स्तर पर काम करती हैं और अपने समुदाय की समस्याओं को गहराई से समझती हैं। वे स्थानीय मुद्दों जैसे स्वास्थ्य, जल, स्वच्छता, पोषण आदि पर प्राथमिकता से कार्य करती हैं, जिससे समुदाय का समग्र विकास होता है। महिला नेतृत्व सामुदायिक विकास में तेजी लाने का एक प्रभावशाली माध्यम है। महिलाएं अपने समुदाय की आवश्यकताओं, समस्याओं और संसाधनों को गहराई से समझती हैं, जिससे वे जमीनी स्तर पर प्रभावशाली निर्णय ले पाती हैं। उनके नेतृत्व में शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण, महिला सशक्तिकरण और बाल संरक्षण जैसे क्षेत्रों में योजनाएं अधिक प्रभावी ढंग से लागू होती हैं। वे सहभागिता और सहयोग की भावना से काम करती हैं, जिससे समुदाय के सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित होती है। महिला नेता स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का सदुपयोग करते हुए टिकाऊ और समावेशी विकास की दिशा में कार्य करती हैं। उनके नेतृत्व से न केवल बुनियादी सुविधाओं में सुधार होता है, बल्कि सामाजिक जागरूकता, आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान भी बढ़ता है। इस प्रकार महिला नेतृत्व एक सशक्त, संगठित और जागरूक समुदाय के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

9. परिवार और समाज के बीच सेतु का कार्य

महिला नेतृत्व परिवार और समाज के बीच एक मजबूत सेतु का कार्य करता है। महिलाएं पारिवारिक मूल्यों, सामाजिक संबंधों और सामुदायिक जिम्मेदारियों को अच्छी तरह समझती हैं, जिससे वे दोनों स्तरों पर संतुलन बनाए रखने में सक्षम होती हैं। उनके निर्णय न केवल समाजहित में होते हैं, बल्कि वे परिवार की भावनात्मक और सांस्कृतिक ज़रूरतों का भी ध्यान रखती हैं। महिला नेता अपने अनुभवों और संवेदनशीलता के आधार पर ऐसे समाधान प्रस्तुत करती हैं जो व्यक्तिगत और सामाजिक आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य स्थापित करते हैं। वे अपने नेतृत्व के माध्यम से

परिवार के सदस्यों को सामाजिक मुद्दों से जोड़ती हैं और सामाजिक विकास की प्रक्रिया में सभी की भागीदारी सुनिश्चित करती हैं। इस प्रकार महिला नेतृत्व समाज और परिवार को जोड़ने वाली एक सशक्त कड़ी के रूप में कार्य करता है, जो समग्र विकास और सामाजिक समरसता को बढ़ावा देता है।

महिला नेतृत्व न केवल सार्वजनिक क्षेत्र में बल्कि पारिवारिक जिम्मेदारियों को भी अच्छी तरह से निभाते हुए समाज के लिए आदर्श प्रस्तुत करता है। इससे पारिवारिक मूल्यों और सामाजिक दायित्वों का संतुलन बना रहता है।

10. संकट प्रबंधन में दक्षता

महिलाएं कठिन परिस्थितियों में भी धैर्य, संयम और सामंजस्य के साथ निर्णय लेने में सक्षम होती हैं। चाहे वह प्राकृतिक आपदा हो या वैश्विक महामारी (जैसे कोविड-19), महिला नेताओं ने प्रभावशाली नेतृत्व प्रस्तुत किया है।

महिला नेतृत्व संकट प्रबंधन में दक्षता का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। महिलाएं स्वाभाविक रूप से धैर्यशील, संवेदनशील और व्यवस्थित होती हैं, जिससे वे कठिन परिस्थितियों में भी शांतिपूर्ण और विवेकपूर्ण ढंग से निर्णय लेने में सक्षम होती हैं। किसी भी आपदा, महामारी या सामाजिक संकट की स्थिति में वे त्वरित, संतुलित और मानवीय दृष्टिकोण से समस्याओं का समाधान निकालती हैं। उदाहरणस्वरूप, कोविड-19 महामारी के दौरान कई महिला नेताओं ने अपनी कुशल रणनीतियों और सहानुभूतिपूर्ण नीतियों से अपने क्षेत्रों में संक्रमण को नियंत्रित करने, स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने और जनता का विश्वास बनाए रखने में सराहनीय भूमिका निभाई। महिला नेतृत्व केवल तात्कालिक समस्याओं का समाधान नहीं करता, बल्कि दीर्घकालिक पुनर्निर्माण और सामाजिक स्थिरता पर भी ध्यान देता है। इस प्रकार, संकट की घड़ी में महिला नेतृत्व न केवल सुरक्षा और राहत प्रदान करता है, बल्कि समाज में आशा, विश्वास और पुनर्निर्माण की भावना को भी मजबूत करता है।

11. शिक्षा और महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा

महिला नेता शिक्षा के महत्व को अच्छी तरह समझती हैं और लड़कियों की शिक्षा को प्राथमिकता देती हैं। उनके नेतृत्व में शिक्षा, कौशल विकास और स्वरोजगार से संबंधित योजनाएं अधिक प्रभावी ढंग से लागू होती हैं। महिला नेतृत्व शिक्षा और महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब महिलाएं नेतृत्व के पदों पर होती हैं, तो वे शिक्षा की शक्ति को समझते हुए लड़कियों और महिलाओं की शिक्षा को प्राथमिकता देती हैं। वे न केवल शिक्षा के अवसरों को बढ़ाने के लिए कार्य करती हैं, बल्कि ऐसे वातावरण का निर्माण भी करती हैं जहाँ महिलाएं स्वतंत्र रूप से सोच सकें, निर्णय ले सकें और अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो सकें। महिला नेता बालिका शिक्षा, वयस्क साक्षरता, कौशल विकास और आत्मनिर्भरता की योजनाओं

को प्रभावशाली ढंग से लागू करती हैं, जिससे महिलाएं सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से सशक्त बनती हैं। इसके साथ ही वे लैंगिक भेदभाव, बाल विवाह, दहेज प्रथा और घरेलू हिंसा जैसे सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ भी सक्रिय भूमिका निभाती हैं। इस प्रकार महिला नेतृत्व एक ऐसे परिवर्तन की नींव रखता है जो न केवल शिक्षा को बढ़ावा देता है, बल्कि महिलाओं को अपने जीवन में आत्मनिर्भर और सशक्त बनने की दिशा में प्रेरित करता है।

सामाजिक समावेश की आवश्यकता

सामाजिक समावेश एक ऐसा सिद्धांत है जो समाज के प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान, अधिकार और अवसर देने की बात करता है चाहे वह महिला हो, विकलांग हो, अनुसूचित जाति/जनजाति से हो या आर्थिक रूप से पिछड़ा। जब महिलाओं के नेतृत्व में समावेशी नीतियाँ बनती हैं, तो सभी समुदायों की आवाज सुनी जाती है।

चुनौतियाँ

हालांकि महिला नेतृत्व और सामाजिक समावेश की दिशा में कई प्रयास हो रहे हैं, फिर भी व्यवहारिक धरातल पर कई चुनौतियाँ मौजूद हैं: महिला नेतृत्व और सामाजिक समावेश को सशक्त बनाने की दिशा में अनेक प्रयासों के बावजूद आज भी कई गंभीर चुनौतियाँ मौजूद हैं, जो महिलाओं की प्रभावी भागीदारी और समावेशी विकास में बाधा उत्पन्न करती हैं। सबसे प्रमुख चुनौती पितृसत्तात्मक सोच और सामाजिक रूढ़ियों की है, जो महिलाओं को नेतृत्व की भूमिका निभाने से हतोत्साहित करती है। ग्रामीण और वंचित वर्ग की महिलाओं में शिक्षा और जागरूकता की कमी भी नेतृत्व क्षमता के विकास में बाधक बनती है। इसके अतिरिक्त, कई बार महिलाओं को केवल प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व मिलता है, जबकि वास्तविक निर्णय उनके स्थान पर पुरुष लेते हैं। आर्थिक निर्भरता, कार्यस्थलों पर लैंगिक भेदभाव, और दोहरी जिम्मेदारियों का बोझ भी महिला नेतृत्व की राह में बड़ी चुनौतियाँ हैं। संस्थागत समर्थन, प्रशिक्षण, मेंटरशिप और संसाधनों की कमी के कारण महिलाएं नेतृत्व के अवसरों से वंचित रह जाती हैं। साथ ही, सार्वजनिक जीवन में उन्हें सुरक्षा संबंधी समस्याओं, ट्रोलिंग, और उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है, जिससे उनका आत्मविश्वास कमजोर पड़ता है। मीडिया और समाज का दृष्टिकोण भी प्रायः महिला नेताओं को उनकी क्षमताओं की बजाय उनकी व्यक्तिगत पहचान पर केंद्रित करता है। इन सभी चुनौतियों के चलते महिला नेतृत्व और सामाजिक समावेश की प्रक्रिया धीमी हो जाती है और समग्र विकास की दिशा में अपेक्षित गति नहीं मिल पाती।

महिला सशक्तिकरण और नेतृत्व विकास के सामाजिक, शैक्षिक एवं आत्म-प्रेरक आयाम

महिला नेतृत्व और सामाजिक समावेश को सशक्त बनाने के लिए सामाजिक, शैक्षिक तथा आत्म-प्रेरक उपाय अत्यंत आवश्यक हैं। ये उपाय महिलाओं के आत्मविश्वास को बढ़ाने, उनकी नेतृत्व

क्षमताओं को विकसित करने और समाज में उनकी सार्थक भागीदारी सुनिश्चित करने की दिशा में आधार प्रदान करते हैं।

सामाजिक दृष्टि से देखा जाए तो सबसे पहले आवश्यक है कि पितृसत्तात्मक सोच, लैंगिक पूर्वाग्रह और रूढ़िवादी परंपराओं को चुनौती दी जाए। समाज में लैंगिक समानता को प्रोत्साहन देने के लिए जनजागरूकता अभियान, संवाद कार्यक्रम और महिला-केंद्रित संगठनों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। इससे महिलाओं के प्रति सम्मान, स्वीकार्यता और समान अवसर की संस्कृति विकसित हो सकती है। साथ ही, ऐसा सुरक्षित और प्रेरक सामाजिक वातावरण तैयार किया जाना चाहिए, जहाँ महिलाएं बिना भय या हिचकिचाहट के अपने विचार व्यक्त कर सकें और निर्णय प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग ले सकें।

शैक्षिक दृष्टि से, बालिका शिक्षा को प्राथमिकता देना और उच्च शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना अत्यंत महत्वपूर्ण है। नेतृत्व, प्रबंधन और निर्णय-निर्माण क्षमता से जुड़े प्रशिक्षण कार्यक्रम महिलाओं को सशक्त बनाते हैं और उनके आत्म-विकास में सहायक होते हैं। विद्यालयी और उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों में लैंगिक समानता, महिला अधिकार तथा सामाजिक न्याय जैसे विषयों का समावेश विद्यार्थियों में प्रारंभ से ही समावेशी दृष्टिकोण विकसित करता है। महिला शिक्षकों और प्रशिक्षकों की संख्या बढ़ाने से सकारात्मक रोल मॉडल उपलब्ध होते हैं, जिससे नई पीढ़ी प्रेरणा प्राप्त करती है।

महिलाओं की स्वयं की भूमिका भी सशक्तिकरण की प्रक्रिया में अत्यंत निर्णायक है। उन्हें अपनी क्षमताओं पर विश्वास करना होगा, क्योंकि आत्मविश्वास ही प्रभावी नेतृत्व का मूल आधार है। समाज में प्रचलित पितृसत्तात्मक सोच और लिंग आधारित भेदभाव को तोड़ने के लिए महिलाओं को आगे आकर अपनी आवाज़ बुलंद करनी चाहिए और अन्य महिलाओं को भी साथ लेकर चलना चाहिए। शिक्षित महिला न केवल अपने जीवन को संवार सकती है, बल्कि पूरे परिवार और समुदाय के लिए प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर सकती है।

सशक्तिकरण के लिए महिलाओं को अपने अधिकारों, सरकारी योजनाओं, कानूनी प्रावधानों और सामाजिक संसाधनों की जानकारी होना आवश्यक है, ताकि वे अपने हक के लिए प्रभावी ढंग से संघर्ष कर सकें। पारिवारिक, सामाजिक और राजनीतिक सभी स्तरों पर उनकी भागीदारी सुनिश्चित होनी चाहिए। पंचायत, नगर निकाय, स्वयं सहायता समूह या महिला मंडलों के माध्यम से वे नेतृत्व की भूमिकाएँ निभाकर समाज में परिवर्तन ला सकती हैं।

इसके साथ ही, महिलाओं में आपसी सहयोग और एकजुटता की भावना को मजबूत करना भी आवश्यक है। प्रतिस्पर्धा के बजाय सहयोग का वातावरण न केवल नेतृत्व की भूमिकाओं में उनकी उपस्थिति को बढ़ाएगा, बल्कि समानता, न्याय और समावेश पर आधारित समाज की स्थापना में

भी सहायक होगा। इस प्रकार, सामाजिक, शैक्षिक और आत्म-प्रेरक सभी स्तरों पर योजनाबद्ध प्रयासों से एक सशक्त, समावेशी और न्यायसंगत समाज की नींव रखी जा सकती है।

निष्कर्ष

महिला नेतृत्व और सामाजिक समावेश केवल नारे नहीं हैं, बल्कि एक व्यवहारिक परिवर्तन की मांग करते हैं। जब महिलाएँ आगे आती हैं, तो वे अपने साथ अन्य वंचित वर्गों को भी ऊपर उठाने का प्रयास करती हैं। एक ऐसा समाज जहाँ महिला नेतृत्व को सम्मान मिले और हर वर्ग को बराबरी का अवसर मिल सके, वही समाज सशक्त, प्रगतिशील और संतुलित माना जाएगा।

हमें एकजुट होकर यह सुनिश्चित करना होगा कि समाज की हर महिला को न केवल नेतृत्व का अवसर मिले, बल्कि वह नेतृत्व समाज के हर कोने तक पहुँच सके जहाँ न्याय, समानता और समावेशन होगा।

संदर्भ

- चट्टोपाध्याय, रागिनी और डुफ़लो, एस्तर (2004). *महिला आरक्षण का सार्वजनिक सुविधाओं पर प्रभाव: भारत में एक यादृच्छिक प्रयोग से प्राप्त साक्ष्य.* आर्थिक एवं राजनीतिक साप्ताहिक।
- टाइम्स ऑफ इंडिया (2025). *पंचायत चुनाव: महिला प्रतिनिधित्व अब भी पुरुषों के प्रभाव में.* उपलब्ध: https://timesofindia.indiatimes.com
- त्रिपाठी, सीमा (2025). *पंचायत चुनावों के माध्यम से महिलाओं का सशक्तिकरण: आरक्षण के बाद की चुनौतियां और अवसर.* रिसर्चगेट।
- नांबियार, दीपा (2022). *जीवन-चक्र के दौरान पितृसत्ता से मोलभाव: केरल की महिला नेताओं के अनुभव.* इंटरनेशनल जर्नल फ़ॉर इक्विटी इन हेल्थ।
- बीमन, लेइला; डुफ़लो, एस्तर; पांडे, रोहिणी; और टोपलोवा, पेटिया (2012). *महिला नेतृत्व से लड़कियों की आकांक्षाएं और शैक्षिक उपलब्धियां बढ़ती हैं: भारत में एक नीतिगत प्रयोग.* साइंस जर्नल।
- विकिपीडिया (n.d.). *पंचायती राज व्यवस्था (भारत).* उपलब्ध: https://hi.wikipedia.org
- विकिपीडिया (n.d.). *भारत में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी.* उपलब्ध: https://hi.wikipedia.org
- विकिपीडिया (n.d.). *भारत में लैंगिक असमानता.* उपलब्ध: https: //hi.wikipedia.org

6

ग्राम विकास: संवाद, अनुभव और नीतिगत पहल - बिहार के संदर्भ में

विवेक कुमार हिन्द **विनय कुमार हिन्द**

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.77-95
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

भारत का समग्र सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास ग्रामीण क्षेत्रों के सतत उत्थान पर निर्भर है, क्योंकि देश की लगभग दो-तिहाई आबादी अब भी गांवों में निवास करती है। स्वतंत्रता के बाद ग्राम विकास को एक विशिष्ट विकासात्मक अनुशासन के रूप में स्थापित किया गया, किन्तु नीति निर्माण और कार्यान्वयन में निरंतरता एवं समावेश की कमी ने अपेक्षित परिणामों में बाधा उत्पन्न की। बिहार जैसे राज्य, जहां ऐतिहासिक रूप से सामाजिक विषमता, भूमिहीनता, निम्न कृषि उत्पादकता और व्यापक गरीबी जैसी समस्याएं रही हैं, वहां ग्रामीण विकास की प्रक्रिया बहुआयामी और जटिल रही है। पंचवर्षीय योजनाएं, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, मनरेगा और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन जैसे राष्ट्रीय कार्यक्रमों के साथ-साथ 'हर घर नल का जल', 'जीविका' और 'कुशल युवा कार्यक्रम' जैसी राज्य स्तरीय पहलें, ग्रामीण आजीविका, आधारभूत संरचना और सामाजिक समावेशन को सुदृढ़ करने की दिशा में प्रयत्नशील रही हैं। तथापि, इन योजनाओं की सफलता उनके क्रियान्वयन, निगरानी और स्थानीय समुदाय की सक्रिय भागीदारी पर निर्भर करती है। यह अध्ययन बिहार के ग्रामीण परिदृश्य में नीति और समाज के बीच सक्रिय संवाद की आवश्यकता को रेखांकित करता है, और यह निष्कर्ष निकालता है कि स्थानीय ज्ञान, सामाजिक विविधता और समुदाय की सहभागिता के बिना सतत एवं न्यायपूर्ण विकास संभव नहीं है।

मुख्य शब्द: पंचवर्षीय योजना, आजीविका, सामाजिक समावेशन, स्थानीय समुदाय, नीति कार्यान्वयन

प्रस्तावना

भारत का सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास ग्रामीण क्षेत्रों के उत्थान से गहरे रूप से संबद्ध है। देश की कुल जनसंख्या का लगभग 65.53 प्रतिशत हिस्सा अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है (भारत की जनगणना, 2011), जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि भारत के समग्र विकास की कोई भी परियोजना तब तक पूर्ण नहीं मानी जा सकती, जब तक वह ग्राम्य जीवन की गुणवत्ता में ठोस और सतत सुधार नहीं करती। स्वतंत्रता के पश्चात् देश में ग्राम विकास को एक समर्पित विकासात्मक अनुशासन के रूप में संस्थापित करने का प्रयास किया गया, किंतु उसकी कार्यान्वयन रणनीतियाँ और नीतिगत ढांचे में निरंतरता और समावेश की कमी के कारण अपेक्षित परिणामों की प्राप्ति में बाधाएँ आईं (सिंह, 2013)।

बिहार जैसे राज्य, जो ऐतिहासिक रूप से सामाजिक विषमता, भूमिहीनता, निम्न कृषि उत्पादकता, अकुशल श्रमबल, तथा व्यापक गरीबी की समस्याओं से जूझता रहा है, वहाँ ग्राम विकास की प्रक्रिया विशेष रूप से जटिल और बहुआयामी रही है। राज्य का ग्रामीण परिदृश्य न केवल भौगोलिक और आर्थिक रूप से, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से भी परिवर्तनशील और असमानताओं से युक्त रहा है।

भारत सरकार द्वारा संचालित पंचवर्षीय योजनाओं, समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, मनरेगा, और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन जैसे कार्यक्रमों ने ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका, आधारभूत ढांचे, और सामाजिक समावेशन के क्षेत्र में प्रभाव डाला है (योजना आयोग, 2008)। बिहार राज्य सरकार द्वारा लागू 'हर घर नल का जल', 'जीविका', 'कुशल युवा कार्यक्रम', और 'मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना' जैसी योजनाओं ने ग्रामीण संरचना में परिवर्तन की कोशिश की है, लेकिन इन योजनाओं की सफलता प्रायः उनके क्रियान्वयन, निगरानी और स्थानीय समुदाय की भागीदारी पर निर्भर रही है (बिहार सरकार, 2020)।

ग्राम विकास एक तकनीकी-प्रशासनिक गतिविधि मात्र नहीं है, बल्कि यह एक सामाजिक संवादात्मक प्रक्रिया है, जिसमें योजनाओं का निर्माण और कार्यान्वयन जमीनी वास्तविकताओं और अनुभवों पर आधारित होना चाहिए। इस संदर्भ में ग्रामीण संवाद एक सशक्त औजार के रूप में उभरता है, जो नीति निर्माण को लोक-आधारित, सहभागी और अधिक उत्तरदायी बनाता है (जोधका, 2002)।

इस अध्याय का उद्देश्य बिहार के ग्रामीण परिदृश्य में नीति और समाज के बीच सक्रिय अंतःक्रिया की समझ विकसित करना है। इसमें ग्राम विकास से संबंधित विभिन्न नीतिगत पहलों, उनके कार्यान्वयन से उपजे अनुभवों, और स्थानीय स्तर पर हो रहे संवादात्मक प्रयासों का विश्लेषण

प्रस्तुत किया गया है। यह अध्ययन दर्शाता है कि जब तक ग्राम विकास की योजनाओं में स्थानीय ज्ञान, सामाजिक विविधता, और समुदाय की सहभागिता को प्रमुखता नहीं दी जाती, तब तक सतत और न्यायपूर्ण विकास की कल्पना अधूरी रहेगी।

ग्राम विकास का वैचारिक परिप्रेक्ष्य

ग्राम विकास का आशय केवल आधारभूत ढाँचे के निर्माण, सड़क, बिजली, जल आपूर्ति और आवास जैसी भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता तक सीमित नहीं है। यह एक समग्र प्रक्रिया है, जो आर्थिक समृद्धि, सामाजिक न्याय, शैक्षिक जागरूकता, राजनीतिक सशक्तिकरण, तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान को सम्मिलित करती है। यह प्रक्रिया न केवल 'विकास' की पारंपरिक अवधारणाओं को पुनर्परिभाषित करती है, बल्कि राज्य और समाज के बीच संवाद की नई संभावनाएँ भी प्रस्तुत करती है।

ग्राम विकास की समकालीन अवधारणा में सहभागिता, सशक्तिकरण, सततता, और स्वराज जैसे तत्व केंद्रीय माने जाते हैं। यह दृष्टिकोण अमर्त्य सेन के "क्षमता दृष्टिकोण" के अनुरूप है, जहाँ विकास का मूल्यांकन व्यक्ति की क्षमताओं और विकल्पों के विस्तार से किया जाता है, न कि केवल आय या अवसंरचना की दृष्टि से (सेन, 1999)।

महात्मा गांधी के विचार ग्राम विकास की वैचारिक नींव प्रदान करते हैं। उनका कथन कि "भारत का भविष्य गाँवों में बसता है" (गांधी, 1938) इस अवधारणा की शक्ति और प्रासंगिकता को रेखांकित करता है। गांधीजी ने ग्राम स्वराज की परिकल्पना की थी, जहाँ प्रत्येक गाँव एक आत्मनिर्भर इकाई हो, जिसमें निर्णय लेने की क्षमता, नैतिक नेतृत्व और स्थानीय संसाधनों के प्रयोग से जीवनयापन की स्वतंत्र व्यवस्था हो। उनके लिए ग्राम विकास केवल आर्थिक प्रगति नहीं, बल्कि नैतिक और सामाजिक पुनरुत्थान का माध्यम था (पारेख, 1997)।

ग्राम विकास के आधुनिक दृष्टिकोणों में नव-विकेंद्रीकरण, स्थानीय शासन और सार्वजनिक नीति में समुदाय की भूमिका जैसे विमर्श उभरकर सामने आए हैं। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम (1992) के माध्यम से भारत में पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ, जिसने ग्रामीण क्षेत्रों में विकास और लोकतांत्रिक सहभागिता के लिए एक नई नींव रखी (मैथ्यू, 2000)। इससे स्पष्ट होता है कि ग्राम विकास एक तकनीकी नहीं, बल्कि एक राजनीतिक और सामाजिक परियोजना है, जो शक्ति के वितरण, संसाधनों के उपयोग और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में स्थानीय समुदाय को सक्रिय रूप से सम्मिलित करती है।

इसके अतिरिक्त, सामाजिक नवाचार, स्थानीय ज्ञान और लैंगिक समानता जैसे मुद्दे भी ग्राम विकास के समकालीन विमर्श में महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण करते हैं। ग्रामीण महिलाएँ, विशेष रूप से स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से, न केवल आजीविका के क्षेत्र में बल्कि स्वास्थ्य, शिक्षा और स्थानीय शासन में भी निर्णायक भूमिका निभा रही हैं (देसाई और जोशी, 2014)।

इस प्रकार, ग्राम विकास को केवल 'डिलीवरी मेकेनिज़्म' के रूप में न देखकर, एक 'जन-आधारित संवाद प्रक्रिया' के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है, जिसमें राज्य की भूमिका सहभागी संरक्षक की हो और समुदाय की भूमिका सक्रिय निर्णयकर्ता की।

बिहार में ग्राम विकास की स्थिति: एक ऐतिहासिक दृष्टि

बिहार का ग्रामीण परिदृश्य ऐतिहासिक रूप से कृषि प्रधान रहा है। यहाँ की आजीविका संरचना मुख्यतः भूमि, जल और श्रम जैसे पारंपरिक संसाधनों पर आधारित रही है। मगध और मिथिला जैसी प्राचीन सांस्कृतिक-राजनीतिक इकाइयों में कृषि, पशुपालन, और लघु कुटीर उद्योगों का गहरा योगदान रहा है (झा, 1991)। किंतु औपनिवेशिक शासनकाल में सामंती भूस्वामी व्यवस्था, स्थायी बंदोबस्त, और औपनिवेशिक कर-प्रणाली ने ग्रामीण बिहार की सामाजिक-आर्थिक संरचना को विकृत कर दिया। भूमिहीनता, जातिगत विभाजन और कर्ज़ के जाल में फंसी ग्रामीण अर्थव्यवस्था स्वतंत्रता प्राप्ति तक तीव्र असमानता और शोषण का केंद्र बनी रही (अमीन, 1988)।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत सरकार द्वारा पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से ग्राम विकास के लिए समेकित प्रयास किए गए। बिहार को भी कृषि, सिंचाई, साक्षरता और स्वास्थ्य सेवाओं की दृष्टि से प्राथमिकता सूची में रखा गया, किंतु संसाधनों की सीमित उपलब्धता, प्रशासनिक अक्षमता और राजनीतिक अस्थिरता के कारण अपेक्षित सुधार नहीं हो सके (योजना आयोग, 2002)।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारत के कुछ राज्यों विशेषतः पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में हरित क्रांति के तहत कृषि उत्पादकता में क्रांतिकारी वृद्धि हुई। किंतु बिहार इस क्रांति के लाभों से वंचित रहा। हरित क्रांति की तकनीकी आवश्यकताएँ जैसे उच्च गुणवत्ता वाले बीज, उर्वरक, सिंचाई सुविधाएँ और संस्थागत समर्थन बिहार में अनुपलब्ध थीं, जिससे राज्य में कृषि उत्पादकता स्थिर या घटती रही (फ्रैन्केल, 1971)। इसके परिणामस्वरूप राज्य में ग्रामीण बेरोजगारी, पलायन, और आजीविका संकट जैसी समस्याएँ तीव्र होती गईं।

1980 और 1990 के दशकों में ग्रामीण बिहार में गरीबी और सामंतवाद के विरुद्ध सामाजिक आंदोलनों की शुरुआत हुई। भूमिहीनों, दलितों और महिला समूहों ने विकास और न्याय की मांग को लेकर संघर्ष किया। यह चरण ग्राम विकास को केवल प्रशासनिक या तकनीकी प्रक्रिया मानने के बजाय एक सामाजिक-राजनीतिक प्रक्रिया के रूप में देखने का संकेतक था (कुमार, 2008)।

2000 के बाद के दशकों में बिहार सरकार ने ग्रामीण संरचना में सुधार हेतु कुछ उल्लेखनीय पहलें कीं जैसे *मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना, हर घर नल का जल योजना, जीविका* (बिहार ग्रामीण आजीविका परियोजना), और *कुशल युवा कार्यक्रम*। इन पहलों ने ग्राम विकास को बुनियादी सुविधाओं, सामाजिक पूँजी निर्माण, और आजीविका संवर्धन के साथ जोड़ने का प्रयास किया है (बिहार सरकार, 2020)।

इसके बावजूद, राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी बुनियादी शिक्षा, स्वास्थ्य, भूमि सुधार, और सामाजिक समावेशन की दिशा में ठोस प्रगति की आवश्यकता बनी हुई है। विशेष रूप से कृषि क्षेत्र में निवेश, तकनीकी नवाचार और जल प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में योजनागत कमी एक बड़ी चुनौती के रूप में सामने आती है।

इस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से स्पष्ट होता है कि बिहार में ग्राम विकास की प्रक्रिया कभी भी रैखिक नहीं रही। यह विकास बहुस्तरीय, असमान और सामाजिक शक्तियों के अंतर्संबंधों से प्रभावित रहा है। अतः बिहार के ग्राम विकास को समझने के लिए केवल सरकारी नीतियों का ही नहीं, बल्कि स्थानीय सामाजिक संरचनाओं, आंदोलनों और ग्रामीण समुदायों की भागीदारी का विश्लेषण भी आवश्यक है।

प्रमुख ऐतिहासिक प्रयास: कार्यक्रम, संरचनाएं और उनकी प्रभावशीलता

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भारत सरकार ने ग्रामीण क्षेत्र के समग्र विकास हेतु विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रमों की शुरुआत की। इन प्रयासों का उद्देश्य केवल आर्थिक उत्थान नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, संसाधनों तक पहुँच और स्थानीय स्वशासन की स्थापना भी था। बिहार जैसे राज्य, जहाँ ग्रामीण निर्धनता, सामाजिक असमानता और प्रशासनिक अक्षमता एक साथ मौजूद रही है, वहाँ इन कार्यक्रमों का प्रभाव मिश्रित रहा है। इस खंड में प्रमुख योजनाओं और संस्थागत पहलों का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

1. समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम: एक सीमित हस्तक्षेप 1978–79 में प्रारंभ किया गया समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले ग्रामीण परिवारों को आयवर्धक परिसंपत्तियों की आपूर्ति के उद्देश्य से लागू किया गया था। योजना के अंतर्गत स्वरोज़गार के लिए ऋण और अनुदान की व्यवस्था की गई (योजना आयोग, 1985)।

बिहार में इस योजना के कार्यान्वयन में अनेक संरचनात्मक समस्याएँ देखी गईं जैसे लक्ष्य समूहों की गलत पहचान, राजनीतिक दलालों का हस्तक्षेप, और तकनीकी मार्गदर्शन की कमी। सामाजिक रूप से वंचित समुदायों, विशेषकर अनुसूचित जातियों और महिलाओं, को योजना से अपेक्षित लाभ नहीं मिल सका। योजना की 'टॉप-डाउन' संरचना ने समुदाय की सहभागिता को सीमित कर दिया, जिससे इसकी दीर्घकालिक प्रभावशीलता बाधित हुई (राधाकृष्ण और रे, 2005)।

2. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा): आर्थिक सुरक्षा की आंशिक उपलब्धि 2005 में लागू महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम को ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक सुरक्षा और आजीविका के सुदृढ़ीकरण के लिए मील का पत्थर माना गया। यह अधिनियम प्रत्येक ग्रामीण परिवार को वर्ष में न्यूनतम 100 दिनों का मज़दूरी-आधारित कार्य प्रदान करने की गारंटी देता है।

बिहार जैसे राज्य में, जहाँ कृषि ऋतु आधारित होती है और बेरोज़गारी व्यापक है, वहाँ मनरेगा ने एक अंतरिम राहत अवश्य प्रदान की है। रिपोर्टों के अनुसार, इसके माध्यम से लाखों परिवारों को अकुशल श्रम के माध्यम से रोजगार मिला (ग्रामीण विकास मंत्रालय, 2020)।

हालाँकि, इस योजना के प्रभावशील क्रियान्वयन में कई बाधाएँ देखी गईं जैसे कार्य की अस्थायी प्रकृति, समय पर भुगतान में देरी, कार्यस्थलों पर निगरानी की कमी, और भ्रष्टाचार। फिर भी, यह अधिनियम ग्रामीण क्षेत्र में न्यूनतम आय सुरक्षा और सामाजिक समावेशन की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण पहल माना जाता है (ड्रेज़ और खेरा, 2009)।

3. पंचायती राज और स्वराज अभियान: विकेंद्रीकरण की संस्थागत पहल

73वें संविधान संशोधन अधिनियम (1992) के तहत पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता मिलने से ग्रामीण विकास की दिशा में विकेंद्रीकरण को कानूनी आधार प्राप्त हुआ। इस प्रणाली ने निर्णय लेने की प्रक्रिया में स्थानीय सहभागिता, पारदर्शिता और जवाबदेही को सशक्त किया (मैथ्यू, 2000)।

बिहार में पंचायती राज व्यवस्था का औपचारिक रूप से पुनरुद्धार वर्ष 2001 में हुआ, जब पंचायत चुनावों के माध्यम से ग्राम स्तर पर चुनी हुई सरकारें स्थापित की गईं। महिलाओं और अनुसूचित जातियों को आरक्षण के माध्यम से प्रतिनिधित्व मिला, जिससे लोकतांत्रिक सहभागिता का दायरा विस्तृत हुआ।

इसके साथ ही, बिहार सरकार ने *मुख्यमंत्री स्वराज अभियान* के माध्यम से ग्राम पंचायतों को आर्थिक सशक्तिकरण और योजना निर्माण में अधिक स्वायत्तता प्रदान करने का प्रयास किया। ग्राम सभाओं की भूमिका, योजना चयन और निगरानी में सक्रिय भागीदारी की कल्पना की गई थी।

हालाँकि जमीनी स्तर पर इन प्रयासों की प्रभावशीलता कई कारकों जैसे राजनीतिक प्रभुत्व, प्रशासनिक प्रशिक्षण की कमी, और संसाधनों की सीमितता से प्रभावित रही है। फिर भी, विकेंद्रीकरण ने ग्रामीण विकास के विमर्श को 'जन के हाथों में सत्ता' की दिशा में उन्मुख किया है (ओमन, 2005)।

इन तीनों ऐतिहासिक प्रयासों समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, मनरेगा और पंचायती राज ने बिहार में ग्राम विकास की बहुआयामी आवश्यकताओं को संबोधित करने का प्रयास किया है। यद्यपि इन योजनाओं की क्रियान्वयन प्रक्रिया में कई व्यावहारिक कठिनाइयाँ रहीं, फिर भी इनसे प्राप्त अनुभवों ने विकास नीतियों के पुनर्निर्धारण, लक्षित हस्तक्षेपों और सामाजिक न्याय के दायरे को विस्तृत करने में योगदान दिया है।

ग्रामीण संवाद और भागीदारी की भूमिका: बिहार में लोकतांत्रिक सशक्तिकरण की प्रक्रियाएँ

ग्राम विकास की प्रक्रिया केवल योजनाओं और वित्तीय निवेश तक सीमित नहीं है, बल्कि यह स्थानीय समुदायों की सक्रिय भागीदारी, संवादात्मक अभिव्यक्ति और निर्णय-निर्धारण की समान हिस्सेदारी पर आधारित होती है। बिहार के ग्राम समाज में, विशेषकर पिछड़े एवं वंचित समुदायों के संदर्भ में, यह भागीदारी ऐतिहासिक रूप से सीमित रही है। योजनाएँ प्रायः उपर से नीचे पद्धति में बनती रहीं, जिससे ज़मीनी ज़रूरतें और नीति के लक्ष्यों के बीच अंतराल बना रहा (झा और माथुर, 1999)।

हालांकि, 21वीं सदी में विकेन्द्रीकरण, महिला सशक्तिकरण, डिजिटल नवाचार और सामाजिक अंकेक्षण जैसे प्रयासों ने ग्रामीण संवाद को नया आयाम देने का कार्य किया है। यह खंड बिहार के विभिन्न जिलों से चयनित अनुभवों के आधार पर यह दर्शाता है कि किस प्रकार सहभागी मंचों ने ग्राम विकास की धारा को प्रभावित किया है।

1. महिला स्वयं सहायता समूहों की पहल: स्वच्छता और जल संरक्षण में नेतृत्व

नालंदा और मुजफ्फरपुर जिलों में महिला स्वयं सहायता समूहों ने जल-संरक्षण और स्वच्छता अभियानों में सक्रिय भूमिका निभाई है। *राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन* के अंतर्गत गठित इन समूहों ने समुदायिक जल स्रोतों की मरम्मत, वर्षा जल संचयन इकाइयों की स्थापना तथा स्वच्छता शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है (ग्रामीण विकास मंत्रालय, 2020)।

विशेष रूप से नालंदा के बिंद प्रखंड में महिलाओं द्वारा संचालित 'जल-नारी' अभियान ने ग्रामीण घरों में पीने योग्य जल की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु पंचायत को जागरूक किया। इस प्रयास में महिलाओं ने न केवल संवाद की पहल की, बल्कि योजना चयन और निगरानी में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई (नाबार्ड, 2021)। यह परिघटना गांधीवादी *अंत्योदय* के सिद्धांत को यथार्थ के धरातल पर लागू करने का प्रयास मानी जा सकती है।

2. डिजिटल नवाचार: युवाओं द्वारा ग्राम सूचना केंद्रों की स्थापना

बिहार के सारण और गया जिलों में युवाओं ने सूचना तक पहुँच सुनिश्चित करने हेतु डिजिटल ग्राम सूचना केंद्रों की स्थापना की है। इन केंद्रों के माध्यम से ग्रामीणों को शासकीय योजनाओं की जानकारी, किसान पोर्टल पर पंजीकरण, और ऑनलाइन आवेदन की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जा रही हैं।

गया के डोभी प्रखंड में एक युवा समूह द्वारा संचालित केंद्र 'ग्राम टेक कनेक्ट' ने स्थानीय लोगों को मनरेगा कार्य सूची, राशन कार्ड अद्यतन, तथा आयुष्मान भारत जैसी योजनाओं से जोड़ने का कार्य किया है। यह प्रयास सूचना के विकेन्द्रीकरण और डिजिटल समावेशन की दिशा में मील का पत्थर है (मेहता और अली, 2022)।

इस प्रकार के प्रयास *अमर्त्य सेन* के "क्षमता दृष्टिकोण" की पुष्टि करते हैं, जहाँ व्यक्ति की क्षमता और स्वतंत्रता सामाजिक विकास की कुंजी मानी जाती है।

3. सामुदायिक निगरानी: सार्वजनिक वितरण प्रणाली में पारदर्शिता का निर्माण

अररिया जिले में सामुदायिक निगरानी तंत्र के अंतर्गत ग्रामवासियों ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) में व्याप्त भ्रष्टाचार और अनियमितताओं के विरुद्ध सशक्त अभियान चलाया।

'राशन संवाद मंच' नामक पहल के अंतर्गत ग्रामीणों ने साप्ताहिक बैठकें आयोजित कर दुकानदारों के साथ प्रत्यक्ष संवाद प्रारंभ किया। साथ ही, ट्रांज़ैक्शन रजिस्टर और डिजिटल सूचना बोर्ड के माध्यम से पारदर्शिता सुनिश्चित की गई। यह पहल सूचना का अधिकार अधिनियम के लोकशक्ति सिद्धांत के व्यावहारिक उपयोग का उदाहरण प्रस्तुत करती है (प्रिया, 2018)।

इस निगरानी प्रणाली ने 'सामाजिक अंकेक्षण' की अवधारणा को विस्तार देते हुए स्थानीय लोकतंत्र की पुनर्संरचना की दिशा में एक प्रभावी उदाहरण प्रस्तुत किया है।

बिहार के ग्रामीण समाज में संवाद और भागीदारी की ये पहलें यह दर्शाती हैं कि जब समुदाय को निर्णय प्रक्रिया में अधिकार और मंच दोनों मिलते हैं, तो ग्राम विकास अधिक समावेशी, न्यायसंगत और टिकाऊ बनता है। इन प्रयासों से यह स्पष्ट होता है कि केवल योजनाओं की घोषणा पर्याप्त नहीं है, बल्कि उनका *सामाजिक स्वामित्व* स्थापित करना आवश्यक है।

महिलाओं, युवाओं और वंचित समुदायों की भागीदारी ने विकास को *विकेंद्रीकृत लोकतंत्र* की दिशा में अग्रसर किया है। फिर भी, इन पहलों को व्यापक बनाने हेतु संस्थागत समर्थन, प्रशासनिक क्षमता निर्माण और सतत वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता बनी रहती है (राव और सान्याल, 2010)।

नीतिगत पहलें और उनकी चुनौतियाँ: बिहार में ग्राम विकास की वर्तमान स्थिति

ग्राम विकास की प्रक्रिया को प्रभावी रूप से आगे बढ़ाने के लिए बिहार सरकार एवं भारत सरकार ने अनेक योजनाओं का शुभारंभ किया है, जिनका उद्देश्य बुनियादी ढाँचे के विकास, मानव संसाधन सशक्तिकरण, स्वच्छता, डिजिटल समावेशन, और वित्तीय समावेश को बढ़ावा देना रहा है। इन योजनाओं में बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाया गया है जो आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया को भी समाहित करता है। तथापि, इन पहलों के कार्यान्वयन में अनेक संरचनात्मक, प्रशासनिक और सामाजिक बाधाएँ भी दृष्टिगोचर होती हैं।

प्रमुख नीतिगत पहलें: उद्देश्य और प्रभाव

1. हर घर नल का जल (बिहार नल जल योजना)

मुख्यमंत्री नल-जल योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के प्रत्येक घर में स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति सुनिश्चित करना है। यह योजना *सात निश्चय कार्यक्रम* (2016) का प्रमुख अंग रही है, जिसे स्थानीय पंचायतों के माध्यम से लागू किया जा रहा है। 2022 तक इस योजना के तहत बिहार के 1.2 करोड़ से अधिक परिवारों को लाभ प्राप्त हुआ (बिहार लोक स्वास्थ्य अभियंत्रण विभाग, 2022)।

फिर भी, कई स्थानों पर जल गुणवत्ता, संचालन में भ्रष्टाचार, तथा रखरखाव की कमी जैसी समस्याएँ उभर कर आई हैं (नीति अनुसंधान केंद्र, 2021)।

2. हर घर शौचालय योजना (स्वच्छ भारत अभियान - ग्रामीण)

इस योजना के अंतर्गत खुले में शौच से मुक्ति (ODF) का लक्ष्य रखा गया। बिहार में 2020 तक लगभग 1.65 करोड़ से अधिक शौचालयों का निर्माण हुआ (जल शक्ति मंत्रालय, 2021)।

यद्यपि आंकड़ों के अनुसार ODF स्थिति प्राप्त की गई है, परंतु व्यवहारिक स्तर पर शौचालयों का उपयोग, जल की उपलब्धता, तथा सांस्कृतिक बदलाव की चुनौतियाँ बनी हुई हैं (यूनिसेफ और राइस संस्थान, 2020)।

3. कुशल युवा कार्यक्रम

बिहार सरकार का यह कार्यक्रम युवाओं को डिजिटल साक्षरता, संप्रेषण कौशल और जीवन प्रबंधन प्रशिक्षण प्रदान करता है। *बिहार कौशल विकास मिशन* के अंतर्गत संचालित यह योजना ग्रामीण युवाओं को रोज़गार के लिए तैयार करने का प्रयास है।

अब तक 12 लाख से अधिक युवाओं को प्रशिक्षण दिया गया है, परंतु इन प्रशिक्षित युवाओं को रोज़गार से जोड़ने की प्रक्रिया अभी भी धीमी है और बाज़ार से जोड़ने की रणनीति स्पष्ट नहीं है (*बिहार कौशल विकास मिशन* वार्षिक रिपोर्ट, 2023)।

4. जीविका योजना

बिहार ग्रामीण आजीविका परियोजना के अंतर्गत आरंभ की गई इस योजना ने महिला स्वयं सहायता समूहों को वित्तीय सहायता, कौशल विकास और उद्यमिता में सहयोग दिया है। अब तक 10 लाख से अधिक महिला समूहों का गठन किया जा चुका है (विश्व बैंक, 2022)।

जीविका मॉडल ने महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में प्रभावी भूमिका निभाई है, परंतु ग्रामीण बाज़ारों से जुड़ाव, उत्पादों की विपणन क्षमता और स्वयं सहायता समूह नेटवर्क के भीतर निर्णय-निर्माण में असमानता जैसी समस्याएं बनी हुई हैं (देसाई और जोशी, 2021)।

5. मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना

इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण सड़कों के माध्यम से अविकसित गाँवों को मुख्यधारा से जोड़ना है। यह योजना केंद्र की *प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना* की पूरक है। 2021 तक बिहार में 1.6 लाख किमी से अधिक ग्रामीण सड़कों का निर्माण हुआ (ग्रामीण विकास मंत्रालय, 2022)।

हालाँकि, मानसूनी क्षरण, रखरखाव की कमी, और भ्रष्टाचार के मामलों ने इसकी स्थिरता और दीर्घकालिक प्रभावशीलता को प्रभावित किया है।

प्रमुख चुनौतियाँ

इन नीतियों के बावजूद, बिहार के ग्रामीण विकास मार्ग में अनेक बाधाएँ मौजूद हैं:

- संस्थागत क्षमता की कमी: पंचायतों और ग्राम स्तर पर योजनाओं के कार्यान्वयन हेतु तकनीकी और मानव संसाधनों का अभाव विकास की गति को सीमित करता है (मैथ्यू, 2019)।
- भ्रष्टाचार और राजनीतिक हस्तक्षेप: विशेष रूप से नल-जल और सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) जैसी योजनाओं में स्थानीय स्तर पर भ्रष्टाचार की शिकायतें व्यापक हैं।
- सामाजिक विषमता और जातीय बाधाएँ: कई योजनाओं का लाभ ऊँची जातियों या प्रभुत्वशाली वर्गों तक ही सीमित रह जाता है, जिससे वंचित समुदायों की भागीदारी बाधित होती है (जोधका, 2014)।
- प्रभावी निगरानी तंत्र का अभाव: योजनाओं की निगरानी और सामाजिक अंकेक्षण की व्यवस्था अभी पर्याप्त रूप से संस्थागत नहीं हो पाई है।

बिहार के ग्राम विकास हेतु शुरू की गई नीतियाँ निश्चित ही ग्रामीण अवसंरचना, पेयजल, स्वच्छता और महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण पहल साबित हुई हैं। परंतु, इनकी दीर्घकालिक सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि क्या स्थानीय प्रशासन, नागरिक समाज और पंचायत संस्थाएँ मिलकर समावेशी, पारदर्शी और टिकाऊ विकास का ढाँचा निर्मित कर पाते हैं या नहीं।

ग्राम विकास को केवल एक *प्रोजेक्ट-बेस्ड* अप्रोच के रूप में न लेकर, इसे सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिक सशक्तिकरण के रूप में देखा जाना चाहिए। योजनाओं को केवल लागू करना पर्याप्त नहीं, बल्कि समुदाय की स्वायत्तता, संवाद और हिस्सेदारी को सुनिश्चित करना ही बिहार जैसे राज्य के लिए यथार्थ विकास का मार्ग प्रशस्त करेगा।

प्रमुख चुनौतियाँ: बिहार में ग्राम विकास की संरचनात्मक बाधाएँ

बिहार में ग्रामीण विकास की दिशा में अनेक योजनाएँ लागू की गई हैं, किन्तु उनके प्रभावी क्रियान्वयन में कई बाधाएँ सामने आती रही हैं। ये चुनौतियाँ केवल प्रशासनिक नहीं हैं, बल्कि वे गहरे राजनीतिक, सामाजिक और संस्थागत ढाँचे से भी जुड़ी हुई हैं। नीचे प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण किया गया है:

1. योजनाओं का राजनीति-केंद्रित कार्यान्वयन

ग्रामीण विकास योजनाएँ अक्सर सत्तारूढ़ दलों के राजनीतिक हितों से प्रभावित होती रही हैं। योजनाओं का चयन, संसाधनों का वितरण और लाभार्थियों की सूची में राजनीतिक पक्षपात की प्रवृत्ति देखी जाती है। इससे न केवल वंचित समुदायों की उपेक्षा होती है, बल्कि विकास की प्रक्रिया में असमानता और असंतोष भी उत्पन्न होता है (कुमार, 2015)। उदाहरण स्वरूप, पंचायत चुनावों के निकट नल-जल जैसी योजनाओं को तेज़ी से लागू करना राजनीतिक लाभ अर्जित करने की रणनीति के रूप में देखा गया है (नीति अनुसंधान केंद्र, 2021)।

2. भ्रष्टाचार और धन का दुरुपयोग

ग्राम विकास योजनाओं में भ्रष्टाचार एक स्थायी और गम्भीर समस्या बनी हुई है। अनेक रिपोर्टों में यह दर्शाया गया है कि योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायत प्रतिनिधियों, ठेकेदारों और विभागीय अधिकारियों के बीच मिलकर फर्जी बिलिंग, कार्य में अनियमितता, और सामग्री की गुणवत्ता में समझौता किया गया (ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल इंडिया, 2020)। उदाहरण के लिए, *मनरेगा* के अंतर्गत कई स्थानों पर बिना कार्य किए भुगतान की शिकायतें सामने आई हैं, जिससे योजना की विश्वसनीयता प्रभावित हुई है (नरेगा वॉच, 2021)।

3. पंचायत प्रतिनिधियों की प्रशिक्षण और क्षमता की कमी

ग्राम विकास की योजनाओं को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए पंचायत प्रतिनिधियों में प्रशासनिक दक्षता, वित्तीय प्रबंधन, और तकनीकी समझ आवश्यक है। बिहार के अनेक पंचायत प्रतिनिधियों को न तो योजना निर्माण का पर्याप्त ज्ञान होता है और न ही बजट का पारदर्शी प्रबंधन करने की क्षमता। इससे योजनाओं का क्रियान्वयन अव्यवस्थित और अपारदर्शी हो जाता है (मैथ्यू, 2019)।

हालाँकि जीविका समूहों और पंचायतों के बीच समन्वय की पहल की गई है, लेकिन दोनों के बीच भूमिकाओं की अस्पष्टता और सूचना के अभाव के कारण समुचित सामंजस्य नहीं बन पाया है।

4. निगरानी तंत्र की कमजोरी

योजनाओं के निष्पक्ष और पारदर्शी क्रियान्वयन के लिए प्रभावी निगरानी और सामाजिक अंकेक्षण आवश्यक है। यद्यपि कई योजनाओं में सोशल ऑडिट को शामिल किया गया है, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी संस्थागत रूप से कोई मज़बूत व्यवस्था नहीं बन पाई है।

ग्राम सभाएँ, जो कि निगरानी का प्रमुख मंच हैं, अक्सर औपचारिक बनकर रह जाती हैं। न ही ग्रामीण जनता को योजनाओं के तकनीकी विवरण की जानकारी होती है, और न ही वे प्रभावी सवाल पूछने की स्थिति में होते हैं (देसाई, 2020)।

नालंदा और मधुबनी जिलों में किए गए फील्ड अध्ययन बताते हैं कि अधिकांश योजनाएँ 'डॉक्युमेंट-केंद्रित' बनी रहती हैं और उनका मूल्यांकन वास्तविक जन-सरोकारों के आधार पर नहीं किया जाता।

ग्राम विकास के लिए चलाई जा रही योजनाओं को वास्तविक सफलता तब मिलेगी जब उपर्युक्त बाधाओं को सघन रूप से संबोधित किया जाए। बिहार जैसे राज्य में, जहाँ सामाजिक संरचना बहुस्तरीय और जातिगत प्रभुत्व वाली है, वहाँ योजनाओं की निष्पक्षता, पारदर्शिता और सहभागी निगरानी प्रणाली को मज़बूत करना अनिवार्य है।

विकास के लिए केवल धन आवंटन पर्याप्त नहीं है, बल्कि संस्थागत विश्वसनीयता, प्रशासनिक उत्तरदायित्व और समुदाय की स्वायत्तता को भी सुनिश्चित करना होगा।

समाजशास्त्रीय और राजनीतिक विश्लेषण: बिहार में ग्राम विकास की सामाजिक संरचना

ग्राम विकास की प्रक्रिया केवल आर्थिक या तकनीकी हस्तक्षेपों तक सीमित नहीं होती; यह समाजशास्त्रीय ढाँचे, शक्ति-संबंधों और राजनीतिक भागीदारी के गहन विमर्श से भी जुड़ी होती है। बिहार का ग्रामीण समाज ऐतिहासिक रूप से जातिगत वर्चस्व, भूमि स्वामित्व में असमानता, लैंगिक भेदभाव, और निम्न वर्गों के सीमित सामाजिक गतिशीलता जैसे कारकों से प्रभावित रहा है (जोधका, 2012)। इसलिए ग्राम विकास की नीतियों और पहलों को इन संरचनात्मक यथार्थों के आलोक में समझना आवश्यक है।

जातिगत संरचना और सामाजिक विभाजन

बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में जाति एक केंद्रीय सामाजिक तत्व है, जो संसाधनों के वितरण, निर्णय-प्रक्रियाओं, और विकासात्मक अवसरों को निर्धारित करता है। उच्च जातियों के प्रभुत्व वाले गाँवों में योजनाओं की प्राथमिकता और क्रियान्वयन इसी शक्ति-संतुलन पर निर्भर करती है।

आंद्रे बेतेइले (1996) के अनुसार, भारतीय ग्रामीण समाज में 'समानता की आकांक्षा' और 'संरचनात्मक विषमता' के बीच गहरा द्वंद्व होता है, जो विकास योजनाओं के परिणामों को प्रभावित

करता है। बिहार के कई जिलों जैसे गया, भोजपुर और रोहतास में अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को योजनाओं की जानकारी से वंचित रखा गया या उनकी भागीदारी केवल औपचारिक बनी रही (कुमार और सिंह, 2020)।

पंचायती राज और सामाजिक प्रतिनिधित्व

1992 के 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के तहत पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा मिलने के बाद ग्रामीण शासन प्रणाली में विकेंद्रीकरण और सहभागिता की नई संभावनाएँ उभरीं। बिहार में पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और महिलाओं के लिए आरक्षण ने नेतृत्व संरचना में उल्लेखनीय बदलाव लाए हैं।

महिलाओं के लिए 50% आरक्षण (2006 के बाद) एक ऐतिहासिक पहल रही है, जिससे ग्राम पंचायतों में महिला नेतृत्व उभरा है। किंतु नेतृत्व की वास्तविकता 'प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व' से भी प्रभावित है, जहाँ महिला प्रतिनिधियों के स्थान पर उनके पति या अन्य पुरुष रिश्तेदार निर्णय लेते हैं (सिंह, 2018)।

वहीं, पिछड़े वर्गों से आने वाले निर्वाचित पंच और मुखिया प्रशासनिक प्रक्रियाओं, बजट निर्माण, और विभागीय समन्वय में अपेक्षित प्रशिक्षण और समर्थन के अभाव में सीमित प्रभाव डाल पाते हैं। इस प्रकार, सशक्तिकरण की प्रक्रिया अधूरी रह जाती है।

लैंगिक असमानता और विकास

ग्राम विकास के सन्दर्भ में *लैंगिक दृष्टिकोण* विशेष महत्त्व रखता है। महिलाओं की श्रम भागीदारी, स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच, स्वच्छता सुविधाएँ, और सामाजिक निर्णयों में भागीदारी अब भी असमान बनी हुई है। जीविका जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से महिला स्वयं सहायता समूहों ने सामाजिक परिवर्तन की दिशा में कार्य किया है, लेकिन निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया में उनकी वास्तविक आवाज़ अब भी सीमित है (देशपांडे, 2015)।

नालंदा और पूर्णिया जिलों के अध्ययन दर्शाते हैं कि जहाँ महिलाएँ संगठित हैं और सामुदायिक संवाद में भाग लेती हैं, वहाँ योजनाओं की पारदर्शिता और क्रियान्वयन में उल्लेखनीय सुधार होता है।

सामंती प्रवृत्तियाँ और सत्ता-संबंध

बिहार के कई ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी सामंती प्रवृत्तियाँ प्रभावी हैं, जहाँ ज़मींदारी संबंधों की छाया पंचायत और प्रशासनिक संरचनाओं पर भी दिखती है। जाति और भूमि स्वामित्व के बीच संबंध ग्राम विकास के संसाधनों के वितरण को प्रभावित करते हैं। योजनाओं के लाभार्थी चयन में

भेदभाव, और शिकायत निवारण तंत्र की निष्क्रियता ऐसे ही शक्ति-संबंधों का प्रतिबिंब हैं (शर्मा, 2019)।

ग्राम विकास की सामाजिक न्यायपूर्ण कल्पना तभी साकार हो सकती है, जब नीतियों का निर्माण केवल ऊपर से नीचे की बजाय समुदाय-आधारित, सहभागितामूलक और समावेशी तरीके से हो। बिहार में सामाजिक असमानता, जातिगत संरचना, और लैंगिक भेदभाव को दूर करने के लिए योजनाओं में 'सामाजिक उत्तरदायित्व' और 'सशक्तिकरण की संवेदनशीलता' को केंद्र में रखना होगा।

नवीन नेतृत्व, जैसे कि महिला प्रतिनिधि और युवा पंचायत सदस्य, यदि तकनीकी प्रशिक्षण और सामाजिक समर्थन से युक्त हों, तो ग्राम विकास की प्रक्रिया में लोकतांत्रिक और न्यायपूर्ण परिवर्तन संभव हो सकता है।

सुझाव और भविष्य की दिशा

बिहार के ग्राम विकास परिदृश्य को सुदृढ़ और न्यायसंगत बनाने के लिए बहुस्तरीय और सहभागितामूलक रणनीति की आवश्यकता है। वर्तमान में चल रही नीतिगत पहलों के साथ-साथ जमीनी यथार्थ, सामाजिक संरचना, और तकनीकी नवाचार को एकीकृत करते हुए आगे की दिशा तय की जानी चाहिए। निम्नलिखित सुझाव इस संदर्भ में विशेष रूप से प्रासंगिक हैं:

1. समावेशी नीति निर्माण की आवश्यकता

ग्राम विकास से संबंधित योजनाओं में अभी तक 'टॉप-डाउन' दृष्टिकोण की प्रधानता रही है, जिससे स्थानीय आवश्यकताएँ और वास्तविकताएँ अक्सर नीति से असंगत हो जाती हैं। अतः यह आवश्यक है कि नीति निर्माण की प्रक्रिया में ग्रामवासियों की प्राथमिकताओं, अनुभवों और स्थानीय ज्ञान को प्रतिबिंबित किया जाए।

जैसा कि अमर्त्य सेन (सेन, 1999) ने अपने 'क्षमता दृष्टिकोण' में कहा है, विकास का सही मापदंड लोगों की जीवन क्षमताओं में विस्तार है, न कि मात्र संसाधनों का वितरण। इसी दृष्टिकोण से योजनाओं की संरचना करनी चाहिए, जो स्थानीय सामाजिक संदर्भों को ध्यान में रखती हो।

2. स्थानीय संस्थाओं का सशक्तिकरण

ग्राम पंचायतें, महिला स्वयं सहायता समूह, और किसान उत्पादक संगठन जैसे संस्थान यदि तकनीकी, वित्तीय और प्रशासनिक प्रशिक्षण से सुसज्जित किए जाएँ, तो वे विकास योजनाओं के सशक्त वाहक बन सकते हैं।

प्रशिक्षण कार्यक्रमों में केवल दस्तावेजी प्रबंधन या योजना निर्माण ही नहीं, बल्कि सामाजिक संवाद, नेतृत्व विकास, और डिजिटल साक्षरता पर भी बल देना चाहिए (विश्व बैंक, 2018)।

वित्तीय सशक्तिकरण हेतु *सामुदायिक निवेश निधि* और माइक्रो क्रेडिट सुविधाओं का विस्तार स्वयं सहायता समूहों और एफपीओ के लिए किया जा सकता है, जिससे वे आत्मनिर्भर आर्थिक इकाइयों के रूप में विकसित हों।

3. जन संवाद का संस्थानीकरण

ग्राम सभा का उद्देश्य केवल योजनाओं की स्वीकृति नहीं बल्कि सार्वजनिक संवाद और पारदर्शिता को सुनिश्चित करना है। किंतु व्यावहारिक रूप से कई गाँवों में ये सभाएँ औपचारिक और निष्क्रिय रह जाती हैं।

इन संस्थाओं को पुनर्जीवित करने के लिए—

- ग्राम सभा की नियमित बैठक सुनिश्चित करना
- बैठक का व्यापक प्रचार-प्रसार
- भागीदारी की न्यूनतम सीमा निर्धारित करना
- सामाजिक अंकेक्षण की अनिवार्यता

जैसे उपायों की आवश्यकता है। इससे नागरिक सहभागिता बढ़ेगी और प्रशासनिक उत्तरदायित्व भी सुनिश्चित होगा (झा एवं अन्य, 2017)।

4. प्रौद्योगिकी का समुचित उपयोग

डिजिटल क्रांति के युग में सूचना और प्रौद्योगिकी का उपयोग ग्राम विकास को दक्ष, पारदर्शी और उत्तरदायी बना सकता है। बिहार के अनेक जिलों में ई-गवर्नेंस, मोबाइल आधारित सूचना प्रणाली, और GPS आधारित निगरानी प्रणालियाँ प्रारंभ की गई हैं, किंतु इनकी पहुँच और प्रभाव सीमित रहा है।

ई-ग्राम स्वराज, डिजिफार्म, किसान कॉल सेंटर, और डिजिटल हेल्थ रिकॉर्ड जैसी पहलों को सशक्त बनाकर ग्रामीण विकास के सभी आयामों में तकनीक को एकीकृत किया जा सकता है (एमईआईटीवाई, 2021)।

इसमें स्थानीय भाषाओं में मोबाइल एप, डिजिटल सेवा केंद्रों की स्थापना, और डिजिटल साक्षरता अभियान विशेष रूप से प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं।

बिहार में ग्राम विकास की प्रक्रिया सामाजिक विषमताओं, संस्थागत कमजोरियों और नीतिगत असंगतियों से जूझती रही है। अब आवश्यकता है कि ग्राम विकास को केवल योजनाओं के क्रियान्वयन की प्रक्रिया न मानकर, एक *सामाजिक परिवर्तन परियोजना* के रूप में देखा जाए।

यह तभी संभव होगा जब विकास नीति—

- स्थानीय सहभागिता आधारित हो
- संस्थानों को सशक्त करे
- संवाद को लोकतांत्रिक बनाए, और
- नवप्रवर्तनशील तकनीक से जुड़ी हो।

इस समन्वित दृष्टिकोण के माध्यम से ही बिहार के ग्रामीण समाज में समता, सशक्तिकरण और सतत विकास की संभावना को साकार किया जा सकता है।

निष्कर्ष

बिहार में ग्राम विकास एक जटिल सामाजिक-राजनीतिक प्रक्रिया रही है, जिसमें नीतिगत प्रयोग, प्रशासनिक हस्तक्षेप एवं जन भागीदारी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यह प्रक्रिया केवल योजनाओं या बजट आवंटन से नहीं, बल्कि ग्रामवासियों के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन से मापी जाती है। मनरेगा, जीविका, हर घर नल का जल और पंचायती राज सशक्तिकरण जैसी योजनाओं ने विकास के अनेक आयाम खोले हैं, पर उनकी सफलता तभी संभव है जब समुदाय स्वयं उन्हें अपनी आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं के अनुरूप अपनाए। महात्मा गांधी का "ग्राम स्वराज" का विचार आज भी इस दिशा का मार्गदर्शक है। स्थायित्व, सामाजिक समावेशन और संवादात्मक लोकतंत्र ग्राम विकास की प्रमुख धुरी हैं। बिहार जैसे राज्य में, जहाँ जातीय असमानता एवं लैंगिक विभाजन मौजूद हैं, विकास को सामाजिक न्याय से जोड़ना आवश्यक है। नीतिगत स्थिरता, स्थानीय सशक्तिकरण तथा सहभागी दृष्टिकोण से ही ग्राम विकास एक सतत सामाजिक परियोजना बन सकता है।

संदर्भ

- अमीन, एस. (1988). *घटना, रूपक, स्मृति: चौरी चौरा, 1922–1992.* बर्कले: कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस।
- बेतेइल, ए. (1996). *जाति, वर्ग और सत्ता: तंजावुर गाँव में स्तरीकरण के बदलते पैटर्न.* नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।

- बिहार लोक स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग. (2022). *वार्षिक प्रतिवेदन 2021–22.* पटना: बिहार सरकार।
- बिहार कौशल विकास मिशन.(2023). *वार्षिक प्रदर्शन प्रतिवेदन.* पटना: बिहार सरकार।
- नीति अनुसंधान केंद्र.(2021). *बिहार की नल-जल योजना का मूल्यांकन.* नई दिल्ली: नीति अनुसंधान केंद्र।
- नीति अनुसंधान केंद्र. (2021). *बिहार की ग्रामीण योजनाओं में शासन और जवाबदेही.* नई दिल्ली: नीति अनुसंधान केंद्र।
- भारत की जनगणना. (2011). *प्राथमिक जनगणना सारांश.* नई दिल्ली: भारत के महानिबंधक।
- देसाई, आर. (2020). सामाजिक लेखा परीक्षण और ग्रामीण बिहार में नागरिक भागीदारी, *भारतीय लोक प्रशासन पत्रिका,* 66(3), 285–302।
- देसाई, आर. और जोशी, एस. (2014). *सामूहिक कार्रवाई और महिला सशक्तिकरण: भारत में स्वयं सहायता समूह.* वाशिंगटन डी.सी.: विश्व बैंक।
- देसाई, आर. और जोशी, एस. (2021). बिहार में आजीविका और सशक्तिकरण: स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से एक समीक्षा, *भारतीय विकास अध्ययन पत्रिका,* 45(3), 34–52।
- देशपांडे, ए. (2015). बिहार में महिला सशक्तिकरण और जमीनी विकास। *जेंडर एंड डेवलपमेंट स्टडीज़,* 11(1), 34–51।
- द्रेज़े, जे. एवं खेड़ा, आर. (2009). *रोजगार गारंटी की लड़ाई.* नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, ज्यां द्रेज
- द्रेज़े, जे. और खेड़ा, आर. (2017). भारत में हाल की सामाजिक सुरक्षा पहलें, *आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक,* 52(4), 45–55, ज्यां द्रेज
- फ्रेंकल, एफ. आर. (1971). *भारत की हरित क्रांति: आर्थिक लाभ और राजनीतिक लागत.* प्रिंसटन: प्रिंसटन विश्वविद्यालय प्रेस।

- गांधी, एम. के. (1938). *हिन्द स्वराज और अन्य लेखन.* अहमदाबाद: नवजीवन प्रकाशन गृह।
- बिहार सरकार (2020). *ग्रामीण विकास विभाग की वार्षिक प्रतिवेदन.* पटना: सरकारी प्रेस।
- बिहार सरकार (2022). *ग्रामीण विकास पर वार्षिक प्रतिवेदन.* पटना: ग्रामीण विकास विभाग।
- झा, डी. (1991). बिहार की ग्रामीण अर्थव्यवस्था: अतीत और वर्तमान, *आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक,* 26(13), A19–A25।
- झा, एस. और माथुर, के. (1999). विकेंद्रीकरण और स्थानीय राजनीति, *आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक,* 34(51), 3575–3580।
- झा, एस. माथुर, एस., और मिश्रा, एम. (2017). बिहार में जमीनी शासन और सहभागितापूर्ण योजना। *भारतीय लोक प्रशासन पत्रिका,* 63(4), 456–472।
- जोढ़का, एस. एस. (2002). राष्ट्र और गाँव: गांधी, नेहरू और अंबेडकर में ग्रामीण भारत की छवियाँ, *आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक,* 37(32), 3343–3353।
- जोढ़का, एस. एस. (2012). *जाति: ऑक्सफ़ोर्ड इंडिया संक्षिप्त परिचय.* नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।
- कुमार, ए. (2008). *बिहार में सामाजिक आंदोलन: जाति, वर्ग और लामबंदी.* नई दिल्ली: सेज।
- कुमार, वी., एवं सिंह, एम. (2020). बिहार पंचायतों में विकेंद्रीकरण और जाति राजनीति, *ग्रामीण अध्ययन पत्रिका,* 34(2), 98–112।
- मैथ्यू, जी. (2019). भारत में पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त बनाना, *ग्रामीण शासन पत्रिका,* 24(1), 34–49।
- मेहता, ए. और अली, एस. (2022). ग्रामीण भारत में डिजिटल समावेशन: ज़मीनी स्तर से उभरते अभ्यास। *विकास नीति एवं व्यवहार पत्रिका,* 7(1), 55–72।
- इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय. (2021). *डिजिटल इंडिया वार्षिक प्रतिवेदन.* नई दिल्ली: भारत सरकार।

- ग्रामीण विकास मंत्रालय (2020). *मनरेगा वार्षिक प्रतिवेदन 2019–20.* नई दिल्ली: भारत सरकार।

- नाबार्ड (2021). *स्वयं सहायता समूह–बैंक लिंक कार्यक्रम: बिहार की सफल कहानियाँ.* मुंबई: राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक।

- उम्मन, एम. ए. (2005). भारत में ग्रामीण निकायों को संसाधनों का प्रत्यावर्तन: प्रवृत्तियाँ और चिंताएँ। *भारतीय लोक प्रशासन पत्रिका,* 51(3), 370–389।

- पारेख, बी. (1997). *गांधी: एक बहुत संक्षिप्त परिचय.* नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।

- योजना आयोग (2008). *ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007–2012): खंड III – कृषि, ग्रामीण विकास, उद्योग, सेवाएँ और भौतिक अवसंरचना.* नई दिल्ली: भारत सरकार।

- पीआरआईए (2018). *बिहार में पीडीएस की सामुदायिक निगरानी को सुदृढ़ करना: अररिया का एक अध्ययन.* नई दिल्ली: भागीदारी अनुसंधान सोसाइटी।

- सेन, ए. (1999). *विकास के रूप में स्वतंत्रता.* नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।

- सिंह, के. (2013). *ग्रामीण विकास: सिद्धांत, नीतियाँ और प्रबंधन.* नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स।

- सिंह, आर. (2018). बिहार पंचायतों में महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण: हकीकत और बयानबाज़ी। *आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक,* 53(22), 47–55।

- ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल इंडिया (2020). *राज्य-स्तरीय भ्रष्टाचार सूचकांक प्रतिवेदन.* नई दिल्ली: टीआईआई प्रकाशन।

- यूनिसेफ एवं राइस इंस्टीट्यूट (2020). *बिहार में ओडीएफ स्थिति और व्यवहार परिवर्तन: एक मूल्यांकन अध्ययन.* नई दिल्ली।

- विश्व बैंक (2018). *भारत में समावेशी विकास के लिए स्थानीय संस्थानों को सुदृढ़ बनाना.* वाशिंगटन डी.सी.; विश्व बैंक।

- विश्व बैंक (2022). *जीविका: बिहार में महिलाओं की आजीविका को सुदृढ़ बनाना.* वाशिंगटन डी.सी. ;विश्व बैंक प्रकाशन।

7

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के अंतर्गत श्रमिकों को प्रदत्त मजदूरी का आकलन

रविन्द्र कुमार **डॉ. प्रवेश कुमार**

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.96-100
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) का हिमाचल प्रदेश में सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का अध्ययन यह अध्ययन हिमाचल प्रदेश के चंबा, मंडी और ऊना जिलों में मनरेगा के अंतर्गत दी जा रही मजदूरी के सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करता है। इसका उद्देश्य मजदूरी भुगतान की समयबद्धता, आय एवं व्यय में परिवर्तन, महिला सशक्तिकरण, तथा प्रवास पर योजना के प्रभाव का मूल्यांकन करना है। अध्ययन में प्राथमिक और द्वितीयक आंकड़ों के साथ-साथ वर्णनात्मक शोध पद्धति का उपयोग किया गया। निष्कर्षों से ज्ञात हुआ कि योजना ने ग्रामीण जीवन स्तर, आय में वृद्धि और सामाजिक समावेशिता को प्रोत्साहित किया, विशेषकर चंबा और मंडी जिलों में इसका प्रभाव अधिक रहा। महिलाओं की निर्णय क्षमता, आत्मविश्वास और सामाजिक भागीदारी में भी उल्लेखनीय सुधार देखा गया। हालांकि, मजदूरी भुगतान में देरी और बाजार मजदूरी की तुलना में कम दरें प्रमुख चुनौतियाँ हैं। अध्ययन नीतिगत सुधारों जैसे डिजिटल भुगतान, मजदूरी दरों में संशोधन और जागरूकता अभियानों की आवश्यकता पर बल देता है।

मुख्य शब्द: महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, आजीविका सुरक्षा

प्रस्तावना

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा), जिसे 2005 में लागू किया गया और 2009 में इसके नाम को मनरेगा रखा गया, भारत की सबसे व्यापक और महत्वाकांक्षी

सामाजिक कल्याण योजना है। यह योजना विशेष रूप से ग्रामीण भारत के कमजोर और पिछड़े वर्गों के लिए आजीविका सुरक्षा प्रदान करने, रोजगार सृजन को प्रोत्साहित करने और सतत् विकास के लिए स्थानीय संसाधनों के प्रबंधन को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से लागू की गई।

हिमाचल प्रदेश में मनरेगा का क्रियान्वयन विविध भौगोलिक और सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के बीच हुआ है। इसलिए इस अध्ययन का उद्देश्य न केवल मजदूरी के प्रत्यक्ष आर्थिक प्रभावों का मूल्यांकन करना है, बल्कि यह समझना भी है कि किस प्रकार यह योजना ग्रामीण परिवारों के जीवन स्तर, सामाजिक संरचना, लैंगिक समावेशिता और स्थानीय रोजगार सृजन में योगदान करती है।

अध्ययन को हिमाचल प्रदेश ग्रामीण विकास संस्थान द्वारा ग्रामीण विकास विभाग के सहयोग से किया गया। इस अध्ययन में प्राथमिक और द्वितीयक डेटा, सरकारी रिपोर्ट्स, जनगणना आंकड़े और ऑनलाइन डेटाबेस (जैसे https://nrega.dord.gov.in) का समग्र उपयोग किया गया है।

मनरेगा की पृष्ठभूमि और विशेषताएं

मनरेगा ग्रामीण परिवारों को प्रति वर्ष 100 दिन का रोजगार कानूनी रूप से सुनिश्चित करता है। यह योजना ग्रामीण-शहरी असमानताओं को कम करने और विशेष रूप से अकुशल श्रमिकों के लिए रोजगार अवसर प्रदान करने पर केंद्रित है। मुख्य विशेषताएं:

- कानूनी अधिकार: ग्रामीण वयस्कों को मांग पर 15 दिनों के भीतर रोजगार प्रदान करना, अन्यथा बेरोजगारी भत्ता।
- मजदूरी समानता: पुरुष और महिला दोनों के लिए समान मजदूरी, जिससे लैंगिक समानता को बढ़ावा मिलता है।
- विकेन्द्रीकृत योजना: ग्राम सभा परियोजनाओं का चयन और कार्यान्वयन, जिसमें कम से कम 50% कार्य शामिल।
- पारदर्शिता: सामाजिक लेखा परीक्षा, दीवार लेखन और प्रबंधन सूचना प्रणाली के माध्यम से सुनिश्चित।
- वित्तपोषण: केंद्र सरकार अकुशल श्रमिकों की मजदूरी का 100% और सामग्री व कुशल श्रमिकों की लागत का 75% वहन करती है, शेष 25% राज्य सरकार।
- महिला सशक्तिकरण: कम से कम एक-तिहाई लाभार्थियों को महिलाएं होना अनिवार्य।

मनरेगा की इन विशेषताओं से यह स्पष्ट होता है कि यह योजना न केवल आर्थिक सुरक्षा, बल्कि सामाजिक न्याय और लैंगिक समानता सुनिश्चित करने में भी योगदान करती है।

अध्ययन के उद्देश्य

- हिमाचल प्रदेश के तीन भिन्न भौगोलिक जिलों चंबा, मंडी एवं ऊना में मनरेगा के अंतर्गत प्रदान की जाने वाली मजदूरी के ग्रामीण परिवारों की आय, उपभोग व्यय और जीवन स्तर पर प्रभाव का तुलनात्मक और विश्लेषणात्मक अध्ययन।

- मनरेगा के माध्यम से महिला श्रमिकों की भागीदारी, निर्णयात्मक भूमिका, सामाजिक जागरूकता और आत्म-सशक्तिकरण के विविध आयामों का समग्र विश्लेषण।

- योजना के कार्यान्वयन से संबंधित संरचनात्मक पहलुओं विशेषतः मजदूरी भुगतान की समयबद्धता, रोजगार के अवसरों की उपलब्धता और प्रवास पर इसके संभावित प्रभाव का मूल्यांकन करते हुए नीति सुधार हेतु साक्ष्य-आधारित और व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन क्षेत्र और शोध पद्धति

अध्ययन क्षेत्र:

हिमाचल प्रदेश के तीन जिले:

- चंबा (उच्च पहाड़ी)
- मंडी (मध्य पहाड़ी)
- ऊना (निम्न पहाड़ी)

प्रत्येक जिले से दो विकासखंड चुने गए और प्रत्येक विकासखंड से तीन ग्राम पंचायतें। यह क्षेत्र 350 मीटर से 2150 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है, जो हिमाचल प्रदेश के विविध भौगोलिक, जलवायु और सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

शोध पद्धति

यह अध्ययन वर्णनात्मक प्रकृति का है, जिसमें प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के डेटा का समेकित रूप से उपयोग किया गया है। सैंपलिंग डिजाइन के तहत साधारण रैंडम सैंपलिंग विधि अपनाई गई, जिसमें प्रत्येक ग्राम पंचायत से 50 उत्तरदाताओं का चयन किया गया। प्राथमिक डेटा नवंबर 2023 में प्रशिक्षित स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) के सदस्यों द्वारा संरचित प्रश्नावली के माध्यम से एकत्र किया गया। द्वितीयक डेटा विकासखंड विकास कार्यालय, जनगणना 2011 तथा वेबसाइट https://nrega.dord.gov.in जैसे स्रोतों से संकलित किया गया। प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण एक्सेल की सहायता से किया गया।

परिणाम और चर्चा

जागरूकता और कार्यान्वयन में उच्च स्तर की भागीदारी देखी गई। 96.6% उत्तरदाताओं को मनरेगा के बारे में जानकारी थी, जिसमें 98.7% ने ग्राम पंचायतों से जानकारी प्राप्त की। रोजगार अवधि के संदर्भ में 89% उत्तरदाताओं को 50-100 दिनों का रोजगार मिला। मजदूरी भुगतान में देरी की समस्या भी सामने आई, केवल 11.52% को 15 दिनों के भीतर भुगतान प्राप्त हुआ, जबकि 63.85% को एक महीने से अधिक समय बाद। आवास, परिवार संरचना और भूमि की स्थिति के आंकड़े दर्शाते हैं कि अधिकांश ग्रामीण अपने स्वयं के घरों में रहते हैं, और कृषि उनके आय के प्रमुख स्रोत में से एक है। आय में परिवर्तन के विश्लेषण से पता चला कि चंबा में आय वृद्धि सबसे अधिक (60.96%) रही, इसके बाद मंडी (52.28%) और ऊना (31.54%)। मजदूरी आय, व्यवसाय और अन्य स्रोतों में भी चंबा का प्रदर्शन बेहतर रहा। व्यय में परिवर्तन की तुलना से पता चला कि मंडी में कृषि और खाद्य उपभोग पर खर्च अधिक बढ़ा, जबकि चंबा में शिक्षा और स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान दिया गया। महिला सशक्तिकरण के संदर्भ में 97.36% उत्तरदाताओं ने मनरेगा के बाद घरेलू आय में वृद्धि की सूचना दी। 68.8% ने निर्णय लेने में भागीदारी में वृद्धि बताई, और 79.45% ने आत्मविश्वास में सुधार अनुभव किया। प्रवास पर प्रभाव के संदर्भ में 16.28% उत्तरदाताओं ने रोजगार की तलाश में प्रवास किया, जबकि 9.94% ने मनरेगा के कारण अपने क्षेत्र में लौटकर रोजगार प्राप्त किया।

मजदूरी की तुलना में 79.28% ने मनरेगा में काम करने को प्राथमिकता दी, और 55.18% ने मनरेगा की मजदूरी से संतुष्टि जताई, हालांकि 72.2% ने माना कि बाजार की मजदूरी अधिक है।

सुझाव

अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर यह स्पष्ट है कि मनरेगा के प्रभाव को और अधिक प्रभावी एवं स्थायी बनाने के लिए कुछ नीतिगत और क्रियान्वयन स्तर पर सुधार आवश्यक हैं। इस संदर्भ में निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं:

- मजदूरी भुगतान की समयबद्धता में सुधार के लिए डिजिटल भुगतान प्रणालियों को सुदृढ़ करना।
- बाजार दरों के अनुसार मनरेगा की मजदूरी दरों का संशोधन।
- बेरोजगारी भत्ता और 15-दिन के भुगतान नियम के बारे में जागरूकता अभियानों को बढ़ावा देना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यस्थलों की पहुंच को बेहतर करना।

निष्कर्ष

हिमाचल प्रदेश के चंबा, मंडी और ऊना जिलों में किए गए इस अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) ने ग्रामीण समुदायों के सामाजिक और आर्थिक जीवन पर सकारात्मक प्रभाव डाला है। योजना ने न केवल ग्रामीण परिवारों की आय में वृद्धि की, बल्कि महिला सशक्तिकरण, आत्मनिर्भरता और सामाजिक भागीदारी को भी प्रोत्साहित किया। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर सृजित होने से पलायन की प्रवृत्ति में कमी आई। तथापि, मजदूरी भुगतान में विलंब और बाजार मजदूरी से कम दरें प्रमुख चुनौतियाँ हैं। अतः डिजिटल भुगतान प्रणाली, मजदूरी दर संशोधन तथा जन-जागरूकता अभियानों को सुदृढ़ करना आवश्यक है।

संदर्भ

- कोठारी, सी.आर. (2019) रिसर्च मेथोडोलॉजी: मेथड्स एंड टेक्निक्स, चौथा एडिशन, न्यू एज इंटरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
- ग्रामीण विकास मंत्रालय (2025). *महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना*, https://nrega.dord.gov.in/MGNREGA_new/Nrega_home.aspx
- प्रेस सूचना ब्यूरो (PIB) (2025). *मनरेगा के अंतर्गत मजदूरी संबंधित मुद्दे*, https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2147246
- प्रेस सूचना ब्यूरो (PIB) (2025). *महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अंतर्गत आधार आधारित भुगतान प्रणाली*, https://www.pib.gov.in/PressReleseDetailm.aspx?PRID=2112199

8

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम में महिलाओं की भागीदारी

डॉ. पंकज उपाध्याय **डॉ. मोहसिन उद्दीन**

DOI:https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.101-107
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) महिलाओं के लिए न केवल एक रोजगार योजना है, बल्कि यह उनके सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण का भी सशक्त माध्यम बन चुकी है। यह अध्ययन मनरेगा में महिलाओं की भागीदारी की प्रवृत्तियों, क्षेत्रीय असमानताओं, और महिला हितैषी नवाचारों का विश्लेषण करता है। आंकड़ों के अनुसार, महिलाओं की भागीदारी दर 2019-20 में 54.78% से बढ़कर 2022-23 में 56.02% हो गई है, जो योजना में महिलाओं की निरंतर व सकारात्मक भागीदारी को दर्शाता है। दक्षिणी राज्यों में जहाँ महिला सशक्तिकरण की रणनीतियाँ बेहतर हैं, वहाँ भागीदारी दर अधिक पाई गई, जबकि गंगा के मैदानी क्षेत्रों में यह अपेक्षाकृत कम रही। 'कुडुंबश्री' जैसे प्रयासों ने यह स्पष्ट किया है कि विकेंद्रीकृत एवं लिंग-संवेदनशील प्रबंधन महिलाओं की भागीदारी को प्रभावी बना सकते हैं। यह शोध यह निष्कर्ष निकालता है कि मनरेगा महिला सशक्तिकरण, सामाजिक समावेशन और नवाचार की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

मुख्य शब्द: महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, महिला भागीदारी, सामाजिक सुरक्षा, सतत् विकास, सामाजिक लेखा परीक्षा

प्रस्तावना

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 (मनरेगा) भारत सरकार द्वारा प्रारंभ की गई एक क्रांतिकारी पहल है, जिसका उद्देश्य ग्रामीण भारत में आजीविका सुरक्षा को सुनिश्चित

करना है। यह योजना, विशेषकर महिला श्रमिकों के लिए, सामाजिक सुरक्षा और आर्थिक सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण साधन बनकर उभरी है। यह अधिनियम प्रत्येक ग्रामीण परिवार को एक वित्तीय वर्ष में कम से कम सौ दिनों की गारंटीकृत अकुशल श्रम आधारित रोजगार उपलब्ध कराने का प्रावधान करता है। मनरेगा का उद्देश्य केवल रोज़गार उपलब्ध कराना ही नहीं, बल्कि सतत् विकास, परिसंपत्ति सृजन और सामाजिक समावेशन को बढ़ावा देना भी है। महिला भागीदारी को विशेष प्राथमिकता दी गई है ताकि ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने की दिशा में एक मंच प्राप्त हो सके।

भारत में सामाजिक सुरक्षा जाल कार्यक्रमों को 1951 में योजना प्रक्रिया की शुरुआत के साथ ही तैयार और लागू किया गया था। इनका मुख्य उद्देश्य सभी स्तरों पर खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना और ग्रामीण समुदायों की आजीविका को सुदृढ़ करना रहा है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न सरकारों ने ग्रामीण विकास नीतियाँ अपनाईं, जिनका मकसद कृषि उत्पादन को बढ़ाना और साथ ही गरीबों, महिलाओं तथा सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों को लक्षित कल्याणकारी सहायता प्रदान करना रहा है। इन वंचित समुदायों में अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित जनजातियाँ, भौगोलिक दृष्टि से दुर्गम क्षेत्रों में रहने वाले लोग (यहाँ तक कि समृद्ध राज्यों में भी), और शहरी गरीब शामिल हैं (वैद्यनाथन, 2006)।

मनरेगा को वर्ष 2005 में इस उद्देश्य के साथ लागू किया गया था कि ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरी आधारित रोजगार सुनिश्चित किया जाए और ग्रामीण गरीबों, विशेषकर महिलाओं को सशक्त बनाया जा सके। इस योजना के माध्यम से अब तक करोड़ों महिलाओं को रोजगार मिला है, जिससे उनकी सामाजिक स्थिति, आत्मनिर्भरता और आर्थिक निर्णय लेने की क्षमता में सुधार हुआ है। मनरेगा महिला केंद्रित योजनाओं में अग्रणी रही है, जिसमें महिलाओं को प्राथमिकता देने की विधिक गारंटी है (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2025)।

यह अध्ययन मनरेगा में महिलाओं की भागीदारी से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं को उजागर करता है। मनरेगा में कार्यरत महिलाओं को घरेलू कार्यों के साथ-साथ मजदूरी कार्यों की दोहरी जिम्मेदारी निभानी पड़ती है, जिससे उनका अवकाश समय घटता है और बच्चों की देखभाल में कठिनाई आती है। आंध्र प्रदेश की महिलाएं इन समस्याओं को अधिक स्पष्ट रूप से व्यक्त करती हैं, जबकि तेलंगाना में इस तरह की प्रतिक्रियाएं अपेक्षाकृत कम देखने को मिलीं। इस योजना के माध्यम से महिलाओं की घरेलू निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि हुई है, विशेष रूप से सामाजिक और आर्थिक मामलों में। साथ ही यह भी पाया गया कि जब महिलाएं काम पर जाती हैं, तो उनके बच्चे घरेलू कार्यों में मदद करते हैं, जिससे बच्चों की शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है और उच्च शिक्षा के स्तर पर ड्रॉपआउट की संभावना बढ़ सकती है(विज एवं अन्य, 2017)।

शोध के राज्य-स्तरीय विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि गंगा के मैदानी क्षेत्रों के आर्थिक रूप से कमजोर राज्यों में महिलाएँ अभी भी मनरेगा का पर्याप्त लाभ नहीं उठा पा रही हैं। इसके विपरीत, दक्षिणी राज्यों में महिलाओं की भागीदारी अधिक पाई गई है, जिसका कारण बेहतर मानव विकास संकेतक, अपेक्षाकृत अधिक मजदूरी और कुछ स्थानों पर कार्यस्थलों पर बच्चों की देखभाल की बेहतर सुविधाएँ हैं जो कि पूरे देश में अपनाई जानी चाहिए। विशेष रूप से केरल में, राज्य सरकार द्वारा समर्थित 'कुडुंबश्री' महिला स्वयं-सहायता समूहों को मनरेगा से जोड़ने के अभिनव प्रयास ने इस योजना को महिला केंद्रित बना दिया है। यह समन्वय इस बात की महत्त्वपूर्ण समझ देता है कि विकेन्द्रित प्रबंधन में महिलाओं की भागीदारी कैसे लिंग आधारित बाधाओं को कम कर सकती है और इसे देशभर में अपनाया जा सकता है (नारायण, 2022)।

आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में महिलाओं के लिए यह योजना आजीविका का प्रमुख स्रोत बन गई है। 2024-25 के आंकड़े दर्शाते हैं कि कुल श्रमिकों में से 58.1% महिलाएँ हैं, जो इस योजना में उनकी सर्वोच्च भागीदारी को रेखांकित करता है (हिन्दू, 2023)। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) एक लैंगिक तटस्थ योजना है। अधिनियम के प्रावधान के अनुसार, राज्य सरकार बिना किसी लैंगिक भेदभाव के मजदूरी को काम की मात्रा से जोड़ेगी। वर्तमान में, 59.28 प्रतिशत व्यक्तिगत दिवस महिला लाभार्थियों द्वारा सृजित किए गए हैं (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2023)।

मनरेगा की सुरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ एवं आधुनिक बनाना

आर्थिक सर्वेक्षण 2023–24 में यह उल्लेख किया गया है कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना में गड़बड़ियों और रिसाव को रोकने के लिए कार्य आरंभ होने से पहले, कार्य के दौरान और कार्य पूरा होने के बाद जियो-टैगिंग की जा रही है तथा 99.9% भुगतान नेशनल इलेक्ट्रॉनिक मैनेजमेंट सिस्टम के माध्यम से किए जा रहे हैं। सर्वेक्षण के अनुसार, मनरेगा ने व्यक्ति-दिवस सृजन और महिलाओं की भागीदारी के स्तर पर उल्लेखनीय प्रगति की है। 2019–20 में जहां 265.4 करोड़ व्यक्ति-दिवस सृजित हुए थे, वहीं 2023–24 में यह बढ़कर 309.2 करोड़ हो गए (MIS के अनुसार)। इसी अवधि में महिला भागीदारी दर 54.8% से बढ़कर 58.9% हो गई।

इसके अलावा, आर्थिक सर्वेक्षण यह भी इंगित करता है कि मनरेगा अब सतत आजीविका विविधीकरण के लिए परिसंपत्तियों के सृजन की दिशा में रूपांतरित हो गया है। इसका प्रमाण है कि व्यक्तिगत लाभार्थियों की भूमि पर किए गए कार्यों की हिस्सेदारी, जो 2013–14 में कुल पूर्ण कार्यों का केवल 9.6% थी, वह 2023–24 में बढ़कर 73.3% हो गई है(प्रेस सूचना ब्यूरो, 2024)। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 के तहत महिलाओं को प्राथमिकता देना आवश्यक है, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि कम-से-कम एक-तिहाई लाभार्थी महिलाएं हों। यह एक लैंगिक समभाव वाली योजना है, जो महिलाओं की भागीदारी को

बढ़ावा देती है, जैसे कि महिला और पुरुषों के लिए समान मजदूरी, महिलाओं के लिए अलग मजदूरी दर तय करना, श्रमस्थल पर शिशुगृह, बच्चों के लिए छायादार स्थान, और बाल देखभाल सेवाएं उपलब्ध कराना। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के साथ एकीकृत प्रयास के तहत, महिला मेट की नियुक्ति की जा रही है, जिससे महिलाओं की भागीदारी को और प्रोत्साहन मिलता है। साथ ही, योजना का उद्देश्य यह भी है कि लाभार्थियों को उनके निवास के समीप ही कार्य प्रदान किया जाए, जिससे महिलाओं, वृद्धों और अन्य सीमित गतिशीलता वाले व्यक्तियों को सुविधा हो।

योजना के अंतर्गत श्रमस्थल पर पेयजल, छाया, प्राथमिक उपचार आदि सुविधाएं अनिवार्य रूप से उपलब्ध कराना आवश्यक है। यदि ये सुविधाएं उपलब्ध नहीं कराई जाती हैं तो संबंधित अधिकारियों पर दंडात्मक कार्यवाही का प्रावधान है। इन सुविधाओं की उपलब्धता की जांच निरीक्षणों और सामाजिक लेखा परीक्षा के माध्यम से की जाती है। इनके अभाव में शिकायत निवारण तंत्र का सहारा भी लिया जा सकता है (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2022)।

उद्देश्य

- मनरेगा में महिलाओं की भागीदारी का आकलन करना, ताकि उनके सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण पर योजना के प्रभाव को समझा जा सके;
- विभिन्न राज्यों में महिला श्रमिकों की भागीदारी दर में अंतर का विश्लेषण करना और इसके सामाजिक व संस्थागत कारणों की पहचान करना; एवं
- महिला हितैषी नवाचारों (जैसे महिला मेट्स, शिशुगृह, स्वयं सहायता समूहों से समन्वय) का अध्ययन करना, जो उनकी निरंतर व प्रभावी भागीदारी को बढ़ावा देते हैं।

अनुसंधान पद्धति

यह अध्ययन द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है और इसका उद्देश्य मनरेगा के अंतर्गत महिलाओं की भागीदारी, सामाजिक संरक्षण की प्रवृत्तियाँ, तथा नीति प्रभावों का विश्लेषण करना है। अध्ययन में भारत सरकार की आधिकारिक वेबसाइटों, आर्थिक सर्वेक्षण 2023–24, तथा प्रासंगिक शोध आलेखों और पत्रिकाओं से प्राप्त आँकड़ों और दस्तावेजों का गहन विश्लेषण किया गया है।

इस अध्ययन में प्रयुक्त आंकड़े वर्ष 2019–20 से लेकर 2023–24 तक की महिला भागीदारी दर, श्रमदिवसों की संख्या, तथा योजना से जुड़े सामाजिक लाभों पर केंद्रित हैं। तथ्यों की पुष्टि के लिए विश्वसनीय और अद्यतन सरकारी प्रेस विज्ञप्तियों, नीति दस्तावेजों, तथा शोध प्रकाशनों का संदर्भ लिया गया है। डेटा को सारणी, ग्राफ़ और प्रवृत्तियों के माध्यम से प्रस्तुत कर वर्णनात्मक विश्लेषण किया गया है, जिससे निष्कर्षों की वैधता सुनिश्चित हो सके।

चर्चा

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम में महिलाओं की भागीदारी सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण संकेतक के रूप में उभर रही है। पिछले कुछ वर्षों में इस योजना के तहत महिलाओं की सहभागिता दर में स्थिर वृद्धि देखी गई है। नीचे दिए गए आंकड़े विभिन्न वित्तीय वर्षों में महिला भागीदारी की प्रवृत्ति को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं:

तालिका 8.1: पिछले तीन वित्तीय वर्षों तथा 2022-23 (29 जुलाई 2022 तक) के दौरान महिलाओं की भागीदारी

वित्तीय वर्ष	महिला भागीदारी दर (%)
2019-20	54.78%
2020-21	53.19%
2021-22	54.67%
2022-23	56.02%

स्रोत: https://www.pib.gov.in/Pressreleaseshare.aspx?PRID=1847394

उपरोक्त तालिका -1 से स्पष्ट होता है कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना में महिलाओं की भागीदारी पिछले कुछ वर्षों में लगातार बनी हुई है और इसमें धीरे-धीरे सकारात्मक वृद्धि देखी गई है। वर्ष 2019-20 में महिला भागीदारी दर 54.78% थी, जो इस योजना के तहत निर्मित कुल कार्यदिवसों में महिलाओं के योगदान को दर्शाती है। हालांकि, कोविड-19 महामारी के प्रभाव के कारण 2020-21 में यह भागीदारी दर घटकर 53.19% हो गई। यह गिरावट उस समय की स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं, लॉकडाउन और घरेलू दायित्वों में वृद्धि जैसे कारणों से जुड़ी हो सकती है। इसके पश्चात वर्ष 2021-22 में स्थिति में सुधार देखा गया और महिला भागीदारी दर पुनः 54.67% तक पहुँच गई, जो संकेत देता है कि महिलाएं फिर से योजना के तहत काम में सक्रिय रूप से जुड़ने लगीं। वर्ष 2022-23 के प्रारंभिक आंकड़ों (29 जुलाई 2022 तक) के अनुसार यह दर और बढ़कर 56.02% तक पहुँच गई है, जो इस योजना में महिलाओं की बढ़ती भूमिका और निर्भरता को दर्शाता है। यह प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि मनरेगा ग्रामीण महिलाओं के लिए न केवल आजीविका का एक महत्वपूर्ण साधन बना हुआ है, बल्कि यह उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाने का एक सशक्त उपकरण भी सिद्ध हो रहा है।

नीतिगत सुझाव

- स्थानीय महिला नेतृत्व को सुदृढ़ किया जाए 'महिला मेट्स' की संख्या में वृद्धि कर उन्हें प्रशिक्षण प्रदान किया जाए।
- कार्य स्थलों पर बाल देखभाल केंद्र की नियमित उपलब्धता सुनिश्चित हो।
- डिजिटल लेन-देन और पारदर्शिता को और अधिक मजबूत किया जाए ताकि भ्रष्टाचार पर रोक लगे।
- प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से महिलाओं को तकनीकी और उद्यमशीलता की जानकारी दी जाए।
- राज्यवार विश्लेषण कर कमजोर प्रदर्शन वाले जिलों में विशेष हस्तक्षेप किया जाए।

निष्कर्ष

मनरेगा ने ग्रामीण महिलाओं के लिए एक सशक्त सामाजिक सुरक्षा तंत्र के रूप में कार्य किया है। पिछले कुछ वर्षों के आंकड़ों से यह सिद्ध होता है कि योजना के अंतर्गत महिलाओं की भागीदारी में लगातार वृद्धि हुई है, जिससे उनके आत्मविश्वास, घरेलू निर्णय लेने की क्षमता, और आर्थिक स्वतंत्रता में भी इजाफा हुआ है। यद्यपि कोविड-19 के कारण कुछ समय के लिए भागीदारी में गिरावट देखी गई, परंतु नीति समर्थन और नवाचारों के चलते यह दर फिर से बढ़ी। विशेषकर महिला मेट्स, शिशुगृह सुविधा और स्वयं सहायता समूहों के साथ समन्वय जैसे नवाचार महिलाओं की स्थायी भागीदारी सुनिश्चित करने में सहायक रहे हैं। हालांकि कुछ राज्यों में अभी भी सामाजिक और संस्थागत बाधाएँ बनी हुई हैं, जिन्हें नीति-निर्माताओं को विशेष रूप से संबोधित करने की आवश्यकता है। समग्र रूप से मनरेगा महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने, श्रम में उनकी गरिमा बढ़ाने और समावेशी ग्रामीण विकास को साकार करने का माध्यम बन रहा है।

संदर्भ

- द हिन्दू (2023). महिलाओं ने महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना में नई ज़मीन तोड़ी।
- नारायण, एस. (2022). नई ज़मीन तोड़ना: भारत की मनरेगा में महिलाओं का रोजगार, महामारी की जीवनरेखा। *जेंडर एंड डेवलपमेंट*, 30(2–3).

  https://www.tandfonline.com/doi/citedby/10.1080/13552074.2022.2071978

- प्रेस सूचना ब्यूरो ((2022a). महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) के अंतर्गत महिला श्रमिक।

  https:///www.pib.gov.in/Pressreleaseshare.aspx?PRID=1847394

- प्रेस सूचना ब्यूरो (2022b). महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) के अंतर्गत महिला कार्यबल,

  https://www.pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1883533

- प्रेस सूचना ब्यूरो (2023). महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) में लैंगिक वेतन अंतर।

  https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1988269

- प्रेस सूचना ब्यूरो (2024). पिछले नौ वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों में 2.63 करोड़ घर गरीबों के लिए बनाए गए, मनरेगा में महिलाओं की भागीदारी दर 2019–20 के 54.8 प्रतिशत से बढ़कर 2023–24 में 58.9 प्रतिशत हुई,

  https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2034918

- प्रेस सूचना ब्यूरो (2025a). वर्तमान दशक में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का प्रभावी कार्यान्वयन।

  https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2112680

- प्रेस सूचना ब्यूरो (2025b). मनरेगा के अंतर्गत महिलाओं को रोजगार।

  https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2146875

- वैद्यनाथन, के. ई. (2006, 30–31 अक्टूबर). बच्चों, महिलाओं और परिवारों के लिए सामाजिक सुरक्षा: भारतीय अनुभव। शोधपत्र, यूनिसेफ सम्मेलन*बच्चों, महिलाओं और परिवारों के लिए सामाजिक सुरक्षा पहलों पर: हालिया अनुभवों का विश्लेषण*, न्यूयॉर्क।

- विज, एस. जातव, एम., बरुआ, ए., एवं भट्टार, एम. (2017). तेलंगाना और आंध्र प्रदेश में मनरेगा में महिलाएँ, *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 52(32).

9

ग्रामीण आजीविका, रोजगार और प्रवासन

डॉ. कंचन श्रीवास्तव

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.108-120

ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था सदियों से कृषि, पशुपालन और हस्तशिल्प की त्रिआयामी संरचना पर आधारित रही है। आधुनिकीकरण और औद्योगीकरण के साथ इस पारंपरिक व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन आया है, जिसके परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर ग्रामीण प्रवासन की समस्या उत्पन्न हुई है। यह अध्ययन भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका के स्रोतों, रोजगार सृजन की सरकारी योजनाओं और प्रवासन के स्वरूप तथा प्रभावों का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अनुसंधान में गुणात्मक शोध पद्धति का उपयोग करते हुए द्वितीयक डेटा के आधार पर विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से पता चलता है कि पारंपरिक आजीविका के साधनों से पर्याप्त आय न मिलना, कृषि संकट और क्षेत्रीय असमानता प्रवासन के मुख्य कारक हैं। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना और स्टार्टअप इंडिया जैसी सरकारी योजनाएं रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। झारखंड और बिहार के केस स्टडी विश्लेषण से पता चलता है कि महिला स्वयं सहायता समूहों और ग्राम पंचायतों की पहल से स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर सृजित हो रहे हैं। अध्ययन एकीकृत आजीविका रणनीति, रोजगार सूचकांक के विकास और प्रवासियों के पुनर्वास के लिए व्यापक नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द: ग्रामीण आजीविका, प्रवासन, रोजगार सृजन, कृषि संकट, सरकारी योजनाएं

प्रस्तावना

भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था सदियों से एक त्रिआयामी संरचना पर आधारित रही है जिसमें कृषि, पशुपालन और हस्तशिल्प मुख्य स्तंभ रहे हैं। यह पारंपरिक आजीविका व्यवस्था न केवल आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करती थी बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं को भी संजोए

रखती थी। कृषि ग्रामीण जीवन की आधारशिला रही है। भारत के अधिकांश गाँवों में खेती-बाड़ी मुख्य व्यवसाय था जो न केवल भोजन की आवश्यकता पूरी करता था बल्कि स्थानीय बाजार के लिए अतिरिक्त उत्पादन भी प्रदान करता था। मौसमी फसलों के साथ-साथ सब्जियों और फलों की खेती परिवारों को वर्षभर आय का साधन मुहैया कराती थी। कृषि व्यवस्था पूर्णतः प्रकृति पर निर्भर थी और पारंपरिक ज्ञान एवं तकनीकों का उपयोग करती थी। पशुपालन कृषि के साथ-साथ एक महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि थी। गाय, भैंस, बकरी, मुर्गी और अन्य पशुओं का पालन न केवल दूध, मांस और अंडों की आपूर्ति करता था बल्कि कृषि कार्यों में भी सहायक होता था। पशुओं से प्राप्त गोबर खाद का काम करता था और ईंधन के रूप में भी उपयोग होता था। यह व्यवस्था स्वावलंबन और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देती थी। हस्तशिल्प और कुटीर उद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था का तीसरा मुख्य घटक था। कपड़ा बुनाई, मिट्टी के बर्तन, लकड़ी का काम, धातु का काम, और अन्य पारंपरिक शिल्प न केवल स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करते थे बल्कि दूर-दराज के बाजारों में भी बेचे जाते थे। यह कौशल आधारित व्यवसाय पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होते रहे और सामुदायिक एकता को मजबूत बनाते रहे।

आधुनिकीकरण और औद्योगीकरण के साथ ग्रामीण अर्थव्यवस्था में व्यापक परिवर्तन आया है। यंत्रीकरण ने मानव श्रम की आवश्यकता को कम कर दिया है जिससे पारंपरिक रोजगार के अवसर घटे हैं। बड़े पैमाने पर उत्पादन और मशीनीकरण ने स्थानीय हस्तशिल्प उद्योगों को गंभीर चुनौती दी है। फैक्टरी में बने सामान की उपलब्धता और कम कीमत के कारण पारंपरिक कारीगरों का व्यवसाय प्रभावित हुआ है। कृषि क्षेत्र में भी मशीनीकरण के साथ-साथ भूमि के टुकड़े होते जाने से छोटे किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर हुई है। जलवायु परिवर्तन, अनियमित मानसून, और बढ़ती उत्पादन लागत ने कृषि को एक जोखिम भरा व्यवसाय बना दिया है। इसके अतिरिक्त, बाजार में उचित मूल्य न मिलना और बिचौलियों का शोषण किसानों की समस्याओं को और भी बढ़ा देता है।

गरीबी ग्रामीण प्रवासन का सबसे प्रमुख कारण है। पारंपरिक आजीविका के साधनों से पर्याप्त आय न मिलना और मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में असमर्थता लोगों को रोजगार की तलाश में शहरों की ओर जाने पर मजबूर करती है। शिक्षा, स्वास्थ्य और बेहतर जीवन स्तर की तलाश में भी लोग गाँव छोड़ने को विवश होते हैं। कृषि संकट ने प्रवासन को और भी तेज कर दिया है। फसल की बर्बादी, प्राकृतिक आपदाएं, कर्ज का बोझ और अपर्याप्त सिंचाई व्यवस्था के कारण किसान अपनी भूमि छोड़ने को मजबूर हैं। छोटे और सीमांत किसानों की स्थिति विशेष रूप से गंभीर है क्योंकि उनके पास वैकल्पिक आय के साधन सीमित होते हैं। क्षेत्रीय असमानता भी प्रवासन का एक महत्वपूर्ण कारक है। विकसित राज्यों और पिछड़े क्षेत्रों के बीच आर्थिक अवसरों की विषमता लोगों को बेहतर अवसरों की तलाश में विस्थापित होने पर मजबूर करती है। शहरी क्षेत्रों में बेहतर वेतन, आधुनिक सुविधाएं और जीवनयापन के अधिक अवसर ग्रामीण युवाओं को आकर्षित करते हैं। इस

प्रकार, ग्रामीण आजीविका की पारंपरिक संरचना में आए बदलाव और आर्थिक संकट ने व्यापक पैमाने पर प्रवासन को जन्म दिया है जो भारतीय समाज के लिए एक गंभीर चुनौती बन गया है।

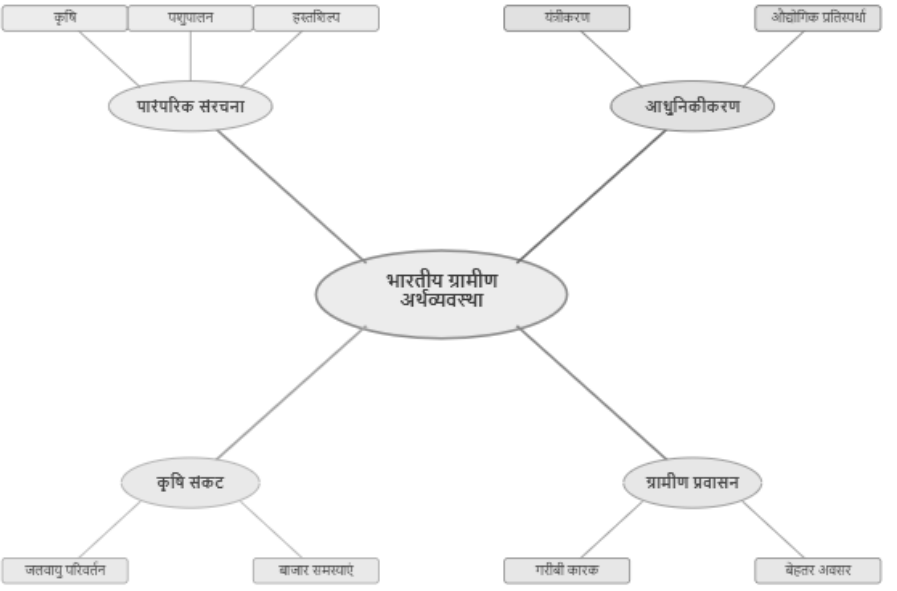

चित्र 9.1: भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था

शोध विधि

यह अध्ययन गुणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। अनुसंधान में मुख्यतः द्वितीयक डेटा का उपयोग किया गया है जिसमें सरकारी रिपोर्ट्स, नीति दस्तावेज, शैक्षणिक पत्रिकाओं के लेख और सांख्यिकीय डेटा शामिल हैं। डेटा संग्रह के लिए निम्नलिखित स्रोतों का उपयोग किया गया:

- राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन की रिपोर्ट्स
- भारत सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय के दस्तावेज
- महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के डेटा
- राज्य सरकारों की नीति रिपोर्ट्स
- अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं के लेख

विश्लेषण की पद्धति में तुलनात्मक अध्ययन और केस स्टडी विश्लेषण शामिल है। झारखंड और बिहार राज्यों को केस स्टडी के रूप में चुना गया है क्योंकि ये राज्य प्रवासन के मुख्य स्रोत क्षेत्र हैं।

आजीविका के प्रमुख स्रोत और उनका परिवर्तन

भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था परंपरागत रूप से कृषि पर आधारित रही है, परंतु वर्तमान समय में इस एकल निर्भरता की अनेक सीमाएँ स्पष्ट हो रही हैं। सबसे प्रमुख चुनौती कृषि भूमि का लगातार घटता आकार है, जो बढ़ती जनसंख्या और भूमि के विभाजन के कारण हो रहा है। छोटे और सीमांत किसान, जो कुल कृषकों का 86% हैं, अपनी आजीविका चलाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। मौसम की मार और जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि उत्पादन में अनिश्चितता बढ़ रही है। बाढ़, सूखा, ओलावृष्टि और अन्य प्राकृतिक आपदाओं से किसानों की फसलों का नुकसान हो रहा है। इसके अतिरिक्त, फसलों की उचित मूल्य न मिलना, मध्यस्थों का शोषण, और बाजार तक पहुंच की कमी जैसी समस्याएं कृषि की लाभप्रदता को कम कर रही हैं। तकनीकी पिछड़ेपन और आधुनिक कृषि तकनीकों के अभाव में उत्पादकता भी सीमित है। सिंचाई सुविधाओं की कमी, उन्नत बीजों का अभाव, और वैज्ञानिक खाद का उपयोग न करना भी कृषि आधारित अर्थव्यवस्था की प्रमुख बाधाएं हैं। इन सभी कारणों से यह स्पष्ट है कि केवल कृषि पर निर्भर रहना ग्रामीण समुदाय के लिए पर्याप्त नहीं है।

गैर-कृषि क्षेत्र में विविध अवसर उपलब्ध हैं जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बना सकते हैं। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। यह योजना न केवल रोजगार प्रदान करती है बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे का विकास भी करती है। मनरेगा के तहत जल संरक्षण, सड़क निर्माण, पेड़ लगाना और अन्य विकास कार्य होते हैं जो दीर्घकालिक लाभ प्रदान करते हैं। स्वयं सहायता समूह महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण का एक प्रभावी माध्यम हैं। ये समूह छोटे उद्यमों को बढ़ावा देते हैं, सामूहिक बचत को प्रोत्साहित करते हैं, और माइक्रो-फाइनेंस के जरिए वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। हस्तशिल्प, खाद्य प्रसंस्करण, डेयरी उत्पादन, और अन्य लघु उद्योगों के माध्यम से ये समूह आर्थिक स्वावलंबन प्राप्त कर रहे हैं। कुटीर उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। पारंपरिक कारीगरी, बुनाई, मिट्टी के बर्तन, बांस की वस्तुएं, और अन्य हस्तशिल्प उत्पादों की बढ़ती मांग है। सरकारी योजनाओं के माध्यम से इन उद्योगों को तकनीकी और वित्तीय सहायता मिल रही है, जिससे उत्पादन की गुणवत्ता और मात्रा में सुधार हो रहा है। ग्रामीण पर्यटन एक उभरता हुआ क्षेत्र है जो स्थानीय संस्कृति, प्राकृतिक सुंदरता, और पारंपरिक जीवनशैली का लाभ उठाता है। होमस्टे, एग्रो-टूरिज्म, और इको-टूरिज्म के माध्यम से ग्रामीण समुदाय अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं। यह न केवल आर्थिक लाभ प्रदान करता है बल्कि स्थानीय संस्कृति और पर्यावरण के संरक्षण में भी योगदान देता है।

उद्यमिता महिला और युवा सशक्तिकरण का एक प्रभावी साधन है। महिलाओं के लिए उद्यमिता न केवल आर्थिक स्वतंत्रता लाती है बल्कि सामाजिक स्थिति में भी सुधार करती है। खाद्य प्रसंस्करण, सिलाई-कढ़ाई, ब्यूटी पार्लर, और डिजिटल सेवाओं जैसे क्षेत्रों में महिलाएं सफल उद्यमी बन रही हैं।

सरकारी योजनाओं जैसे मुद्रा योजना, स्टैंड-अप इंडिया, और महिला उद्यमिता योजना के माध्यम से उन्हें आवश्यक वित्तीय सहायता मिल रही है। युवाओं के लिए उद्यमिता शिक्षा और रोजगार के बीच एक सेतु का काम करती है। आधुनिक तकनीक और डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग करके वे नवाचार कर सकते हैं। ई-कॉमर्स, डिजिटल मार्केटिंग, मोबाइल रिपेयरिंग, और तकनीकी सेवाओं में युवाओं की भागीदारी बढ़ रही है। स्किल इंडिया मिशन और प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के माध्यम से उन्हें आवश्यक प्रशिक्षण मिल रहा है। निष्कर्ष रूप में, ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए कृषि के साथ-साथ गैर-कृषि क्षेत्रों में भी निवेश और विकास आवश्यक है। महिला और युवा उद्यमिता को प्रोत्साहित करके, और उन्हें उचित सहायता प्रदान करके, हम एक समृद्ध और स्थायी ग्रामीण अर्थव्यवस्था का निर्माण कर सकते हैं।

रोजगार सृजन की सरकारी योजनाएँ

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) भारत सरकार की सबसे महत्वाकांक्षी योजनाओं में से एक है, जो 2005 में शुरू की गई थी। यह योजना प्रत्येक ग्रामीण परिवार के वयस्क सदस्यों को वर्ष में कम से कम 100 दिन का गारंटीशुदा रोजगार प्रदान करती है। इसकी ग्राम स्तर पर प्रासंगिकता इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह सीधे तौर पर ग्रामीण गरीबी उन्मूलन में योगदान देती है। यह योजना न केवल आजीविका सुरक्षा प्रदान करती है बल्कि ग्रामीण अवसंरचना के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मनरेगा के तहत किए जाने वाले कार्यों में जल संरक्षण, सूखा प्रबंधन, बाढ़ नियंत्रण, भूमि विकास, और ग्रामीण कनेक्टिविटी शामिल हैं। इन कार्यों से न केवल तत्काल रोजगार मिलता है बल्कि दीर्घकालिक आर्थिक लाभ भी प्राप्त होते हैं। महिलाओं की भागीदारी इस योजना में विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जो महिला सशक्तिकरण में योगदान देती है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह योजना मजदूरों के पलायन को रोकने में भी सहायक है।

प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना का उद्देश्य युवाओं को उद्योग-संगत कौशल प्रशिक्षण प्रदान करना है। ग्रामीण क्षेत्रों में इस योजना की प्रासंगिकता इसलिए अधिक है क्योंकि यहाँ के युवाओं को तकनीकी और व्यावसायिक कौशल की कमी के कारण रोजगार के अवसर सीमित होते हैं। यह योजना कृषि, पशुपालन, हस्तशिल्प, इलेक्ट्रॉनिक्स, आटोमोबाइल, रिटेल, और हॉस्पिटैलिटी जैसे विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्रदान करती है। ग्रामीण युवाओं के लिए यह योजना विशेष रूप से लाभकारी है क्योंकि यह स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार कौशल विकास कार्यक्रम संचालित करती है। कृषि आधारित गतिविधियों, पारंपरिक हस्तशिल्प, और स्थानीय उद्योगों से जुड़े कौशल विकास के माध्यम से युवाओं को आत्मनिर्भर बनाने में यह योजना सहायक है। प्रशिक्षण के साथ-साथ प्रमाणन भी प्रदान किया जाता है, जो रोजगार की संभावनाओं को बढ़ाता है।

स्टार्टअप इंडिया योजना का उद्देश्य उद्यमिता को बढ़ावा देना है, जबकि मुद्रा योजना सूक्ष्म और लघु उद्यमों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में इन योजनाओं की प्रासंगिकता

इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यहाँ पारंपरिक व्यवसायों के आधुनिकीकरण और नवीन उद्यमों के विकास की अपार संभावनाएं हैं। मुद्रा योजना के तहत तीन श्रेणियां हैं शिशु (50, 000 रुपये तक), किशोर (50, 000 से 5 लाख रुपये तक), और तरुण (5 से 10 लाख रुपये तक)। यह योजना ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे व्यापारियों, कारीगरों, और सेवा प्रदाताओं के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। कृषि आधारित व्यवसाय, पशुपालन, मत्स्य पालन, खाद्य प्रसंस्करण, और हस्तशिल्प जैसे क्षेत्रों में इन योजनाओं का व्यापक उपयोग हो रहा है। स्टार्टअप इंडिया योजना ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीकी नवाचार को बढ़ावा देती है। कृषि तकनीक, ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, और ई-कॉमर्स जैसे क्षेत्रों में नवीन समाधान विकसित करने में यह योजना सहायक है। डिजिटल इंडिया के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट कनेक्टिविटी के विस्तार से इन योजनाओं की प्रभावशीलता और भी बढ़ गई है।

प्रवासन: स्वरूप, प्रभाव और सामाजिक बदलाव

भारत में प्रवासन एक जटिल और बहुआयामी सामाजिक-आर्थिक घटना है जो देश के विकास और सामाजिक ढांचे को गहराई से प्रभावित करती है। मौसमी प्रवासन मुख्यतः कृषि आधारित होता है, जहाँ किसान और कृषि मजदूर फसल की कटाई, बुवाई और अन्य कृषि गतिविधियों के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं। यह प्रवासन चक्रीय प्रकृति का होता है और कृषि कैलेंडर के अनुसार होता है। उदाहरण के लिए, पंजाब और हरियाणा में धान की रोपाई के समय पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार और झारखंड से हजारों मजदूर आते हैं। अंतरराज्यीय प्रवासन भारत में सबसे व्यापक रूप है, जहाँ लोग रोजगार की तलाश में एक राज्य से दूसरे राज्य में जाते हैं। यह मुख्यतः कम विकसित राज्यों से अधिक विकसित राज्यों की ओर होता है। बिहार, उत्तर प्रदेश, ओडिशा, झारखंड और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों से लोग महाराष्ट्र, गुजरात, दिल्ली, पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में काम करने जाते हैं। निर्माण क्षेत्र, विनिर्माण उद्योग, सेवा क्षेत्र और घरेलू काम में इन प्रवासी मजदूरों की महत्वपूर्ण भूमिका है। अंतरराष्ट्रीय प्रवासन में भारत से मुख्यतः खाड़ी देशों, यूरोप, अमेरिका, कनाडा और ऑस्ट्रेलिया में लोग जाते हैं। यह दो प्रकार का होता है - कुशल और अकुशल श्रमिकों का प्रवासन। कुशल श्रमिकों में इंजीनियर, डॉक्टर, आईटी प्रोफेशनल और अन्य तकनीकी विशेषज्ञ शामिल हैं, जबकि अकुशल श्रमिकों में मुख्यतः खाड़ी देशों में काम करने वाले मजदूर, घरेलू कामगार और सेवा क्षेत्र के कर्मचारी शामिल हैं।

ग्रामीण परिवारों पर प्रवासन का प्रभाव (आर्थिक, सामाजिक, भावनात्मक)

ग्रामीण परिवारों पर प्रवासन का आर्थिक प्रभाव अत्यंत गहरा है। प्रवासी श्रमिकों द्वारा भेजे गए धन से गाँवों में जीवन स्तर में सुधार होता है। यह धन कृषि में निवेश, मकान निर्माण, बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं में खर्च होता है। कई परिवारों के लिए यह धन मुख्य आय का स्रोत बन गया है, जिससे गरीबी में कमी आई है। कृषि की अनिश्चितता और कम आय के कारण प्रवासन एक आवश्यक विकल्प बन गया है। प्रवासी श्रमिकों की आय से न केवल उनके परिवार की आर्थिक

स्थिति सुधरती है, बल्कि स्थानीय अर्थव्यवस्था भी मजबूत होती है। सामाजिक प्रभाव के दृष्टिकोण से प्रवासन ने ग्रामीण समाज की संरचना को बदल दिया है। पारंपरिक जाति-आधारित व्यवसायों में परिवर्तन आया है और सामाजिक गतिशीलता बढ़ी है। प्रवासी श्रमिकों को नए विचारों, तकनीकों और जीवनशैली का अनुभव मिलता है, जिससे ग्रामीण समाज में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया तेज होती है। महिलाओं की भूमिका में भी बदलाव आया है, क्योंकि पुरुषों के प्रवासन के कारण वे घर और खेत की जिम्मेदारी संभालने को मजबूर हैं। इससे महिला सशक्तिकरण की दिशा में सकारात्मक परिवर्तन हुए हैं। भावनात्मक प्रभाव की दृष्टि से प्रवासन परिवारों के लिए चुनौतीपूर्ण है। पारिवारिक अलगाव, बच्चों की देखभाल में कमी, बुजुर्गों की अकेलापन की समस्या और पति-पत्नी के बीच दूरी जैसी समस्याएं उत्पन्न होती हैं। बच्चों पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है, जो अपने पिता या माता से लंबे समय तक अलग रहते हैं। इससे पारिवारिक रिश्तों में तनाव और मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएं हो सकती हैं।

प्रवासी श्रमिकों की चुनौतियाँ और कोविड-19 के बाद की स्थिति

प्रवासी श्रमिकों की मुख्य चुनौतियों में काम की अनिश्चितता, कम मजदूरी, खराब आवास व्यवस्था, स्वास्थ्य सेवाओं की कमी, भाषा की समस्या और सामाजिक भेदभाव शामिल हैं। उन्हें अक्सर स्थानीय लोगों से भेदभाव का सामना करना पड़ता है और मूलभूत सुविधाओं से वंचित रहना पड़ता है। कानूनी सुरक्षा का अभाव और शोषण की समस्या भी गंभीर चुनौतियाँ हैं। कोविड-19 महामारी ने प्रवासी श्रमिकों की दुर्दशा को और भी उजागर कर दिया। राष्ट्रीय लॉकडाउन के दौरान लाखों प्रवासी श्रमिकों को अचानक बेरोजगारी का सामना करना पड़ा और वे अपने गाँवों को वापस जाने के लिए मजबूर हुए। परिवहन सुविधाओं की कमी के कारण कई श्रमिकों को सैकड़ों किलोमीटर पैदल चलना पड़ा। इस दौरान सरकारी नीतियों की कमियाँ स्पष्ट हो गईं और प्रवासी श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की आवश्यकता महसूस की गई। कोविड-19 के बाद की स्थिति में प्रवासी श्रमिकों की स्थिति धीरे-धीरे सुधर रही है, लेकिन अभी भी कई चुनौतियाँ बनी हुई हैं। सरकार ने प्रवासी श्रमिकों के लिए राष्ट्रीय डेटाबेस बनाने, स्वास्थ्य बीमा योजनाओं का विस्तार करने और आवास सुविधाओं में सुधार के लिए कदम उठाए हैं। हालांकि, इन नीतियों के प्रभावी कार्यान्वयन में अभी भी समय लगेगा। प्रवासी श्रमिकों के अधिकारों की सुरक्षा, उनकी सामाजिक सुरक्षा और कल्याण के लिए एक व्यापक नीति की आवश्यकता है जो उनकी गरिमा और मानवाधिकारों को सुनिश्चित करे।

समाधान और नीति सुझाव

भारत की अर्थव्यवस्था में ग्रामीण क्षेत्रों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, जहाँ देश की लगभग 70% जनसंख्या निवास करती है। इन क्षेत्रों में आजीविका आधारित योजनाओं का समेकन न केवल ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक है, बल्कि राष्ट्रीय विकास की आधारशिला भी है।

वर्तमान समय में जब कोविड-19 महामारी के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था में नई चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं, तो आजीविका आधारित योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन और समेकन और भी आवश्यक हो गया है। आजीविका आधारित योजनाओं के समेकन का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण समुदायों को स्थायी और टिकाऊ आर्थिक अवसर प्रदान करना है। इसके लिए विभिन्न सरकारी योजनाओं जैसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, राष्ट्रीय आजीविका मिशन, प्रधानमंत्री मुद्रा योजना, और स्वयं सहायता समूह कार्यक्रमों के बीच तालमेल बिठाना आवश्यक है। इन योजनाओं का एकीकृत दृष्टिकोण अपनाकर ग्रामीण समुदायों को अधिक प्रभावी रूप से लाभान्वित किया जा सकता है।

रोजगार सूचकांक और स्थानीय संसाधनों पर आधारित योजना निर्माण

चित्र 9.2: रोजगार सूचकांक और स्थानीय संसाधन योजना

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सूचकांक का विकास एक व्यापक प्रक्रिया है जो स्थानीय संसाधनों की पहचान और उनके अधिकतम उपयोग पर आधारित है। प्रत्येक गाँव की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, मिट्टी की गुणवत्ता, जल संसाधन, और पारंपरिक कौशल को ध्यान में रखते हुए रोजगार के अवसरों की पहचान करना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, मैदानी क्षेत्रों में कृषि आधारित उद्योग, पहाड़ी क्षेत्रों में बागवानी और जड़ी-बूटी उत्पादन, तटीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन और नमक उत्पादन जैसे व्यवसाय विकसित किए जा सकते हैं। रोजगार सूचकांक में श्रम की उपलब्धता, कुशलता का स्तर, बाजार की पहुंच, और तकनीकी सुविधाओं का आकलन शामिल होना चाहिए। इसके साथ ही, स्थानीय उद्यमिता की संभावनाओं का मूल्यांकन भी आवश्यक है। डिजिटल

प्लेटफॉर्म का उपयोग करके रोजगार सूचकांक को नियमित रूप से अपडेट किया जा सकता है, जिससे नीति निर्माताओं को वास्तविक समय की जानकारी मिल सके। स्थानीय संसाधनों पर आधारित योजना निर्माण में समुदायिक भागीदारी सुनिश्चित करना आवश्यक है। ग्राम सभाओं, स्वयं सहायता समूहों, और स्थानीय संस्थानों के माध्यम से समुदाय की आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं को समझना चाहिए। इससे योजनाओं की प्रभावशीलता और स्थायित्व दोनों में वृद्धि होती है।

प्रवासियों के पुनर्वास और कौशल उपयोग की नीति

कोविड-19 महामारी के दौरान करोड़ों प्रवासी मजदूरों का अपने गाँवों में वापस लौटना एक महत्वपूर्ण घटना थी। इस स्थिति ने प्रवासियों के पुनर्वास और उनके कौशल के उपयोग की नीति की आवश्यकता को उजागर किया। प्रवासी मजदूरों के पास विभिन्न प्रकार के तकनीकी कौशल होते हैं जो उन्होंने शहरी क्षेत्रों में काम करते समय सीखे हैं। इन कौशलों का उपयोग करके ग्रामीण क्षेत्रों में नए रोजगार के अवसर सृजित किए जा सकते हैं। प्रवासियों के पुनर्वास की नीति में कौशल मैपिंग एक महत्वपूर्ण घटक है। प्रत्येक प्रवासी के कौशल, अनुभव, और रुचियों का डेटाबेस तैयार करना चाहिए। इसके आधार पर उन्हें उपयुक्त रोजगार के अवसर प्रदान किए जा सकते हैं। निर्माण कार्य में अनुभवी प्रवासी मजदूरों का उपयोग ग्रामीण अवसंरचना विकास में किया जा सकता है। इसी प्रकार, मैकेनिक, इलेक्ट्रिशियन, और अन्य तकनीकी कौशल रखने वाले प्रवासियों को स्थानीय उद्यमिता के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। कौशल उपयोग की नीति में प्रशिक्षण और पुनर्प्रशिक्षण कार्यक्रमों का समावेश आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकताओं के अनुसार प्रवासियों के कौशल को अपग्रेड किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, पारंपरिक कृषि के साथ-साथ आधुनिक तकनीकों का प्रशिक्षण देकर उन्हें कृषि उद्यमी बनने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

एकीकृत दृष्टिकोण और भविष्य की संभावनाएं

ग्राम स्तर पर आजीविका आधारित योजनाओं के सफल समेकन के लिए एकीकृत दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। इसमें केंद्र सरकार, राज्य सरकार, स्थानीय प्रशासन, और समुदायिक संगठनों के बीच प्रभावी समन्वय स्थापित करना शामिल है। डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग करके योजनाओं की निगरानी और मूल्यांकन को मजबूत बनाया जा सकता है। वित्तीय समावेशन भी एक महत्वपूर्ण पहलू है। बैंकिंग सेवाओं, बीमा, और क्रेडिट सुविधाओं की पहुंच को बढ़ाकर ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा दिया जा सकता है। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना जैसी योजनाओं के माध्यम से छोटे और सूक्ष्म उद्यमों को वित्तीय सहायता प्रदान की जा सकती है। भविष्य में, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग का उपयोग करके रोजगार सूचकांक को और भी परिष्कृत बनाया जा सकता है। इससे मांग और आपूर्ति के बीच बेहतर मैचिंग संभव होगी। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को देखते हुए,

टिकाऊ और पर्यावरण अनुकूल आजीविका विकल्पों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। अंततः, ग्राम स्तर पर आजीविका आधारित योजनाओं का समेकन एक निरंतर प्रक्रिया है जिसमें नवाचार, अनुकूलन, और सामुदायिक भागीदारी की आवश्यकता है। इस दृष्टिकोण से न केवल ग्रामीण गरीबी में कमी आएगी, बल्कि राष्ट्रीय विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान मिलेगा।

केस स्टडी

झारखंड और बिहार के प्रवासी श्रमिकों की स्थिति: चुनौतियां और अवसर

झारखंड और बिहार के प्रवासी श्रमिकों की स्थिति भारत के आर्थिक और सामाजिक ढांचे का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इन दोनों राज्यों से हर साल लाखों लोग बेहतर आर्थिक अवसरों की तलाश में महाराष्ट्र, गुजरात, दिल्ली, पंजाब, और दक्षिण भारतीय राज्यों की ओर पलायन करते हैं। इस पलायन की मुख्य वजह स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसरों की कमी, कृषि पर निर्भरता, और औद्योगिक विकास की धीमी गति है। झारखंड के आदिवासी और दलित समुदायों के लोग मुख्यतः निर्माण कार्य, कृषि मजदूरी, और फैक्ट्री में काम करने के लिए पलायन करते हैं। इसी प्रकार बिहार के मुजफ्फरपुर, गया, नालंदा, और अन्य जिलों से आने वाले श्रमिक भी इसी तरह के कार्यों में संलग्न होते हैं। इन श्रमिकों की स्थिति अक्सर चुनौतीपूर्ण होती है क्योंकि उन्हें उचित मजदूरी नहीं मिलती, रहने की स्थिति खराब होती है, और सामाजिक सुरक्षा का अभाव होता है। कोविड-19 महामारी के दौरान इन प्रवासी श्रमिकों की दुर्दशा उजागर हुई जब लाखों लोग अपने घर वापस लौटने को मजबूर हुए। इस संकट ने सरकार और समाज का ध्यान इन श्रमिकों की बुनियादी समस्याओं की ओर आकर्षित किया। वर्तमान में सरकार द्वारा प्रवासी श्रमिकों के लिए विभिन्न योजनाओं का संचालन किया जा रहा है, जिसमें कौशल विकास, रोजगार गारंटी, और वापस आने वाले श्रमिकों के लिए स्थानीय रोजगार सृजन शामिल है।

महिला स्वयं सहायता समूहों द्वारा संचालित व्यवसाय: सशक्तिकरण की नई दिशा

महिला स्वयं सहायता समूहों ने झारखंड और बिहार में आर्थिक सशक्तिकरण की एक नई कहानी लिखी है। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के तहत गठित ये समूह न केवल बचत और ऋण के माध्यम से महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार ला रहे हैं, बल्कि उद्यमिता और व्यावसायिक गतिविधियों के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इन समूहों द्वारा संचालित व्यवसायों में कृषि आधारित उद्योग, हस्तशिल्प, खाद्य प्रसंस्करण, पशुपालन, और सेवा क्षेत्र की गतिविधियां शामिल हैं। उदाहरण के लिए, झारखंड के गुमला जिले में महिला समूहों द्वारा संचालित मुर्गी पालन और बकरी पालन के व्यवसाय न केवल उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार ला रहे हैं, बल्कि स्थानीय बाजार में प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थों की आपूर्ति भी कर रहे हैं। बिहार में महिला स्वयं सहायता समूहों द्वारा संचालित खाद्य प्रसंस्करण इकाइयां, विशेषकर आम, लीची, और अन्य फलों का प्रसंस्करण, न केवल कृषि अपशिष्ट को कम कर रहा है बल्कि किसानों को उनकी फसल का बेहतर मूल्य भी

दिला रहा है। इन समूहों द्वारा तैयार किए गए उत्पादों का विपणन अब राष्ट्रीय स्तर पर हो रहा है, जो इन महिलाओं की उद्यमिता क्षमता का प्रमाण है। हस्तशिल्प के क्षेत्र में भी महिला समूहों का योगदान उल्लेखनीय है। झारखंड की आदिवासी महिलाओं द्वारा तैयार किए गए बांस और लकड़ी के हस्तशिल्प उत्पाद, और बिहार की महिलाओं द्वारा बनाए गए मधुबनी पेंटिंग और अन्य पारंपरिक शिल्प न केवल उनकी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित कर रहे हैं बल्कि आर्थिक स्वतंत्रता भी प्रदान कर रहे हैं।

सफल ग्राम पंचायत की रोजगार पहल: समुदायिक विकास का आदर्श

झारखंड के खूंटी जिले की एक ग्राम पंचायत ने रोजगार सृजन के क्षेत्र में एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। इस ग्राम पंचायत ने स्थानीय संसाधनों का उपयोग करते हुए एक समग्र रोजगार रणनीति विकसित की है जो न केवल प्रवासी श्रमिकों को वापस लौटने के लिए प्रेरित कर रही है बल्कि युवाओं को भी स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर प्रदान कर रही है। इस ग्राम पंचायत की पहल में मुख्यतः कृषि आधारित उद्योगों का विकास, पशुपालन को बढ़ावा, और वन आधारित उत्पादों का मूल्य संवर्धन शामिल है। पंचायत ने स्थानीय युवाओं को कौशल प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए एक प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना की है, जहां मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, और कृषि तकनीकी का प्रशिक्षण दिया जाता है। इस पहल की सफलता का मुख्य कारण समुदायिक भागीदारी और पारदर्शिता है। ग्राम सभा की नियमित बैठकों में रोजगार की योजनाओं पर चर्चा होती है और स्थानीय लोगों के सुझावों को शामिल किया जाता है। पंचायत ने महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का प्रभावी उपयोग करते हुए न केवल रोजगार के अवसर सृजित किए हैं बल्कि बुनियादी ढांचे का विकास भी किया है। इस ग्राम पंचायत की एक अन्य उल्लेखनीय पहल है किसान उत्पादक संगठन की स्थापना, जो स्थानीय किसानों को उनकी फसल का बेहतर मूल्य दिलाने में सहायक है। इस संगठन के माध्यम से किसान अपनी फसल को सीधे बाजार में बेच सकते हैं और मध्यस्थों की भूमिका को कम कर सकते हैं। इन तीनों पहलुओं का समग्र प्रभाव झारखंड और बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में एक सकारात्मक परिवर्तन ला रहा है। प्रवासी श्रमिकों की वापसी, महिला सशक्तिकरण, और स्थानीय रोजगार सृजन के माध्यम से इन राज्यों में एक नया विकास मॉडल उभर रहा है जो टिकाऊ और समावेशी विकास की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

निष्कर्ष

भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था आज परिवर्तन के एक महत्वपूर्ण दौर से गुजर रही है, जहाँ पारंपरिक कृषि-आधारित आजीविका के साथ-साथ गैर-कृषि क्षेत्रों का विस्तार आवश्यक हो गया है। प्रवासन, बेरोजगारी और कृषि संकट जैसी चुनौतियों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि ग्रामीण विकास के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाना अनिवार्य है। महिला स्वयं सहायता समूहों, कौशल विकास योजनाओं, और स्थानीय संसाधनों पर आधारित रोजगार रणनीतियों ने यह सिद्ध किया है कि यदि

समुदायिक भागीदारी और नीतिगत समन्वय को सशक्त बनाया जाए तो आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था संभव है। भविष्य की दिशा में एकीकृत आजीविका योजनाएँ, प्रवासी श्रमिकों का कौशल उपयोग, और नवाचार आधारित उद्यमिता ग्रामीण भारत को सशक्त, समावेशी और सतत विकास की राह पर अग्रसर कर सकती हैं।

संदर्भ

- अबे, के. (2020). अवसर के परिदृश्य: उप-सहारा अफ्रीका में ग्रामीण अर्थव्यवस्था के साथ युवाओं के जुड़ाव पर एक नई खिड़की। *विकास अध्ययन जर्नल.* https://doi.org/10.1080/00220388.2020.1808195

- अट्टा-ओवसु, बी., सेनगुप्ता, ए., और मैकलेवी, टी. (2024). वहाँ और वापस: अस्थायी श्रम प्रवास की गतिशीलता, ग्रामीण भारत से अंतर्दृष्टि। *समाजशास्त्र में सीमाएँ, 9,* 1422602.

- अमारे, एम. (2024). युवा प्रवास और रोजगार विकल्पों में भूमि उत्तराधिकार की भूमिका: ग्रामीण नाइजीरिया से साक्ष्य। *यूरोपीय विकास अनुसंधान जर्नल, 36(1),* 135–160.

- कै, सी., लिम, बी.एफ.वाई., और मंसूर, के. (2024). प्रवासियों की स्थायी आजीविका को प्रभावित करने वाले कारकों का मूल्यांकन: दक्षिण-पश्चिम चीन से साक्ष्य। *पर्यावरण, विकास और स्थिरता,* 1–31.

- चौधरी, एस., मजूमदार, एस. के., और चौधरी, एम. (2024). भारत में ग्रामीण बाह्य-प्रवासन और प्रवासी श्रमिकों की रोज़गार स्थिति में सामाजिक-आर्थिक और जनसांख्यिकीय अंतरों की जाँच। *जनसांख्यिकी भारत, 53(1),* 12–30.

- जीई, जी., हुआंग, वाई., और चेन, क्यू. (2025). ग्रामीण उद्योग और रोज़गार की समन्वित विकास विशेषताएँ: चोंगकिंग, चीन का एक केस स्टडी। *आईएसपीआरएस इंटरनेशनल जर्नल ऑफ जियो-इंफॉर्मेशन, 14(2),* 48.

- तुहोल्स्के, सी. (2024). जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा और प्रवासन को जोड़ने के लिए एक ढाँचा: कृषि मार्ग का अन्वेषण। *जनसंख्या एवं पर्यावरण, 46(1),* 8.

- न्याथी, डी., एनडलोवु, जे., और डीज़विंबवो, एम. (2025). उप-सहारा में गैर-कृषिकरण का सामाजिक-आर्थिक प्रभाव: ग्रामीण आजीविका और रोज़गार पर पुनर्विचार, सतत् *विकास कानून और नीति जर्नल, 16(1),* 25–51.

- निवा, टी., ताकाहाशी, एस., और निशिमोटो, एफ. (2025). लाओस के ग्रामीण गाँव से बैंकॉक, थाईलैंड तक अंतर्राष्ट्रीय श्रम प्रवास: गृह गाँव के साथ संबंधों पर ध्यान केंद्रित करना।

In लाओस में लघु-स्तरीय समाजों की जनसंख्या गतिशीलता और आजीविका परिवर्तन (pp. 99–116). सिंगापुर: स्प्रिंगर नेचर सिंगापुर.

- भुसाल, टी. पी. (2025). ग्रामीण लोगों की आजीविका पर मौसमी श्रम प्रवास का प्रभाव। *जर्नल ऑफ पॉपुलेशन एंड डेवलपमेंट, 6(1),* 107–124.

- फिनलेसन, के. (2025). ग्रामीण कम्बोडियनों के लिए दोहरे रोज़गार स्थल: कौशल, दूरी और प्रवास पर गैर-मौद्रिक प्रतिफल। *जनसंख्या, स्थान और जगह, 31(2),* e70016.

- बेल्लमपल्ली, पी.एन., और यादव, एन. (2023). ग्रामीण भारत से संकटपूर्ण पलायन: आजीविका की वास्तविकताओं और उसे कम करने के उपायों की खोज। *मानवाधिकार और सामाजिक कार्य जर्नल, 8(3),* 262–272.

- बेल्लमपल्ली, पी.एन., और यादव, एन. (2024). ग्रामीण कर्नाटक, भारत में गरीबी से प्रेरित प्रवास की खोज: नीतियों और कार्यक्रमों के प्रभावी कार्यान्वयन का आह्वान। *अंतर्राष्ट्रीय सामुदायिक और सामाजिक विकास जर्नल, 6(2),* 166–184.

- वांग, एस., गुओ, सी., और यिन, एल. (2025). डिजिटल साक्षरता, श्रम प्रवास और रोज़गार, और ग्रामीण घरेलू आय असमानताएँ। *अर्थशास्त्र और वित्त की अंतर्राष्ट्रीय समीक्षा, 99,* 104040.

- सलाम, एस. (2024). कृषि परिवर्तन को गति देना: बांग्लादेश में ग्रामीण आजीविका विविधीकरण रणनीतियों के प्रभाव का अनावरण। *एशियाई अर्थशास्त्र, व्यवसाय और लेखा जर्नल, 24(8),* 383–399.

- सोलोमन, डी. (2024). भारत, नेपाल और बांग्लादेश में छोटे किसानों के लिए मौसम जोखिम प्रबंधन को आकार देने में ग्रामीण चक्रीय प्रवास की भूमिका। *वैश्विक पर्यावरण परिवर्तन, 89,* 102937.

- सुनाम, आर. (2025). कृषि में युवाओं की भागीदारी का विश्लेषण: ग्रामीण नेपाल में भूमि, श्रम गतिशीलता और युवाओं की आजीविका। *जर्नल ऑफ एग्रेरियन चेंज, 25(1),* e12611.

- हसन, एम. ए. (2023). वापस लौटे प्रवासियों के लिए एक स्थायी आजीविका विकल्प के रूप में ग्रामीण उद्यमिता: संभावनाओं और चुनौतियों की समीक्षा। *लघु व्यवसाय रणनीति जर्नल, 33(1),* 20–35.

10

ग्रामीण आजीविका एवं पलायन का अंतर्संबंध: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. अमित आठ्या

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.121-127
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

भारत की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है, जहाँ आजीविका का मुख्य आधार कृषि एवं कृषि-आधारित गतिविधियाँ हैं। इन आजीविकाओं की विशेषता प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भरता, परंपरागत कौशल का उपयोग और मौसमी अस्थिरता है, जिसके कारण ग्रामीण परिवार निम्न आय, आर्थिक असुरक्षा और बेरोज़गारी जैसी समस्याओं से जूझते हैं। परिणामस्वरूप, पलायन विशेषकर ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों की ओर भारत में एक व्यापक प्रवृत्ति बन गई है। पलायन के प्रमुख कारणों में सीमित रोजगार अवसर, भूमिहीनता, गरीबी, प्राकृतिक आपदाएँ, सामाजिक असमानताएँ तथा शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी सुविधाओं की कमी शामिल हैं। यद्यपि पलायन से प्रेषण राशि द्वारा आय में वृद्धि होती है, किंतु यह ग्रामीण क्षेत्रों में श्रमशक्ति के ह्रास और शहरी क्षेत्रों में भीड़भाड़, प्रतिस्पर्धा और अव्यवस्थित शहरीकरण जैसी समस्याएँ उत्पन्न करता है। इस चुनौती का समाधान कृषि और गैर-कृषि रोजगार अवसरों के सृजन, कौशल विकास, स्वरोजगार एवं उद्यमिता को प्रोत्साहन, तथा सरकारी योजनाओं (जैसे मनरेगा और एनआरएलएम) के प्रभावी क्रियान्वयन में निहित है। आधारभूत सुविधाओं शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, बिजली और डिजिटल सेवाओं की उपलब्धता भी पलायन रोकने में सहायक सिद्ध हो सकती है। अतः ग्रामीण आजीविका का सुदृढ़ीकरण ही स्थायी समाधान है, जो ग्रामीण समाज की स्थिरता और देश के समग्र विकास के लिए आवश्यक है।

मुख्य शब्द: ग्रामीण रोजगार, प्राकृतिक संसाधन, कृषि-आधारित गतिविधियाँ, गैर-कृषि आजीविका

प्रस्तावना

ग्रामीण जीवन का आधार आजीविका है, जिसे उन साधनों, संसाधनों और गतिविधियों का समुच्चय माना जाता है, जिनके माध्यम से ग्रामीण परिवार अपने जीवन-निर्वाह तथा भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं (मीना, 2018)। ग्रामीण रोजगार उन अवसरों को निरूपित करता है जिनसे आय अथवा मजदूरी प्राप्त होती है। यह रोजगार स्वरूप में विविध हो सकता है जैसे - नियमित मजदूरी, दैनिक कार्य अनुसार मजदूरी, कृषि-चक्र आधारित मौसमी कार्य अथवा लघु व्यापार और छोटे उद्यमों के रूप में स्वरोजगार (शर्मा, 2016) आदि। ग्रामीण आजीविका का प्रमुख आधार प्राकृतिक संसाधन हैं, जिनमें भूमि, जल, वन और पशुधन मुख्य हैं (देव, 2019)। अधिकांश ग्रामीण परिवार आज भी कृषि और कृषि-आधारित गतिविधियों जैसे फसल उत्पादन, पशुपालन, मत्स्य पालन, बागवानी, रेशम उत्पादन और मधुमक्खी पालन पर निर्भर हैं। इसके अतिरिक्त, गैर-कृषि आजीविका विकल्प जैसे- लघु व्यापार, दर्ज़ीगिरी, लोहारगीरी, बढ़ईगिरी, सैलून सेवाएँ, ग्राहक सेवा केंद्र, हस्तशिल्प, कुटीर उद्योग, बुनाई-कढ़ाई तथा लकड़ी एवं बांस उत्पाद निर्माणग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। विविध प्रकार के दिहाड़ी श्रम एवं अन्य स्थानीय रोजगार अवसर भी ग्रामीण परिवारों की आय वृद्धि में सहायक होते हैं। इस प्रकार, ग्रामीण आजीविका केवल जीविका का साधन न होकर, ग्रामीण समाज की सामाजिक-आर्थिक संरचना और सांस्कृतिक धरोहर का भी अभिन्न अंग है।

ग्रामीण आजीविका की विशेषताएँ

ग्रामीण आजीविका की मुख्य विशेषता यह है कि वे परंपरागत प्रथाओं और स्थानीय संसाधनों पर आधारित होती हैं, जिनमें परिवार के सभी सदस्य भाग लेते हैं। परंतु इनकी सबसे बड़ी सीमा इनका मौसमी और अस्थिर होना है (शर्मा, 2016), जिसके कारण आय कम, आर्थिक असुरक्षा अधिक और स्थायित्व पर निरंतर संकट बना रहता है। इसे बिन्दुवार विस्तृत रूप से समझते हैं:

- **प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भरता**- भारत में ग्रामीण आजीविका का मुख्य आधार भूमि, जल, वन एवं पशुधन जैसे प्राकृतिक संसाधन हैं। ग्रामीण परिवारों का एक बड़ा हिस्सा अपनी आजीविका के लिए कृषि, पशुपालन तथा वनोपज पर निर्भर करता है। साथ ही, जलवायु परिस्थितियाँ, वर्षा के पैटर्न और प्राकृतिक आपदाएँ ग्रामीण आजीविका की स्थिरता एवं निरंतरता पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती हैं।

- **परंपरागत एवं स्थानीय कौशल का उपयोग**- ग्रामीण समुदाय अपनी आजीविका बनाए रखने हेतु पारंपरिक प्रणालियों और स्थानीय कौशलों का उपयोग करते हैं। इनमें पारंपरिक खेती की विधियाँ, हस्तशिल्प, बुनाई, मिट्टी के बर्तन तथा बांस एवं लकड़ी की वस्तुओं का निर्माण शामिल है। महत्वपूर्ण यह है कि ऐसे कौशल पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते हैं, जिससे स्थानीय सांस्कृतिक और व्यावसायिक धरोहर संरक्षित रहती है।

- **मौसमी एवं अस्थिरता**- इसके अलावा, कृषि एवं उससे जुड़ी गतिविधियाँ स्वभावतः मौसमी होती हैं और वर्षा तथा मौसम में उतार-चढ़ाव पर काफी हद तक निर्भर करती हैं। परिणामस्वरूप, फसल की विफलता या अपर्याप्त वर्षा जैसी परिस्थितियाँ आय एवं रोजगार के अवसरों में गंभीर व्यवधान उत्पन्न करती हैं। इस संदर्भ में, ग्रामीण आजीविका को प्रायः अस्थिर और असुरक्षित माना जाता है।

- **परिवार-आधारित श्रम**- ग्रामीण आजीविका की एक प्रमुख विशेषता यह है कि आय अर्जन गतिविधियों में परिवार के सभी सदस्य सामूहिक रूप से भाग लेते हैं (राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान, 2021)। पुरुषों के साथ-साथ महिलाएँ और बच्चे भी खेती, पशुपालन, घर-आधारित उद्यमों तथा हस्तशिल्प में सक्रिय योगदान करते हैं। इस प्रकार की समन्वित भागीदारी, जिसमें श्रम और जिम्मेदारियों का बंटवारा कर संवहनीय आजीविका को बनाए रखा जाता है।

- **कम आय और असुरक्षा**- ग्रामीण रोजगार प्रायः असंगठित, अनौपचारिक तथा अल्पकालिक प्रकृति का होता है। परिणामस्वरूप, ग्रामीण परिवारों की आय का स्तर शहरी परिवारों की तुलना में काफी कम रहता है। साथ ही, सामाजिक और आर्थिक असुरक्षा की अधिकता गरीबी की व्यापकता को और गहरा करती है तथा पलायन को बढ़ावा देती है। पलायन भारत के गाँवों की एक व्यापक तथा गंभीर प्रवृत्ति है, जिससे ग्रामीण आजीविका की स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

पलायन से आशय

पलायन को उन व्यक्तियों या परिवारों की गतिविधि के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो अपने स्थायी निवास स्थान से किसी अन्य भौगोलिक क्षेत्र में अस्थायी या स्थायी रूप से स्थानांतरित होते हैं (चंद, 2015)। जब यह स्थानांतरण परिस्थितिवश या आजीविका एवं जीवन निर्वाह की आवश्यकताओं के कारण होता है, तो इसे "पलायन" कहा जाता है। ग्रामीण भारत के संदर्भ में, पलायन प्रायः रोजगार के अवसरों की तलाश, आय वृद्धि, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच, तथा जीवन स्तर में सुधार की आकांक्षा से जुड़ा होता है। तथापि, पलायन केवल अवसर खोजने का परिणाम नहीं माना जा सकता; यह अक्सर गहरी संरचनात्मक बाध्यताओं का प्रतिबिंब भी होता है, जैसे कि प्राकृतिक आपदाओं के प्रति संवेदनशीलता, वर्षा पर आधारित कृषि पर निर्भरता, भूमिहीनता, गरीबी, ऋणग्रस्तता, और जमी हुई सामाजिक असमानताएँ। विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन एक गंभीर प्रवृत्ति है, जिसने न केवल ग्रामीण समाज की संरचना और पारिवारिक ताने-बाने को प्रभावित किया है, बल्कि शहरी क्षेत्रों पर भी अत्यधिक जनसंख्या दबाव, रोजगार की प्रतिस्पर्धा, अव्यवस्थित बस्तियों का विस्तार तथा संसाधनों पर असमान बोझ जैसी जटिल परिस्थितियाँ उत्पन्न की हैं।

पलायन के प्रकार

* ग्रामीण से शहरी पलायन- इसमें व्यक्तियों या परिवारों का गांवों से शहरो की ओर स्थानांतरण शामिल है, मुख्यतः बेहतर रोजगार अवसर, उच्च आय, और शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी सुविधाओं तक बेहतर पहुँच प्राप्त के लिए किया जाता है।

* ग्रामीण से ग्रामीण पलायन- ग्रामीण से ग्रामीण पलायन तब होता है जब व्यक्ति या परिवार किसी अन्य गांव में स्थानांतरित होते हैं, आमतौर पर इस तरह का पलायन कृषि मजदूरी, मौसमी कार्य या अन्य आजीविका-संबंधी गतिविधियों के लिए किया जाता है।

* मौसमी पलायन- मौसमी पलायन का तात्पर्य विशेष अवधि के लिए रोजगार हेतु अस्थायी स्थानांतरण से है, जैसे ईंट-भट्टा में कार्य करना, फसल कटाई के मौसम में श्रम करना, या अन्य समय-सीमित कार्य।

* स्थायी पलायन- स्थायी पलायन में व्यक्तियों या परिवारों का अपने मूल गांव या निवास स्थान से पूर्ण रूप से स्थानांतरण शामिल होता है, यह पलायन अक्सर स्थायी रोजगार, बेहतर जीवन स्तर, या सामाजिक-आर्थिक दबावों के कारण किया जाता है।

पलायन के प्रमुख कारण

भारत में पलायन विभिन्न कारणों से उत्पन्न होता है, जिन्हें मुख्य रूप से पाँच श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- **आर्थिक कारण** – ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सीमित, कृषि पर वर्षा निर्भर, भूमिहीनता और अस्थिर आय के कारण लोग बेहतर आजीविका की तलाश में शहरों की ओर पलायन करते हैं। गरीबी और ऋणग्रस्तता भी इसे बढ़ावा देती हैं।

- **प्राकृतिक कारण** – सूखा, बाढ़, भूकंप, चक्रवात जैसी प्राकृतिक आपदाएँ तथा जलवायु परिवर्तन कृषि को प्रभावित कर ग्रामीणों को वैकल्पिक आजीविका की तलाश पर मजबूर करते हैं।

- **सामाजिक कारण** – विवाह, परिवारिक जुड़ाव, जातीय या सामाजिक भेदभाव व असमानताएँ लोगों को अपने स्थान छोड़ने के लिए प्रेरित करती हैं।

- **राजनीतिक कारण** – युद्ध, दंगे, सांप्रदायिक तनाव, आतंकवाद या शासन असंतुलन सुरक्षित स्थानों की ओर पलायन को मजबूर करता है।

- **सुविधाओं की कमी** – शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी ढाँचे और अन्य सेवाओं की कमी ग्रामीणों को शहरी क्षेत्रों की ओर आकर्षित करती है (राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान, 2021)।

पलायन के प्रभाव

पलायन का प्रभाव द्विआयामी (सकारात्मक & नकारात्मक) होता है, जो व्यक्ति, परिवार, ग्रामीण क्षेत्र तथा शहरी क्षेत्र, सभी पर पड़ता है। मुख्यतः

I. ग्रामीण क्षेत्रों पर प्रभाव-

नकारात्मक: श्रमशक्ति (युवा वर्ग) का ह्रास होता है, कृषि उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा पारिवारिक विघटन और सामाजिक संरचना में असंतुलन उत्पन्न होता है।

सकारात्मक: प्रेषण राशि (पलायनकर्ताओं के द्वारा कमा कर परिवार को भेजी गयी राशि) के माध्यम से आय में वृद्धि तथा ग्रामीण परिवारों की उपभोग क्षमता और निवेश में सुधार होता है।

II. शहरी क्षेत्रों पर प्रभाव-

नकारात्मक: रोजगार की प्रतिस्पर्धा और अनौपचारिक क्षेत्र का विस्तार, झुग्गी-बस्तियों का विकास होता है और अव्यवस्थित शहरीकरण तथा संसाधनों और बुनियादी सुविधाओं पर दबाव पड़ता है।

सकारात्मक: सस्ती श्रमशक्ति की उपलब्धता निरंतर रहती है तथा शहरी अर्थव्यवस्था में योगदान और विविधता बनी रहती है।

पलायनकर्ताओं पर प्रभाव- अवसर मिलने पर आय, शिक्षा एवं जीवनस्तर में सुधार होता है परंतु, अनेक बार शोषण, असुरक्षा, अस्वास्थ्यकर परिस्थितियाँ और सामाजिक बहिष्करण का सामना करना पड़ता है।

ग्रामीण आजीविका और पलायन का अंतर्संबंध

भारत के ग्रामीण जीवन में आजीविका, रोजगार और पलायन एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए तत्व हैं। ग्रामीण जनसंख्या का अधिकांश हिस्सा आज भी कृषि और कृषि-आधारित गतिविधियों पर निर्भर है, जो स्वभावतः मौसमी और अनिश्चित हैं। सीमांत भूमि, सिंचाई की कमी, कम उत्पादन और बाजार तक सीमित पहुँच के कारण ग्रामीण आजीविका अस्थिर बनी रहती है।

आजीविका के सीमित साधन ⟶ रोजगार की कमी ⟶ पलायन में वृद्धि ⟶ ग्रामीण श्रमशक्ति में कमी ⟶ कृषि उत्पादन पर असर ⟶ पुनः आजीविका संकट

रोजगार के सीमित अवसर, अधरोजगारी और अल्प आय की स्थिति लोगों को बेहतर आजीविका की तलाश में शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन के लिए प्रेरित करती है। यह पलायन मुख्यतः आर्थिक असुरक्षा और ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के असंतुलन का परिणाम है। पलायन के प्रभाव दोहरे होते हैं

ग्रामीण क्षेत्रों में श्रमशक्ति की कमी और सामाजिक संरचना का कमजोर होना, तथा शहरी क्षेत्रों में अवसंरचनात्मक दबाव और असंगठित श्रम बाजार का विस्तार। इस प्रकार ग्रामीण आजीविका की अस्थिरता, सीमित रोजगार और पलायन एक परस्पर निर्भर चक्र बनाते हैं।

ग्रामीण रोजगार और आजीविका संवर्धन के उपाय

सबसे पहले, कृषि और कृषि-आधारित आजीविका को सुदृढ़ बनाना आवश्यक है (सिंह, 2017)। इसके लिए किसानों को आधुनिक तकनीकों से जोड़ना, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार करना, फसल विविधीकरण और मूल्य संवर्धन को बढ़ावा देना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, डेयरी, मत्स्य पालन, बागवानी और मधुमक्खी पालन जैसी गतिविधियों से ग्रामीण परिवारों की आय में वृद्धि की जा सकती है।

इसके साथ ही, ग्रामीण गैर-कृषि रोजगार के अवसर बढ़ाना भी आवश्यक है। हस्तशिल्प, हथकरघा, बुनकरी, ग्रामीण पर्यटन और लघु-मध्यम उद्योग को प्रोत्साहित करके गाँवों में वैकल्पिक रोजगार सृजित किया जा सकता है। कौशल विकास और स्वरोजगार भी पलायन रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ग्रामीण युवाओं और महिलाओं को कौशल प्रशिक्षण प्रदान कर उन्हें स्वरोजगार और उद्यमिता के अवसर दिए जाने चाहिए। ग्रामीण स्वरोजगार प्रशिक्षण संस्थान जैसे संस्थानों के माध्यम से बैंकिंग सुविधाओं, ऋण और वित्तीय सहायता तक उनकी पहुँच आसान बनाना भी जरूरी है।

सरकारी योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराने हेतु मनरेगा, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन), प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (ग्रामीण विकास मंत्रालय, 2020) और स्टार्टअप इंडिया जैसी योजनाओं का पारदर्शी और प्रभावी क्रियान्वयन होना चाहिए।

साथ ही, आधारभूत सुविधाओं का विकास आवश्यक है। सड़क, बिजली, पेयजल, शिक्षा, स्वास्थ्य और डिजिटल सेवाओं की उपलब्धता से ग्रामीण लोग अपने गाँव में ही जीवनयापन करना पसंद करेंगे। इसके अतिरिक्त, सामाजिक सुरक्षा और श्रमिक संरक्षण, जैसे पेंशन, बीमा, खाद्यान्न सुरक्षा, सुरक्षित कार्य वातावरण, ग्रामीणों की विवशता को कम कर पलायन रोकने में सहायक होंगे।

निष्कर्ष

ग्रामीण आजीविका का सुदृढ़ीकरण केवल ग्रामीण समाज की स्थिरता के लिए नहीं, बल्कि देश के समग्र सामाजिक-आर्थिक विकास और शहरी क्षेत्रों पर दबाव कम करने के लिए भी अनिवार्य है। इस प्रकार, ग्रामीण आजीविका और रोजगार सृजन के समग्र उपाय ग्रामीण समाज को स्थिर बनाए रखने, शहरी क्षेत्रों पर दबाव कम करने और देश के समग्र सामाजिक-आर्थिक विकास में योगदान देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इसलिए ग्रामीण आजीविका और रोजगार सृजन के माध्यम से

पलायन को रोकना अत्यंत आवश्यक है। इस चुनौती का समाधान कृषि और गैर-कृषि रोजगार अवसरों के सृजन, कौशल विकास, स्वरोजगार एवं उद्यमिता को प्रोत्साहन, तथा सरकारी योजनाओं (जैसे मनरेगा और एनआरएलएम) के प्रभावी क्रियान्वयन में निहित है। आधारभूत सुविधाओं जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, बिजली और डिजिटल सेवाओं की उपलब्धता भी पलायन रोकने में सहायक सिद्ध हो सकती है। अतः ग्रामीण आजीविका का सुदृढ़ीकरण ही स्थायी समाधान है, जो ग्रामीण समाज की स्थिरता और देश के समग्र विकास के लिए आवश्यक है।

सन्दर्भ

- चंद, आर.सी. (2015). भारत में प्रवास और ग्रामीण विकास. कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी।
- शर्मा, एच.सी. (2016). ग्रामीण रोजगार और आजीविका. आलोक पब्लिकेशन।
- सिंह, के. (2017). ग्रामीण विकास: सिद्धांत, नीतियाँ और प्रबंधन. सेज पब्लिकेशन।
- मीना, एस.एन. (2018). भारत में ग्रामीण विकास. राजकमल प्रकाशन।
- देव, एस. महेंद्र. (2019). भारत में ग्रामीण आजीविकाएँ: चुनौतियाँ और अवसर. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (नरेगा) एवं ग्रामीण आजीविकाएँ।
- राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान (2021). स्व-सहायता समूह और ग्रामीण भारत में महिला सशक्तिकरण।

11

झारखंड में विकेंद्रीकरण एवं स्वशासन में जनजातीय समुदाय की स्थिति

मनीष कुमार साहु

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.128-141
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

झारखंड पूरे देश में अपने विशेष जनजातीय संस्कृति, त्यौहार, भाषा एवं परंपराओं के लिए विख्यात है। इस राज्य में कुल 32 जनजाति समुदाय निवास करती है, जो राज्य की कुल जनसंख्या का 29% हैI अनुसूचित जनजाति समुदाय की राजनीतिक भागीदारी को बढ़ाने एवं स्वशासन को सुदृढ़ करने के लिए 73वां संविधान संशोधन 1992 के माध्यम से पंचायती राज व्यवस्था लागू की गई। जनजातीय समुदाय की परंपराओं एवं जल जंगल जमीन की रक्षा हेतु पेसा अधिनियम 1996 एवं वन अधिकार अधिनियम 2006 भी बनाया गया परंतु अधिनियमों की जटिल संरचना एवं जागरूकता की कमी के कारण आज भी यह समुदाय वंचित हैं। उक्त शोध में मिश्रित विधियो का उपयोग कर पंचायत चुनाव में अनुसूचित जनजाति की भूमिका एवं स्थिति का पता लगाने का प्रयास किया गया है इस शोध लेख के माध्यम से झारखंड के जनजातीय समाज की पंचायती राज संस्था, स्वशासन, सामाजिक-आर्थिक स्थिति का वर्णन किया गया हैI साथ ही स्वशासन को धरातल पर सुदृढ़ करने एवं जनजातियों की राजनीतिक भागीदारी बढ़ाने हेतु आवश्यक सुझाव भी दर्शाए गए हैं।

मुख्य शब्द: जनजाति समुदाय, पंचायत, स्वशासन, पेसा अधिनियम, झारखंड

प्रस्तावना

स्वतंत्रता के पश्चात से ही भारत सरकार ने ग्रामीण विकास के लिए कई महत्वाकांक्षी योजनाओं को लागू किया जिसमें पंचवर्षीय योजनाओं का भी विशेष महत्व है I द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक और आर्थिक जीवन में क्रांति लाना और पंचायत को इस

परिवर्तन के लिए उत्तरदाई निकाय के रूप में स्थापित करना था। *बरला (2017)* विकेंद्रीकरण और स्थानीय शासन गरीब लोगों को सशक्त बनाने और सहभागी नियोजन के माध्यम से सतत आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। 1993 में भारतीय संविधान में 73वां संशोधन के बाद पंचायती राज को संवैधानिक मान्यता प्राप्त हुई, जो स्थानीय स्वशासन व्यवस्था को सुदृढ़ करने के क्रम में एक मिल के पत्थर जैसा हैI विशेष कर झारखंड जैसे राज्य जहां 26.2% जनजाति निवास करती है एवं 75.95% लोग ग्रामीण क्षेत्र में निवास करते हैं। सन 2000 में बिहार से अलग होने के बाद झारखंड राज्य बना परंतु लंबे संघर्ष और बलिदान के उपरांत झारखंड में पंचायती राज व्यवस्था लागू करने में 10 वर्ष लग गए। पहली बार झारखंड में पंचायती राज अधिनियम 2001 बना और पहला चुनाव 2010 में हुआ। आज 21वीं सदी में भी प्रचुर मात्रा में संसाधन एवं सांस्कृतिक विरासत से परिपूर्ण झारखंड राज्य में गरीबी, बेरोजगारी, पलायन आदि अनेक गंभीर समस्याएं विद्यमान है। इस स्थिति में पंचायती राज व्यवस्था में चुने गए स्थानीय जनप्रतिनिधियों पर ग्रामीण एवं सामाजिक विकास, स्वशासन एवं अपने विकास का ढांचा स्वयं बनाने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी होती है। चुने हुए प्रतिनिधि सरकार द्वारा बनाए जा रहे ग्रामीण विकास की नीतियों एवं योजनाओं को बनाने एवं उसे लागू करने में सामान्य मानवी और सरकार के बीच एक पुलिया का कार्य करते हैंI राज्य में प्राकृतिक संसाधनों और सांस्कृतिक समृद्धि की प्रचुरता के बावजूद, आदिवासी समुदायों को गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता और अपर्याप्त आवास जैसी गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। सीमित स्थानीय रोजगार के अवसरों और आधुनिक कौशल के अभाव के कारण, हर साल बड़ी संख्या में आदिवासी पुरुष और महिलाएँ बेहतर आजीविका की तलाश में झारखंड से दूसरे राज्यों में पलायन करते हैं। भारत में लगभग 2.6 लाख पंचायतें हैं, जिनमें 31.5 लाख चुने हुए प्रतिनिधि हैं। इनमें लगभग 46% महिलाएं हैं। इसके अलावा, यह प्रणाली अनुसूचित जनजातियों (एसटी), अनुसूचित जातियों (एससी) और अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) जैसे समाज के कमजोर वर्गों को भी व्यापक प्रतिनिधित्व प्रदान करती है। भारत के संविधान में 73वें संशोधन के तहत संविधान में भाग IX (अनुच्छेद 243) जोड़ा गया। इस संशोधन के परिणामस्वरूप पंचायतों की तीन-स्तरीय प्रणाली स्थापित की गई, जिसमें अनुसूचित जनजातियों (एसटी), अनुसूचित जातियों (एससी) और महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया। पंचायती राज मंत्रालय की स्थापना 27 मई 2004 को की गई थी जिसका निम्न मुख्य उद्देश्य है:

- संविधान के भाग IX के क्रियान्वयन की निगरानी करना,
- संविधान की पांचवीं अनुसूची वाले क्षेत्रों में " पंचायतों के प्रावधान (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996 (पेसा अधिनियम)" का क्रियान्वयन करना, और
- संविधान के भाग IX-A के अनुच्छेद 243D के तहत जिला योजना समितियों को क्रियाशील बनाना।

चूंकि अधिकांश कार्यवाहियाँ, जैसे कि कानून बनाना, राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्र में आती हैं, इसलिए मंत्रालय पंचायतों के कार्यों में सुधार के अपने लक्ष्यों को मुख्यतः नीतिगत हस्तक्षेप, जनजागरूकता, क्षमता निर्माण, प्रेरणा और वित्तीय सहायता के माध्यम से प्राप्त करने का प्रयास करता है । संविधान के अनुच्छेद 243G में यह प्रावधान है, कि पंचायतों को स्थानीय आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं बनानी और उन्हें लागू करनी चाहिए। अनुच्छेद 243ZD जिला योजना समिति की स्थापना का प्रावधान करता है, जिसका कार्य ग्रामीण क्षेत्रों की पंचायतों द्वारा तैयार की गई योजनाओं और शहरी क्षेत्रों की नगर निकायों द्वारा बनाई गई योजनाओं को एकीकृत कर जिला स्तर की समेकित योजना तैयार करना है। संविधान का भाग IX देश के अधिकांश क्षेत्रों में लागू होता है, लेकिन संविधान के अनुच्छेद 243M के अनुसार कुछ क्षेत्रों को इससे छूट प्राप्त है। इनमें नगालैंड, मेघालय और मिजोरम राज्य तथा असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम के जनजातीय क्षेत्र शामिल हैं।

वित्त वर्ष 2023-24 के दौरान पंचायती राज मंत्रालय का कुल व्यय ₹1016.42 करोड़ (जिसमें सभी योजनाएं और सचिवालय सेवाएं शामिल हैं), जिसमें से ₹980.63 करोड़ की राशि का उपयोग इस वित्तीय वर्ष में किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 243M(1) के तहत, अनुसूचित क्षेत्रों और अनुच्छेद 244 के खंड (1) और (2) में उल्लेखित जनजातीय क्षेत्रों को संविधान के भाग IX के प्रावधानों से छूट दी गई है। हालांकि, अनुच्छेद 243M(4)(b) संसद को यह अधिकार देता है कि वह कानून बनाकर भाग IX के प्रावधानों को उन अनुसूचित क्षेत्रों और जनजातीय क्षेत्रों पर लागू कर सकती है I

पूर्व अध्ययन की समीक्षा

सत्यम (2013), झारखंड में पंचायती राज पर शोध के उपरांत इन्होंने पाया कि झारखंड बनने के दशक बाद पहली बार 2011 में ऐतिहासिक रूप से झारखंड के पंचायत चुनाव में 55% सीटों पर महिलाएं चुनी गई। परंतु कुछ *पढ़हा* व्यवस्था के अतिरिक्त अधिकतर सीटों पर वही प्रतिनिधि चुने गए जिनके परिवार राजनीतिक रूप से सक्रिय थेI झारखंड के ज्यादातर हिस्से जहां महिलाएं प्रतिनिधि जीत कर आई उनके बीच पंचायत की शक्ति और अधिकारों की जानकारी का अभाव पाया गया । निः संदेह पंचायत चुनाव स्वशासन की राह में प्रशंसनीय कार्य है परंतु इससे सुचारू रूप से चलने हेतु लगातार भ्रष्टाचार के खिलाफ मूल्यांकन की व्यवस्था बनानी होगी साथ ही यह समय की मांग है कि झारखंड में पेसा अधिनियम को लागू किया जाना चाहिए।

किंडो एवं भौमिक (2019), इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि झारखंड में विशेष कर जनजाति बाहुल्य क्षेत्र में स्वशासन की परिकल्पना पूरे रूप से तभी चरितार्थ हो सकती है जब (पेसा अधिनियम 1996) पूर्ण रूप से लागू किया जाएगा । इस अधिनियम के लागू होने से झारखंड के अनुसूचित जनजातियों को अपने पंचायत के वन उत्पाद, खनिज और अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर

स्वामित्व प्राप्त होगा। जिसके माध्यम से वह इनका उपयोग एवं प्रबंधन कर सकेंगे, परंतु पेसा अधिनियम और वन अधिकार अधिनियम को लागू करने की योजना महज कुछ कागजों तक ही सिमट कर रह गई हैI राज्य सरकार को जनजातीय विकास के लिए अधिकार आधारित विकास की योजना को अपनाना चाहिए।

तालिका 11.1 : पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या एवं लिंगानुपात

	राज्य	जिला	प्रखंड	पंचायत प्रतिनिधि	कुल	महिला	पुरुष
सूचनादाताओं का विवरण	झारखंड	रांची	कांके	जिला परिषद सदस्य	2	1	1
				पंचायत समिति सदस्य	3	2	1
				सदस्य	8	4	4
				मुखिया	7	4	3
			ओरमांझी	जिला परिषद सदस्य	2	1	1
				पंचायत समिति सदस्य	3	2	1
				सदस्य	8	4	4
				मुखिया	7	4	3

(स्रोत- शोधार्थी द्वारा निर्मित)

प्रसाद (2023), इन्होंने अपने अध्ययन के माध्यम से बताया कि ग्राम सभा को दिए गए अधिकार का उपयोग जानकारी के अभाव में लोग नहीं कर पाते हैं। अतः राज्य सरकार को केंद्र और राज्य के अधिनियमों को स्थानीय भाषा जैसे संथाली, कुरुख, मुंडारी, नागपुरी, सदरी और खोरठा आदि में अनुवाद कर स्थानीय लोगों तक पहुंचाने का कार्य करना चाहिएI पंचायत को वित्त आयोग द्वारा दिए जाने वाले आर्थिक सहयोग को निरंतर उपलब्ध कराना चाहिएI स्वशासन की नीतियों को निम्न स्तर से उच्च स्तर तक लागू करना चाहिए तभी जाकर के इसका वास्तविक लाभ स्थानीय लोगों को मिल पाएगा।

रॉय (2024), इन्होंने अपने शोध में पाया कि आज भारत 75 वां स्वतंत्रता दिवस पर आजादी का अमृत महोत्सव मना रहा है और इस उपलक्ष में भारत सरकार ने पंचायत में कई गतिविधियों को आकार देने का निर्णय लिया है। पंचायती राज व्यवस्था धरातल पर प्रशासनिक गतिविधियों को लागू करने के क्षेत्र में एक मील का पत्थर है। आज भारत में लगभग 6, 64369 गांव है और इन गांवों को सुदृढ़ करने में पंचायती राज संस्था की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका है। त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था में अनुसूचित जाति, जनजाति एवं महिलाओं की भागीदारी भारतीय गणतंत्र को और अधिक मजबूत बनाती है।

शोध विधि - उपरोक्त शोध की प्रकृति विश्लेषणात्मक हैI उक्त शोध पूर्ण रूप से प्राथमिक और द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। द्वितीयक आंकड़ों का संकलन विभिन्न पुस्तक, जर्नल, समाचार पत्र, शोध आलेख एवं इंटरनेट के उपयोग से संकलित किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों के संकलन हेतु पंचायत चुनाव 2022 में चुने हुए 40 जनजातीय समुदाय के जनप्रतिनिधियों का चयन किया गया हैI झारखंड राज्य के रांची जिला के कांके एवं ओरमांझी प्रखंड से 20-20 सूचना दाताओं का चयन किया गया है। उपरोक्त सूचना दाताओं से प्रश्नावली, अवलोकन, फोकस्ड ग्रुप डिस्कशन एवं साक्षात्कार विधि के माध्यम से सूचना संकलित किया गया है।

1. झारखंड में जनजाति समुदाय- झारखंड एक जनजातीय बाहुल्य राज्य हैI 2011 जनगणना के अनुसार राज्य में कुल 86.4 लाख जनजाति निवास करते हैं जो राज्य के कुल जनसंख्या का 26% है। झारखंड में जनजातियों की अपनी विशेष भाषाएँ, रीति-रिवाज, त्यौहार और परंपरा पाई जाती है। कई लोग जीव-वादी धर्म का पालन करते हैं, प्रकृति की पूजा करते हैं और सरहुल तथा कर्मा जैसे त्यौहार मनाते हैं जो कृषि चक्र का प्रतीक और वन आत्माओं का सम्मान हैI छऊ और झूमर जैसे नृत्य के रूप में अपनी परंपराओं और सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति करते हैं। परंपरागत रूप से यह समुदाय प्रकृति के बीच संबंध बिठाते हुए कृषि, शिकार, वन संरक्षण आदि का कार्य करते हैंI झारखंड में 32 जनजातियाँ निवास करती हैं, जिनमें से आठ को विशेष रूप से सुरक्षित जनजाति समूहों (PVTG) के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

तालिका 11.2: झारखंड की 32 जनजातियाँ

असुर	बेदिया	चेरो	करमाली	खारिया	कोरा	मुंडा	माल पहाड़िया
बैगा	बिंझिया	गोंड	तुरी	खरवार	कोरवा	सौरिया पहाड़िया	चिक बड़ाईक
बंजारा	भूमिज	गोराईट	संथाल	खोड	लोहरा	सावरा (सओरा)	बिरजिया(बिंझिया)
बथुडी	कोल	हो	पहाड़िया	किसान	महली	बिरहोर	उराँव (कुरुख)

2.1 भारत सरकार के द्वारा पंचायतों के प्रावधान (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम, 1996

भारतीय संविधान के पांचवी अनुसूची में वर्णित भारत के जनजातीय जिलों में जनजातियों को स्व-

शासन का अधिकार मिल सके इसलिए पेसा अधिनियम बनाया गया। 1992 में भाग (IX) को संविधान में एक नई अनुसूची (XI) के साथ जोड़ा गया जिसमें पंचायत के कार्यात्मक मदो के अंतर्गत 29 विषय शामिल किए गए। 73वां और 74 वां संविधान संशोधन के बाद पांचवी अनुसूची में सम्मिलित जनजातीय क्षेत्रों में स्वशासन के ढांचे में एक बड़ा अंतराल उभर कर आया, इन क्षेत्रों में संवैधानिक सुरक्षा की आवश्यकता को समझते हुए 1996 में दिलीप सिंह भूरिया के नेतृत्व में एक समिति का गठन हुआ। इस समिति के सुझावों के आधार पर *पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) (पेसा) अधिनियम 1996* बनाया गया जिसमें जनजातीय समुदाय के मान्यताओं रीति-रिवाज, परंपराओं के सम्मान हेतु शासन की एक विशिष्ट प्रणाली शुरू हुई। पेसा अधिनियम के तहत ग्राम सभा को कई विशेष अधिकार एवं शक्तियां दी गई हैं जैसे:

- अपने जनजातीय समुदाय की परंपराओं एवं सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण करना
- स्थानीय समस्याओं का निराकरण करना
- सामाजिक संपत्ति का उपयोग, रखरखाव एवं प्रबंधन करना
- भूमि हस्तांतरण की रोकथाम करना
- ग्रामीण बाजार का प्रबंधन करना
- प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल, जंगल, जमीन आदि का प्रबंधन करना
- योजना, परियोजना बनाने एवं लागू करने में सहभागिता निभाना
- लघु वन उत्पादन पर स्वामित्व आदि कई अन्य जनजाति अधिकार सम्मिलित है।

तालिका 11.3: झारखंड राज्य में पूर्णतः एवं आंशिक रूप से पेसा आच्छादित क्षेत्र

	क्रम संख्या	**जिला**	**प्रखंड**	**ग्राम पंचायत**
	1	रांची	18	303
	2	खूंटी	6	86
	3	गुमला	12	159
	4	लोहरदगा	7	66
	5	सिमडेगा	10	94

पूर्णतः आच्छादित क्षेत्र	6	पूर्वी सिंहभूम	11	231
	7	पश्चिमी सिंहभूम	18	216
	8	सरायकेला खरसावां	8	136
	9	दुमका	10	206
	10	जामताड़ा	6	118
	11	पाकुड़	6	128
	12	लातेहार	9	115
	13	साहिबगंज	9	166
आंशिक आच्छादित क्षेत्र	14	गोड्डा	2	35
	15	गढ़वा	1	10
	16	पलामू	1	2
	कुल		**135**	**2074**

(स्रोत- *(पेसा) अधिनियम 1996*)

झारखंड में पांचवी अनुसूची *(पेसा)* में 16 जिला, 131 प्रखंड, 2074 पंचायत एवं 16022 गांव सम्मिलित है।

2.2 अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम या *वन अधिकार अधिनियम,* 2006 - अपने व्यापक वन क्षेत्र और समृद्ध जैव विविधता के कारण झारखंड को "वनों की भूमि" के रूप में जाना जाता है। सारंडा, एशिया का सबसे बड़ा साल वन, झारखंड में स्थित है। झारखंड का वन क्षेत्र राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 29.61% है, जो 23, 605 वर्ग किलोमीटर के बराबर है। इसमें आरक्षित वन (18.58%), संरक्षित वन (81.28%), और अवर्गीकृत वन (0.14%) सम्मिलित हैं। वन अधिकार अधिनियम, वन में रहने वाले अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वनवासियों के पारंपरिक भूमि और संसाधनों पर कानूनी अधिकार को मान्यता देता है, जो निम्न प्रकार से है:

* पिढियों से रह रहे वनवासी को भूमि पर स्वामित्व का अधिकार
* स्थानीय शासन को सशक्त बनाना

* वन संरक्षण एवं जैव विविधता का प्रबंधन

* वन उत्पाद के उपयोग एवं प्रबंधन का अधिकार

* सामुदायिक वन संसाधन के संरक्षण एवं प्रबंधन का अधिकार

2.3 झारखंड पंचायत राज अधिनियम 2001 - यह अधिनियम झारखंड में पंचायत राज व्यवस्था को स्थापित एवं नियंत्रित करने के लिए बनाया गया इसका मुख्य उद्देश्य ग्राम स्तर तक शक्ति का विकेंद्रीकरण कर स्वशासन एवं लोकतंत्र को मजबूत करना है अधिनियम के कुछ प्रमुख विशेषताएं निम्न प्रकार से हैं:

* अधिनियम के तहत त्रिस्तरीय पंचायत प्रणाली में ग्राम पंचायत, पंचायत समिति एवं जिला परिषद के रूप में गठित है।

* ग्राम पंचायत आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजना बनाती है एवं इससे संबंधित योजनाओं को लागू करने का काम करती है।

* कर लगाने एवं पंचायत का धन संग्रह हेतु निधि का गठन कर सकती है।

* पंचायती राज संस्था की कुल सीटों में 50% सीट महिलाओं के लिए आरक्षित हैं।

* पंचायती राज संस्था में बजट लेखा और वित्तीय लाभ के लिए प्रत्येक 5 वर्ष में वित्त आयोग का गठन करने का प्रावधान है।

* पंचायत राज संस्था में ग्राम सभा सबसे मुख्य इकाई होती है जहां विकास की योजनाएं बनाई जाती है एवं बजट की समीक्षा की जाती है।

3. झारखंड में पंचायती राज व्यवस्था - भारतीय संविधान के अनुच्छेद 243 डी के तहत चुनाव में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति को आरक्षण दिया जाता है। 73वां संविधान संशोधन के तहत पंचायती राज में 33% सीधे तौर पर महिला आरक्षण का प्रावधान है परंतु विशेषाधिकार का उपयोग करके झारखंड में 50% महिला आरक्षण लागू किया गया है। वार्ड सदस्य, मुखिया, जिला परिषद सदस्य एवं पंचायत समिति सदस्य (सरपंच) प्रत्यक्ष चुनाव से चुने जाते हैंI साथ ही पंचायत स्तर पर उप मुखिया, प्रखंड स्तर पर प्रमुख और उप प्रमुख तथा जिला स्तर पर जिला परिषद अध्यक्ष एवं जिला परिषद उपाध्यक्ष अप्रत्यक्ष चुनाव से चुने जाते हैंI पंचायत को आर्थिक विकास एवं सामाजिक सुरक्षा से संबंधित योजना बनाने का अधिकार होता हैI ग्राम सभा के माध्यम से योजना बनाना एवं उसे लागू करने हेतु अधिकार प्राप्त होते हैंI केंद्र सरकार एवं राज्य सरकार के द्वारा वित्त आयोग के माध्यम से पंचायत को विकास कार्यों के लिए धनराशि उपलब्ध कराई जाती है।

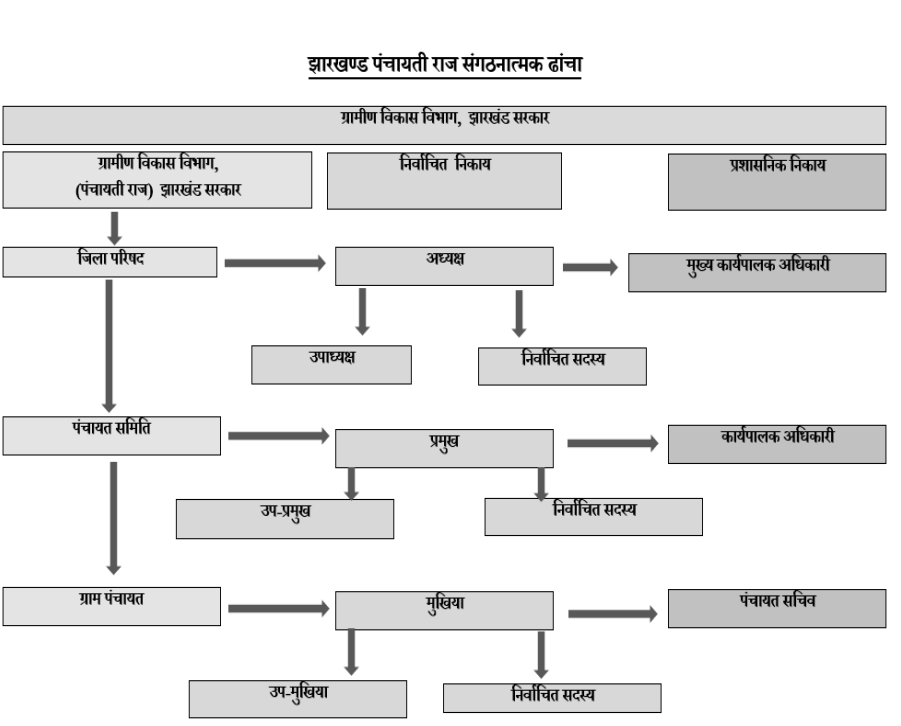

स्रोतः झारखण्ड पंचायती राज अधिनियम, 2001

चित्र 11.1: झारखण्ड पंचायती राज संगठनात्मक ढांचा

झारखंड राज्य चुनाव आयोग के अनुसार झारखंड राज्य में (जिला पंचायत) जिला स्तर पर 24 प्रतिनिधि, (पंचायत समिति) प्रखंड स्तर पर 259 प्रतिनिधि और (ग्राम पंचायत) ग्राम स्तर पर 4418 प्रतिनिधि है।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि झारखंड में पंचायती राज चुनाव के कुल सीटों में 33% सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित हैं। जिला परिषद सदस्य की कुल सीटों में 33%, पंचायत समिति सदस्य की कुल सीटों में 33%, वार्ड सदस्य की कुल सीटों में 32% एवं ग्राम पंचायत की कुल सीटों में 52% सीटें जनजातीय समुदाय के लिए आरक्षित रखी गई है।

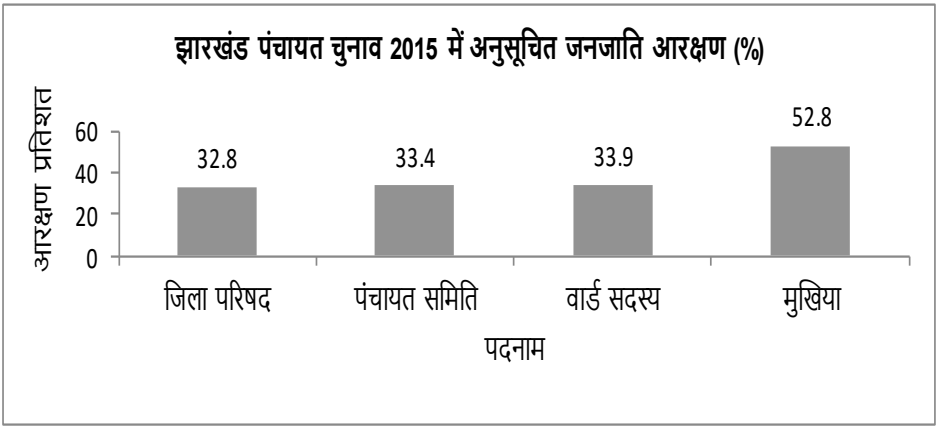

स्रोत: झारखंड राज्य चुनाव आयोग

चित्र 11.2: झारखंड पंचायत चुनाव में अनुसूचित जनजाति आरक्षण

परिणाम एवं परिचर्चा

पंचायत राज संस्था में जनजातीय समुदाय की भूमिका को गहराई से समझने एवं सूचना एकत्रित करने के लिए रांची जिले के चुने हुए जनप्रतिनिधियों से विभिन्न विषयों पर सुचना एकत्रित की गई जिसके परिणाम जिस प्रकार से हैं।

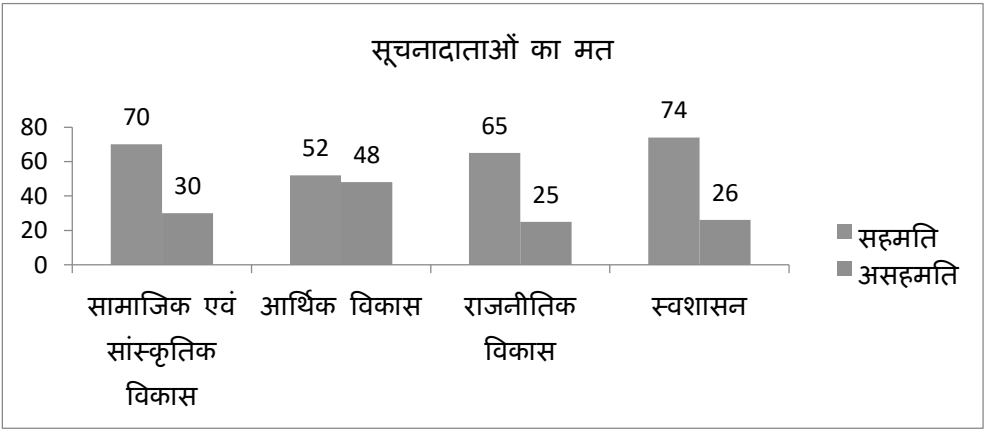

स्रोत: प्राथमिक आंकड़ों पर आधारित

चित्र 11.3: झारखंड पंचायत चुनाव 2022 में चयनित जनप्रतिनिधियों का मत

उपरोक्त ग्राफ से यह स्पष्ट होता है कि 70% सूचना दाताओं ने यह स्वीकार किया कि पंचायती राज व्यवस्था के कारण जनजाति समुदाय का सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास हुआ है परंतु 30% सूचना दाताओं का मानना है कि सामाजिक सांस्कृतिक स्तर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। आर्थिक विकास से संबंधित प्रश्नों पर 52% जनप्रतिनिधियों ने हामी भरी कि पिछले कुछ वर्षों में उनका आर्थिक विकास सुनिश्चित हुआ है परंतु 48% जन प्रतिनिधियों ने कोई आर्थिक विकास के न होने की बात कही है।

राजनीतिक भागीदारी के विषय पर 65 प्रतिशत मतदाताओं का समर्थन इस बात पर है कि पंचायत राज्य संस्था के कारण जनजातीय समुदाय के बीच राजनीतिक जागरूकता एवं भागीदारी बढ़ी है, वही 25% जनप्रतिनिधियों का मानना है कि कोई राजनीतिक भागीदारी नहीं बढ़ी है। स्वशासन के विषय पर 74% जनप्रतिनिधि सहमत है परंतु 26% दिन प्रतिनिधियों का मानना है कि स्वशासन के विषय में कोई विशेष बदलाव नहीं देखने को मिलता है।

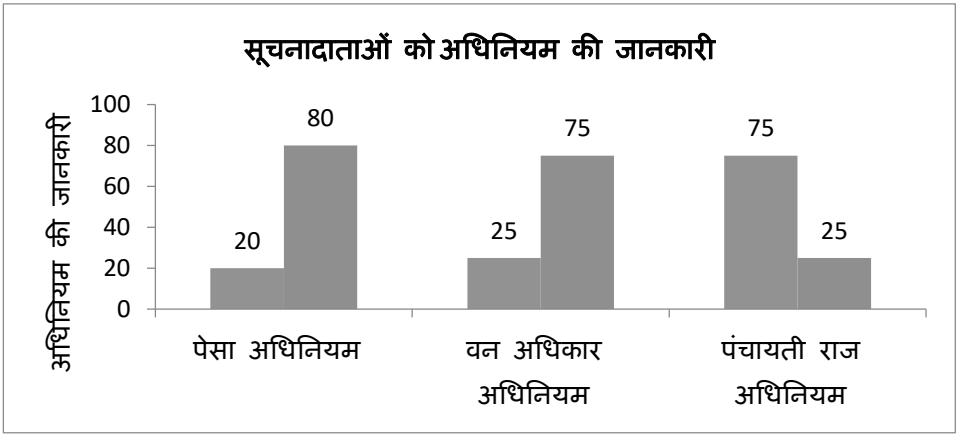

स्रोत: प्राथमिक आंकड़ों पर आधारित

चित्र 11.4: पंचायत चुनाव में चयनित जनप्रतिनिधियों की जानकारी

उपरोक्त ग्राफ से यह स्पष्ट होता है कि 20% प्रतिनिधियों को पेसा अधिनियम के विषय में जानकारी है वही 80% जनप्रतिनिधि को पेसा अधिनियम की कोई विषय जानकारी नहीं है। वन अधिकार अधिनियम संबंधित जागरूकता सिर्फ 25% जनप्रतिनिधियों को है साथ ही 75% जनप्रतिनिधि इस अधिनियम के प्रावधानों से अनभिज्ञ पाए गए। पंचायती राज अधिनियम के विषय में पूछने पर 75% जनप्रतिनिधियों ने स्वीकार किया कि उन्हें इससे संबंधित जानकारी है परंतु 25% प्रतिनिधि बनने के बाद भी इस अधिनियम के प्रावधानों से अनभिज्ञ है।

निष्कर्ष एवं सुझाव

झारखंड में आदिवासी समुदाय के सशक्तिकरण के लिए अनुसूचित क्षेत्रों में पेसा और वन अधिकार अधिनियम का प्रभावी क्रियान्वयन अत्यंत महत्वपूर्ण है। हालांकि इन कानून का उद्देश्य स्वशासन सुनिश्चित करना और भूमि एवं प्राकृतिक संसाधनों पर जनजातियों के अधिकार की रक्षा करना है परंतु धरातल पर क्रियान्वयन अपर्याप्त दिखाई पड़ता है। सार्थक परिवर्तन लाने के लिए ग्राम सभाओं को सुदृढ़ बनाना, पारंपरिक शासन संरचनाओं को बढ़ावा देना और अधिकार आधारित विकास का दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। उचित विकेंद्रीकरण और समावेशी नीतियों के साथ जनजातीय समुदाय सतत विकास में सक्रिय भागीदार बन सकते हैं जो सतत् विकास लक्ष्य के अनुरूप है, तभी सामाजिक न्याय, आर्थिक स्थिरता और पर्यावरणीय स्थिरता को वास्तविक रूप से सरकार किया जा सकता है। निष्कर्ष एवं सुझाव झारखंड देश का एक ऐसा राज्य है जिसे प्रकृति ने अपने संसाधन जल जंगल जमीन एवं खनिज आदि का वरदान प्राप्त है इन संसाधनों पर पहला अधिकार सदियों से उनकी पूजा प्रबंधन एवं रक्षा करने वाले स्थानीय निवासियों का होना चाहिए विशेष कर उन जनजातीय समुदाय का जिसका पूरा जीवन चक्र ही इन संसाधनों से जुड़ा हुआ है।

केंद्र और राज्य में झारखंड के अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास एवं भागीदारी को सुदृढ़ करने हेतु कई अधिनियम बनाए हैं परंतु इन अधिनियमों को पूर्णत लागू करने के राह में कई समस्याएं भी विद्यमान है। स्वशासन को सुदृढ़ करने हेतु पेसा अधिनियम बनाया गया परंतु आज भी झारखंड में अधिनियम लागू नहीं हो पाया है। वन अधिकार अधिनियम बनाने के पश्चात भी वन उत्पाद वन संसाधन के उपयोग एवं प्रबंधन के में कई बार जनजातीय समुदाय एवं प्रशासन के बीच मतभेद देखने को मिलते हैं।

पंचायती राज संस्था में आरक्षण के माध्यम से अनुसूचित जनजाति की भागीदारी सुनिश्चित हुई है। विशेष कर महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी बहुत सकारात्मक है। यद्यपि जनप्रतिनिधियों के बीच शिक्षा अधिनियम एवं शक्तियों की जानकारी का अभाव देखने को मिलता है। पंचायती राज संस्था स्वशासन को सुदृढ़ करने में एवं समाज के वंचित वर्ग को राजनीतिक अधिकार राजनीतिक भागीदारी को बढ़ाने में एक बहुत ही सकारात्मक प्रयास है। समय-समय पर जनप्रतिनिधियों को अधिनियम संबंधित एवं क्षमता संवर्धन हेतु प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए पंचायत चुनाव में प्रत्याशी बनने हेतु एक न्यूनतम शिक्षण योग्यता लागू करनी चाहिए। साथ ही शिक्षित एवं प्रशिक्षित युवाओं को राजनीतिक व्यवस्था में जोड़ने का प्रावधान का प्रयास होना चाहिए तब जाकर स्वशासन का मूल उद्देश्य चरितार्थ हो सकता है।

सन्दर्भ

- कुमार, सत्यम (2013). स्टडी ऑफ इलेक्टेड ट्राइबल वीमेन रिप्रेज़ेंटेटिव इन पंचायत राज इंस्टिट्यूशन इन इंडिया: ए केस ऑफ झारखंड एशियन जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी स्टडीज़, 1(4)।

- किंडो, डी. पी., एवं भौमिक, पी. के. (2019). पंचायती राज इन शेड्यूल्ड एरियाज ऑफ झारखंड एंड नेचरल रिसोर्स मैनेजमेंट. झारखंड जर्नल ऑफ डेवलपमेंट एंड मैनेजमेंट स्टडीज, वॉल्यूम 7(2)।

- प्रसाद, सचिदानंद एवं अन्य (2023). डीसेंट्रलाइज़ेशन ऐट दी ग्रासरूट: स्टडी ऑफ पंचायत एक्सटेंशन टू शेड्यूल्ड एरिया ऑफ झारखंड, अकादमिक जर्नल ऑफ इंटरडिसिप्लिनरी स्टडीज़, 22 (I), पृष्ठ-(280-292)।

- बरला, रतन जॉन (2017). रोल ऑफ पंचायती राज सिस्टम इन इम्प्लीमेंटेशन एंड डेवलपमेंट ऑफ गवर्नमेंट स्कीम्स इन झारखंड स्टेट, जर्नल ऑफ इमर्जिंग टेक्नोलॉजीज़ एंड इनोवेशनल रिसर्च (आईजेटीआईआर), 4 (6), पृष्ठ (724-729)।

- रॉय, मौमिता साहा (2024), भारत में पंचायती राज संस्थाएँ: एक अवलोकन, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च एंड रिव्यू, खंड-11, अंक- 12, https://doI.org/10.52403/Ijrr.20241252

- भारतीय संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992, (भारत सरकार की साक्ष्य)।

- पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996, धारा 551, (भारत सरकार की साक्ष्य)।

- झारखंड सरकार (2001). झारखंड पंचायती राज अधिनियम, झारखंड सरकार।

- नारायण, उदय (2024). पंचायती राज एंड लोकल लीडरशिप इन झारखंड, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च (आईजेएफएमआर), 6 (1)।

- तिवारी, एन. (2018). पीईएसए एवं एलडब्ल्यूई: छत्तीसगढ़, झारखंड और ओडिशा।

- https://ncst.nic.in/sites/default/files/2017/Presentation/1393.pdf
- https://www.india.gov.in/my-government/constitution india/amendments/constitution-india-seventy-third-amendment-act-1992
- https://tribal.nic.in/actRules/PESA.pdf
- https://www.xiss.ac.in/JJDMS/assets/abstrct/pdf/63b4039f4d208.pdf

12

सामुदायिक सक्रियता द्वारा सहभागी जन योजना

डॉ. राजीव बंसल

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.142-154
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

ग्राम पंचायत विकास योजना एक सहभागी और समावेशी योजना निर्माण प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य ग्राम स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग करते हुए सतत और समग्र विकास सुनिश्चित करना है। यह प्रक्रिया पारदर्शिता, जवाबदेही और समुदाय आधारित निगरानी को बढ़ावा देती है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में प्रभावी और टिकाऊ विकास संभव हो पाता है यह लेख समुदाय की भागीदारी के साथ एक सहभागी ग्राम पंचायत विकास योजना तैयार करने की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है। इस योजना में ग्राम सभा की सक्रिय भागीदारी, हितधारकों की क्षमता निर्माण, और रेखा विभागों के समन्वय के माध्यम से स्थानीय आवश्यकताओं की पहचान कर योजनाओं का निर्माण किया जाता है। ग्राम पंचायत विकास योजना न केवल विकेन्द्रीकृत शासन को सशक्त करता है, बल्कि सतत् विकास लक्ष्यों को स्थानीय स्तर पर लागू करने का माध्यम भी बनता है। इसमें चरणबद्ध प्रक्रिया की स्पष्ट रूपरेखा दी गई है, जिससे विकास की जिम्मेदारी समुदाय स्वयं वहन करता है। यह दृष्टिकोण लेखक के अनुभवों पर आधारित है और उपयुक्त अनुकूलन के साथ अन्य क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक लागू किया जा सकता है।

मुख्य शब्द: ग्राम पंचायत विकास योजना**,** समग्र विकास, पारदर्शिता, जवाबदेही और समुदाय आधारित निगरानी

प्रस्तावना

देश की एक बड़ी जनसंख्या आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है, जहाँ जीवन स्तर को ऊँचा उठाना और समग्र विकास सुनिश्चित करना एक प्रमुख राष्ट्रीय प्राथमिकता है। विकेन्द्रीकृत योजना

विभिन्न समयों में सरकारों के लिए एक मुख्य चिंता का विषय बनी रही है। ग्राम पंचायत स्तर पर ग्राम सभा को सामाजिक और आर्थिक विकास की योजनाओं को अनुमोदित करने की सिफारिश दलीप सिंह भूरिया समिति (1994) द्वारा की गई थी। योजना आयोग की विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट (2006) ने स्थानीय स्तर की योजना के लिए एक व्यावहारिक कार्य योजना का सुझाव दिया। स्वतंत्रता के बाद के भारत में जमीनी स्तर की योजना या विकेन्द्रीकृत योजना अधिकतर बहस का विषय रही है, बजाय इसके प्रभावी क्रियान्वयन के। भारत के संविधान में निहित राज्य नीति के निदेशक सिद्धांतों में जमीनी स्तर की योजना की जड़ें मौजूद हैं। यद्यपि अतीत में शुरू किए गए अनेक प्रयास राज्यों में अपेक्षित परिणाम नहीं ला सके, फिर भी पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना और उन्हें सशक्त बनाने की कोशिशें और प्रयोग की प्रक्रिया अभी समाप्त नहीं हुई है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार द्वारा समय-समय पर अनेक योजनाएं और कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं।

सरकार की पहलें

हिमाचल प्रदेश का ग्रामीण विकास विभाग विभिन्न योजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू करने का प्रयास कर रहा है, ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का उद्देश्य है:

- ग्रामीण क्षेत्रों में जन सुविधाओं का विस्तार
- रोजगार के अवसरों की उपलब्धता
- गरीब, दलित और महिलाओं के सामाजिक व आर्थिक स्तर में सुधार

इन योजनाओं के माध्यम से सरकार ने संसाधनों की उपलब्धता बढ़ाई है और विभिन्न वर्गों को सशक्त बनाने की दिशा में ठोस कदम उठाए हैं।

चुनौतियाँ और सुधार की आवश्यकता

हालांकि, यह देखा गया है कि कई योजनाएं अपेक्षित प्रभाव नहीं छोड़ पा रही हैं। इसके पीछे मुख्य कारण हैं:

- प्रशासन और ग्रामीण जनता के बीच की दूरी
- स्थानीय सहभागिता की कमी

इन कमियों को दूर करने के लिए योजनाओं में समय-समय पर संशोधन किए जा रहे हैं ताकि वे अधिक प्रभावशाली बन सकें।

हिमाचल प्रदेश में ग्रामीण विकास की चुनौतियाँ और समाधान

हिमाचल प्रदेश, एक पहाड़ी राज्य होने के कारण, यहाँ के ग्रामीण लोगों को भौगोलिक परिस्थितियों से जुड़ी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। दुर्गम स्थल, सीमित संसाधन, और परिवहन की कठिनाइयाँ यहाँ के विकास कार्यों को प्रभावित करती हैं।

प्रमुख चुनौतियाँ

- **भौगोलिक बाधाएँ**: पर्वतीय इलाकों में सड़क, बिजली, और जल आपूर्ति जैसी बुनियादी सुविधाओं का विस्तार कठिन होता है।
- **सूचना की कमी**: ग्रामीण जनता तक सरकारी योजनाओं की जानकारी समय पर नहीं पहुँच पाती।
- **स्थानीय भागीदारी की कमी**: विकास योजनाओं में जनसहभागिता का अभाव योजनाओं को प्रभावी रूप से लागू होने से रोकता है।

इन प्रयासों के बावजूद, ग्रामीण जनता की अधिकांश समस्याएँ अभी भी बनी हुई हैं।

ग्राम पंचायत विकास योजना: समावेशी और सशक्त स्थानीय शासन की दिशा में

भारत की पंचायती राज व्यवस्था ने ग्राम पंचायतों को अनेक प्रकार के अधिकार प्रदान किए हैं, जिनका उद्देश्य है स्थानीय स्तर पर विकास को गति देना। इन अधिकारों का सही और प्रभावी उपयोग करके ग्राम पंचायतें अपने क्षेत्र का समग्र विकास सुनिश्चित कर सकती हैं।

वर्तमान स्थिति की चुनौतियाँ

हालांकि, यह देखा गया है कि कई ग्राम पंचायतें अभी भी विकास की दृष्टि से पीछे हैं। इसका मुख्य कारण है:

- योजनाबद्ध तरीके से कार्य न करना
- स्थानीय समस्याओं की पहचान और समाधान में सामूहिक भागीदारी की कमी
- संसाधनों का असंगठित उपयोग

इसीलिए, प्रत्येक ग्राम पंचायत के लिए अपनी स्वयं की विकास योजना बनाना अत्यंत आवश्यक है।

ग्राम पंचायत विकास योजना क्या है?

ग्राम पंचायत विकास योजना एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें गाँव के लोग सामूहिक रूप से:

- अपनी समस्याओं की पहचान करते हैं

- प्राथमिकताओं का निर्धारण करते हैं
- उपलब्ध संसाधनों के अनुसार विकास की योजना बनाते हैं

यह योजना नीचे से ऊपर की सोच पर आधारित होती है, जिसमें जनता की भागीदारी सबसे महत्वपूर्ण होती है।

ग्राम पंचायतों को आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए ग्राम पंचायत विकास योजना (GPDP) तैयार करने का दायित्व सौंपा गया है। पंचायतों की राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर प्रमुख योजनाओं/कार्यक्रमों के प्रभावी और कुशल क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है, जो ग्रामीण भारत के रूपांतरण के लिए आवश्यक है। ग्राम पंचायत विकास योजना प्रक्रिया को व्यापक और सहभागी प्रक्रिया पर आधारित होना चाहिए, जिसमें संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध 29 विषयों से संबंधित सभी केंद्रीय मंत्रालयों/रेखा विभागों की योजनाओं के साथ पूर्ण समन्वय शामिल हो। ग्राम पंचायतों को ग्राम पंचायत विकास योजना की परिकल्पना करने, योजना बनाने और क्रियान्वयन करने का दायित्व सौंपा गया है ताकि आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय प्राप्त किया जा सके। जन योजना अभियान ग्राम पंचायत विकास योजना को अभियान मोड में तैयार करने के लिए एक प्रभावी रणनीति है।

सामूहिक भागीदारी से समग्र विकास

जब ग्राम पंचायतें अपनी विकास योजना स्वयं बनाती हैं और उसमें सभी वर्गों महिलाओं, युवाओं, वृद्धों, दलितों की भागीदारी होती है, तो विकास न केवल तेज़ होता है बल्कि स्थायी और समावेशी भी बनता है।

इस दिशा में एक क्रांतिकारी पहल भारत सरकार के पंचायती राज मंत्रालय द्वारा "पीपल्स प्लान अभियान" नामक एक अभियान के माध्यम से की गई है। यह अभियान सहभागी प्रक्रिया पर आधारित एक व्यापक योजना प्रक्रिया की परिकल्पना करता है, जिसमें संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध 29 विषयों से संबंधित सभी केंद्रीय मंत्रालयों/रेखा विभागों की योजनाओं के साथ पूर्ण समन्वय शामिल होता है। पंचायतों को ग्रामीण भारत के रूपांतरण के लिए राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर प्रमुख योजनाओं के प्रभावी और कुशल क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है। जन योजना अभियान को सभी राज्यों में 'सबकी योजना सबका विकास' के रूप में लागू किया गया है। इस अभियान के दौरान प्रत्येक वित्तीय वर्ष में ग्राम पंचायत विकास योजना तैयार करने के लिए संरचित ग्राम सभा बैठकों का आयोजन किया जा रहा है। ग्राम पंचायत विकास योजना अभियान ग्राम सभा स्तर पर योजना बनाने के लिए एक गहन और संरचित अभ्यास है, जिसमें पंचायती राज संस्थाओं और संबंधित राज्य विभागों के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है, इस अभियान के अंतर्गत, मिशन अंत्योदय के तहत सभी ग्राम पंचायतों के संबंध में डेटा संग्रहण का कार्य पूरा किया गया है ताकि इस अभ्यास को पूर्ण किया जा सके।

योजना निर्माण की प्रक्रिया के चरण

ग्राम/पंचायत विकास योजना तैयार करने की प्रक्रिया को चरणबद्ध रूप से अपनाना चाहिए। इस महत्वाकांक्षी अभियान के लक्ष्यों को सीमित समय में प्राप्त करने के लिए एक सुनियोजित कार्यप्रणाली अपनाई जाएगी, जिसमें निम्नलिखित चरण शामिल होंगे—

चरण विवरण

1 **जन जागरूकता अभियान** – लोगों को योजना की जानकारी देना

2 **ग्राम सभा का आयोजन** – समस्याओं की पहचान और प्राथमिकता तय करना

3 **संसाधनों का मूल्यांकन** – उपलब्ध मानव, वित्तीय और भौतिक संसाधनों की सूची बनाना

4 **योजना का प्रारूप तैयार करना** – लक्ष्यों और गतिविधियों को स्पष्ट रूप से लिखना

5 **क्रियान्वयन और निगरानी** – समयबद्ध तरीके से कार्य करना और प्रगति की समीक्षा करना

रणनीति का प्रारूप

इस परियोजना को मिशन मोड में क्रियान्वित करने के लिए एक समयबद्ध रणनीति अपनाई जा सकती है, जिससे पंचायत विकास योजना तैयार करने के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके। सभी हितधारकों की क्षमता निर्माण के लिए एक मानक रणनीति अपनाई जा सकती है, जिसमें शामिल हैं:

- ग्राम पंचायत योजना सुविधा दल
- पंचायती राज संस्थाओं के निर्वाचित प्रतिनिधि
- ग्राम पंचायत के सदस्य
- सामुदायिक आधारित संगठन जैसे महिला मंडल और युवक मंडल
- स्वयं सहायता समूहों के सदस्य
- ग्राम पंचायत में कार्यरत विभिन्न रेखीय विभागों के कार्मिक

चरण I – पर्यावरण निर्माण और स्थिति विश्लेषण हेतु हितधारकों की कार्यशाला

ग्राम पंचायत विकास योजना की प्रभावी शुरुआत के लिए पहले चरण में एक हितधारकों की कार्यशाला आयोजित की जाती है। ग्राम पंचायत योजना सुविधा दल की पहचान और वर्गीकरण कार्यशाला में किया जा सकता है। हितधारकों को उनकी रुचियों के आधार पर समूहों में संगठित किया जा सकता है ताकि उनकी धारणाओं को समझा जा सके। यह कार्यशाला गतिविधि पर्यावरण निर्माण, स्थिति विश्लेषण, स्वॉट (SWOT) विश्लेषण, हितधारकों की रुचियों का मानचित्रण और मूल रूप से योजना निर्माण की प्रक्रिया की शुरुआत के लिए एक अवसर होगी इस कार्यशाला का उद्देश्य है:

- योजना के प्रति सकारात्मक वातावरण तैयार करना
- ग्राम पंचायत की वर्तमान सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक स्थिति का विश्लेषण करना
- सभी हितधारकों को योजना प्रक्रिया की महत्ता और भूमिका से अवगत कराना
- सामुदायिक संगठनों, स्वयं सहायता समूहों, पंचायत प्रतिनिधियों और विभागीय अधिकारियों के बीच संवाद और समन्वय स्थापित करना

यह कार्यशाला योजना निर्माण की नींव रखती है और आगे के चरणों के लिए सामूहिक दृष्टिकोण को मजबूत करती है।

चरण II – प्रशिक्षण संस्थान द्वारा क्षमता निर्माण

इस चरण में ग्राम पंचायत योजना प्रक्रिया को प्रभावी ढंग से संचालित करने के लिए संबंधित व्यक्तियों की क्षमता निर्माण की जाती है। ग्राम पंचायत योजना प्रक्रिया के प्रशिक्षण संदर्भ में:

- प्रशिक्षण संस्थान द्वारा ग्राम पंचायत योजना सुविधा दल (GPFT) और अन्य हितधारकों को प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है
- योजना निर्माण, भागीदारी दृष्टिकोण, संसाधन मूल्यांकन, और निगरानी तंत्र जैसे विषयों पर व्यावहारिक एवं सैद्धांतिक जानकारी दी जाती है
- प्रशिक्षण से प्रतिभागियों को तकनीकी दक्षता, नेतृत्व कौशल, और सामुदायिक संवाद की क्षमता प्राप्त होती है
- यह चरण योजना की गुणवत्ता और प्रभावशीलता सुनिश्चित करने के लिए मूलभूत आधार प्रदान करता है

ब्लॉक स्तर पर राज्य ग्रामीण विकास संस्थान द्वारा एक तीन दिवसीय प्रशिक्षण कैप्सूल सरल और सहज तरीके से तैयार किया जा सकता है और लागू किया जा सकता है। इन तीन दिनों को निम्नलिखित रूप में समर्पित किया जा सकता है:

सॉफ्ट स्किल्स पर क्षमता निर्माण

प्रशिक्षण हॉल में निम्नलिखित विषयों पर प्रशिक्षण दिया जाए:

- प्रेरणा
- स्वैच्छिकता
- संवाद कौशल
- नेतृत्व
- टीम निर्माण
- सामुदायिक एकत्रीकरण

योजना प्रक्रिया का ज्ञान

प्रशिक्षण हॉल में निम्नलिखित विषयों पर जानकारी दी जाए:

- सूक्ष्म योजना
- सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन
- आधार रेखा सर्वेक्षण / मिशन अंत्योदय
- ग्राम पंचायत विकास योजना दिशा-निर्देश
- हितधारकों की भूमिका
- सतत् विकास लक्ष्य एवं विकास विभागों की प्रमुख योजनाएँ

योजना प्रक्रिया पर कौशल विकास

प्रशिक्षण हॉल में निम्नलिखित व्यावहारिक विषयों पर प्रशिक्षण दिया जाए:

- गाँव/वार्ड स्तर पर क्लस्टर बैठकें
- वार्ड सभाओं का आयोजन एवं वार्ड योजना का निर्माण
- वार्ड योजनाओं का समेकन कर प्रारंभिक ग्राम पंचायत योजना तैयार करना
- ग्राम सभा द्वारा योजना का साझा करना एवं चर्चा

- विकास योजना का समेकन कर अंतिम सहभागी योजना तैयार करना

प्रशिक्षण का समापन ग्राम पंचायत विकास योजना दिशा-निर्देशों के अनुसार प्रत्येक वार्ड के लिए ग्राम पंचायत योजना सुविधा दल) के गठन के साथ किया जाना चाहिए, ताकि वे क्षेत्रीय गतिविधियों के लिए कार्य कर सकें।

चरण III – ट्रांज़ैक्ट वॉक / वार्ड स्तर पर क्लस्टर बैठकें

इस चरण में ग्राम पंचायत के प्रत्येक वार्ड में ट्रांज़ैक्ट वॉक और क्लस्टर बैठकें आयोजित की जाती हैं, जिनका उद्देश्य है:

- वार्ड स्तर पर स्थानीय समस्याओं और संसाधनों की पहचान करना
- समुदाय के साथ मिलकर वास्तविक स्थिति का अवलोकन करना
- हितधारकों के साथ सीधे संवाद स्थापित करना
- वार्ड सभा के लिए पूर्व तैयारी करना
- योजना निर्माण के लिए प्राथमिक जानकारी एकत्रित करना

ट्रांज़ैक्ट वॉक के दौरान योजना दल क्षेत्र का भ्रमण करता है और भौगोलिक, सामाजिक और आर्थिक पहलुओं को समझता है। इसके बाद क्लस्टर बैठकें आयोजित की जाती हैं, जहाँ वार्ड के नागरिक अपनी समस्याएँ, सुझाव और आवश्यकताओं को साझा करते हैं।

यह चरण सहभागिता आधारित योजना की नींव को मजबूत करता है और आगे के वार्ड योजना निर्माण के लिए आवश्यक इनपुट प्रदान करता है।

कक्षा प्रशिक्षण के बाद, ग्राम पंचायत योजना सुविधा दल के सदस्य, विभागीय प्रतिनिधि, सामुदायिक आधारित संगठनों के सदस्य एवं पंचायत प्रतिनिधियों को वार्ड अनुसार समूहों में विभाजित किया जाना चाहिए (प्रत्येक वार्ड के लिए एक समूह)।

प्रत्येक समूह में निम्नलिखित सदस्य शामिल हो सकते हैं:

- 2-3 ग्राम पंचायत योजना सुविधा दल सदस्य
- संबंधित वार्ड सदस्य
- महिला मंडल एवं युवा समूहों के सदस्य
- गतिविधियों को रिकॉर्ड करने और संचालन हेतु संभावित सुविधा प्रदाता

सभी समूहों को निर्देशित किया जाना चाहिए कि वे वार्ड के निवासियों से चर्चा करके निम्नलिखित प्रारूपों में जानकारी एकत्र करें:

- मिशन अंत्योदय प्रारूप
- डेटा संग्रह प्रारूप
- स्थिति विश्लेषण प्रारूप
- विकास स्थिति रिपोर्ट प्रारूप

यह प्रक्रिया वार्ड स्तर पर सहभागिता आधारित योजना निर्माण को सशक्त बनाती है और जमीनी स्तर की आवश्यकताओं को समझने में सहायक होती है।

समूह के सदस्यों को अपने-अपने वार्डों में ग्रामीणों से संवाद करना चाहिए और उनकी आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं पर चर्चा करनी चाहिए। उन्हें ग्रामीणों को ग्राम सभा तथा उप-ग्राम सभा / वार्ड स्तर की बैठक में भाग लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए। लोगों को अपनी जिज्ञासाएँ व्यक्त करने और चर्चा में सक्रिय रूप से भाग लेने का अवसर दिया जाना चाहिए। वे अपनी दृष्टि और समस्याएँ समूह के सदस्यों के साथ स्वतंत्र रूप से साझा कर सकते हैं।

समूह के सदस्य वार्ड में उपलब्ध भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों का अनुमान बड़े चार्टों के रूप में तैयार कर सकते हैं, जिन्हें वे स्वयं संकलित करें। ग्रामीण आपसी सहमति से अगले दिन के लिए अपने वार्ड में उप-ग्राम सभा हेतु एक केंद्रीय और सामान्य स्थान निर्धारित कर सकते हैं।

चरण IV – वार्ड सभा में चर्चा और अनुमोदन

इस चरण में प्रत्येक वार्ड में वार्ड सभा का आयोजन किया जाता है, जिसमें समुदाय के सदस्यों के साथ योजना संबंधी गतिविधियों पर विस्तृत चर्चा की जाती है। इस सभा का उद्देश्य है:

- वार्ड स्तर पर एकत्रित जानकारी, समस्याओं और संसाधनों की सामूहिक समीक्षा
- समुदाय द्वारा प्रस्तुत दृष्टिकोण, आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं पर विचार
- तैयार की गई वार्ड योजना का प्रस्तुतीकरण और उस पर चर्चा
- समुदाय की सहमति से योजना का अनुमोदन प्राप्त करना

वार्ड सभा एक लोकतांत्रिक मंच है जहाँ नागरिकों को अपनी बात रखने, सुझाव देने और योजना निर्माण में भाग लेने का अवसर मिलता है। यह प्रक्रिया योजना को सहभागिता आधारित और जन-केंद्रित बनाती है।

उप-ग्राम सभा / वार्ड बैठक के दिन, समूह के किसी एक सदस्य द्वारा ग्रामीणों की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं, दृष्टिकोण के साथ-साथ उनकी समस्याओं और मांगों को साझा किया जा सकता है। वे वार्ड में उपलब्ध भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों की वर्तमान स्थिति से संबंधित एकत्रित आंकड़ों को भी साझा कर सकते हैं। वार्ड सदस्य उभरते मुद्दों पर अपने सुझाव, टिप्पणियाँ और संशोधन व्यक्त कर सकते हैं, जिन्हें समूह के सदस्य सभी की सहमति से बड़े चार्टों में विवेकपूर्ण ढंग से शामिल कर सकते हैं। यदि किसी विषय पर मतभेद हो, तो उसे ग्राम सभा में निर्णय के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है।

चित्र 12.1 : पंचायत विकास योजना तैयार करने की प्रक्रिया

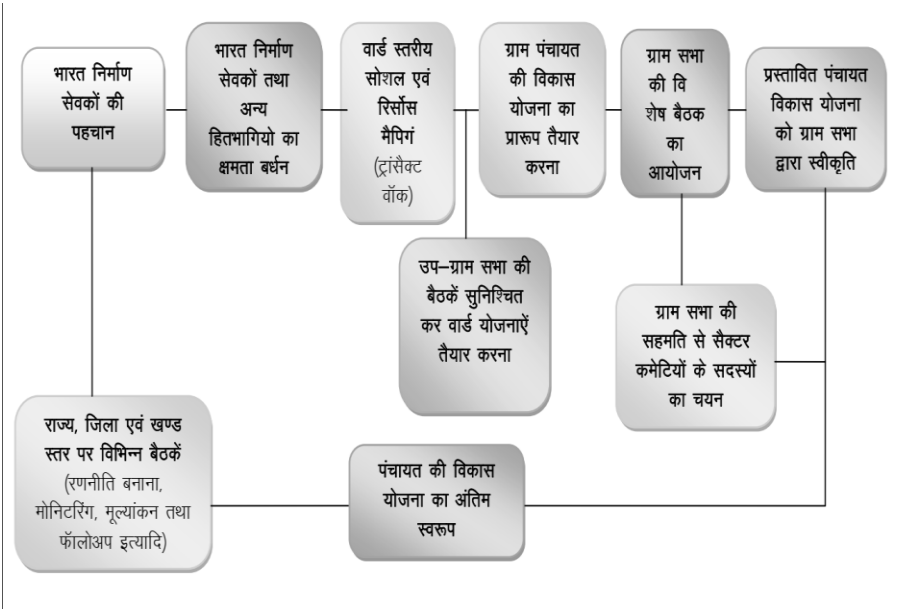

चरण V – प्रारंभिक ग्राम पंचायत योजना पर चर्चा और अनुमोदन

उप-ग्राम सभा में आवश्यकताओं, आकांक्षाओं और दृष्टिकोण पर हुई विस्तृत चर्चा के आधार पर, समूह के सदस्य वार्ड योजना को विभागवार ग्राम पंचायत योजना में समाहित कर सकते हैं, जिसे उन्हीं बड़े चार्टों पर दर्शाया जाएगा। समूह के सदस्य लोगों के सभी सुझावों और आंकड़ों को चार्ट पेपर पर दर्ज करेंगे। यह प्रक्रिया एक प्रारंभिक ग्राम पंचायत योजना के रूप में परिणत होगी।

इस प्रारंभिक ग्राम पंचायत योजना पर विशेष ग्राम सभा में चर्चा की जाएगी, जिसमें सभी विकास/रेखा विभागों के प्रतिनिधि उपस्थित रहेंगे। उन्हें विशेष ग्राम सभा में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए और प्रारूपित योजना में उठाए गए मुद्दों पर प्रतिक्रिया देनी चाहिए।

समूह के सदस्य अपनी विभागवार सूक्ष्म योजनाओं को जनता और प्रशासन के साथ साझा करेंगे। ग्राम सभा के सदस्य प्रस्तावों और संकल्पों को सक्रिय रूप से अनुमोदित कर योजना को अंतिम रूप देने में भाग लेंगे।इस चरण में वार्ड स्तर पर तैयार की गई योजनाओं को समेकित कर एक प्रारंभिक ग्राम पंचायत योजना (Draft GP Plan) तैयार की जाती है। इसके बाद ग्राम सभा में निम्नलिखित गतिविधियाँ की जाती हैं:

- प्रारंभिक योजना का प्रस्तुतीकरण ग्राम सभा में किया जाता है
- ग्राम सभा के सदस्यों द्वारा योजना के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा और समीक्षा की जाती है
- नागरिकों को अपनी टिप्पणियाँ, सुझाव और आपत्तियाँ व्यक्त करने का अवसर दिया जाता है
- आवश्यक संशोधन और सुधारों को शामिल कर योजना को सर्वसम्मति से अनुमोदित किया जाता है

यह प्रक्रिया योजना को जन-सहभागिता आधारित, पारदर्शी और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप बनाती है इस चरण पर आवश्यकताओं की प्राथमिकता को अंतिम रूप दिया जा सकता है। संशोधन, टिप्पणियाँ और पर्यवेक्षणों को इसी स्तर पर शामिल किया जा सकता है। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप एक अंतिम सहभागी सूक्ष्म योजना तैयार होगी, जिसे आगे की कार्रवाई के लिए लिया जाएगा। ग्राम सभा इस योजना के क्रियान्वयन और निगरानी हेतु दिशा-निर्देशों के प्रावधानों के अनुसार कार्यकारी समूहों के गठन को भी अनुमोदित कर सकती है।

खंड समिति द्वारा अंतिम रूप

ग्राम सभा से प्राप्त अंतिम योजना खंड समिति के लिए एक इच्छाओं की सूची के रूप में होगी, जिसे समिति को विभिन्न विभागों की योजनाओं और कार्यक्रमों से उपलब्ध संसाधनों के आधार पर अंतिम रूप देना होगा। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण विकास और पंचायती राज विभागों से प्राप्त निधियों को भी ध्यान में रखा जाएगा।

इस योजना के वित्तीय पक्ष को अंतिम रूप देने के बाद, खंड समिति को दिशा-निर्देशों के प्रारूप के अनुसार योजना का अध्याय विभाजन) करना चाहिए। इसके बाद अगला चरण होगा दिशा-निर्देशों के अनुसार परियोजना निर्माण कार्यकारी समूह प्रारूपित योजना में शामिल कार्यों की प्राथमिकता तय करने पर कार्य करेंगे। कार्यों की प्राथमिकता और संसाधनों की पहचान के बाद, एक ऐसी

प्रणाली स्थापित की जाएगी जिससे अधिकतम दक्षता और संसाधनों का समुचित उपयोग सुनिश्चित हो सके।

कार्यकारी समूह इस योजना को पंचायत समिति के माध्यम से जिला परिषद को भेजेंगे, ताकि जिला योजना समिति से अनुमोदन प्राप्त किया जा सके। इसके बाद, तकनीकी और प्रशासनिक अनुमोदन तथा वित्तीय स्वीकृतियाँ दी जाएंगी, जिनमें प्रत्येक चरण के लिए समय-सीमा निर्धारित की जाएगी।

ये कार्यकारी समूह यह भी सुनिश्चित करेंगे कि संबंधित विभागों द्वारा अनिवार्य और नियमित गुणवत्ता जांच की जाए। ग्राम पंचायत विकास योजना में शामिल कार्यों का क्रियान्वयन और भौतिक निगरानी ग्राम सभा में त्रैमासिक रूप से प्रस्तुत की जाएगी, जिसमें योजना के लक्ष्यों की पूर्ति न होने के कारणों और सुधार के उपायों को साझा किया जाएगा।

इसके अतिरिक्त, खंड समिति योजना के कार्यान्वयन की गति बढ़ाने के लिए प्रदर्शन की समीक्षा और निगरानी कर सकती है। योजना की प्रगति की समीक्षा ग्राम सभा की त्रैमासिक बैठक का नियमित हिस्सा बननी चाहिए।

समाधान की दिशा में कदम

यदि सरकार और स्थानीय समुदाय मिलकर कार्य करें, तो ग्रामीण विकास की गति को कई गुना तेज किया जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है इन चुनौतियों से निपटने के लिए कुछ ठोस उपाय अपनाए जा सकते हैं:

- **स्थानीय नेतृत्व को सशक्त बनाना**: ग्राम पंचायतों और स्वयंसेवी संगठनों को योजनाओं के क्रियान्वयन में सक्रिय भूमिका देनी चाहिए।
- **जन-जागरूकता अभियान**: योजनाओं की जानकारी सरल भाषा और स्थानीय माध्यमों से पहुँचाई जाए।
- **तकनीकी समाधान**: डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से सेवाओं की पहुँच बढ़ाई जा सकती है।
- **स्थानीय भागीदारी को बढ़ावा देना**
- **जन-जागरूकता अभियान चलाना**
- **नीतियों का क्रियान्वयन ज़मीनी स्तर पर सुनिश्चित करना**

निष्कर्ष

हिमाचल प्रदेश में ग्रामीण विकास एक जटिल लेकिन आवश्यक प्रक्रिया है। जब सरकार और जनता मिलकर काम करें, तो पहाड़ों की ऊँचाई विकास की बाधा नहीं, बल्कि उसकी प्रेरणा बन सकती है। यह पहल और प्रयास यह सुनिश्चित करेंगे कि स्थानीय स्तर पर योजना निर्माण संभव हो

सके और स्थानीय समुदाय एक सक्रिय भूमिका निभा सके। सभी हितधारकों की क्षमता विकास एक महत्वपूर्ण पहलू है, और यदि उन्हें सहभागी प्रशिक्षण के माध्यम से उपयुक्त मार्गदर्शन प्रदान किया जाए, तो समुदाय और पंचायती राज संस्थाएं अपनी भूमिका और जिम्मेदारियों के साथ न्याय कर सकते हैं।

इस प्रयास में दृढ़ संकल्प, प्रतिबद्धता और ईमानदारी, तथा प्रशासन का सहयोग सफलता की कुंजी है। सभी हितधारक एकीकृत तरीके से प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं, जिससे अंततः लोगों का सशक्तिकरण और विकेंद्रीकृत योजना निर्माण के लिए पंचायती राज संस्थाओं का सुदृढ़ीकरण सुनिश्चित होता है। ग्रामीण विकास केवल एक सरकारी जिम्मेदारी नहीं, बल्कि पूरे समाज की साझी जिम्मेदारी है। जब गाँव समृद्ध होंगे, तभी भारत वास्तव में विकसित राष्ट्र बन सकेगा। ग्राम/पंचायत विकास योजना केवल एक दस्तावेज नहीं, बल्कि एक जन-आंदोलन है जो स्थानीय शासन को सशक्त बनाता है और गाँवों को आत्मनिर्भरता की ओर ले जाता है।

संदर्भ

- दलिप सिंह भूरिया समिति. (1994). *अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों रिपोर्ट.* https://ncst.nic.in/uploads-dev/important_reports/Bhuria%20Commission%20Report.pdf
- ग्राम पंचायत विकास योजना दिशा-निर्देश. (2018). पंचायती राज मंत्रालय, भारत सरकार।
- स्थानीय स्तर पर योजना निर्माण. (2006). विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट, योजना आयोग, भारत सरकार।
- पत्र सूचना कार्यालय. (2025). *जन योजना अभियान: जमीनी स्तर पर शासन को मजबूत करना, समावेशी विकास को बढ़ावा देना विकसित भारत के लिए विकसित पंचायतें*। https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2175079
- पंचायती राज विभाग. (2021). *प्रशिक्षण मार्गदर्शिका: हमारी योजना हमारा विकास*। https://upccce.org/public/images/toolkit/Final_CCA-DRR_GPDPFinal.pdf
- बंसल, र. (2012). *ग्राम/पंचायत विकास योजना का निर्माण.* हिमाचल प्रदेश राज्य ग्रामीण विकास संस्थान, शिमला।
- बंसल, र. (2013). स्थानीय स्वयंसेवकों के साथ जमीनी योजना निर्माण. *पॉलिटिकल इकोनॉमी जर्नल ऑफ इंडिया, 23*(2)।

13

ग्राम सभा में पारदर्शिता एवं जवाबदेही के तकनीकी नवाचार

डॉ. तौकीर खान डॉ. मोहसिन उद्दीन

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.155-159
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

भारत में ग्राम सभा लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का मूल स्तंभ है, किंतु इसकी कार्यवाही के दस्तावेजीकरण में लंबे समय से चुनौतियाँ रही हैं। इस अध्याय में हाल ही में विकसित कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) आधारित डिजिटल उपकरण 'सबहासार' का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जिसका उद्देश्य ग्राम सभा बैठकों की कार्यवाही का स्वचालित, मानकीकृत और बहुभाषीय दस्तावेजीकरण सुनिश्चित करना है। साथ ही, कर्नाटक के पंचतंत्र 2.0 डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के अनुभव को एक पूर्ववृत्त के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि तकनीकी नवाचार तभी प्रभावी होते हैं जब वे संस्थागत क्षमता निर्माण, प्रशासनिक इच्छाशक्ति और नागरिक सहभागिता के साथ जोड़े जाएँ।

मुख्य शब्द: सबहासार, ग्राम सभा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल शासन, पंचतंत्र 2.0

प्रस्तावना

भारत में 73वें संविधान संशोधन (1992) के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया। इसका मूल उद्देश्य लोकतंत्र को जमीनी स्तर तक गहराई देना, नागरिकों को स्थानीय शासन की प्रक्रिया से जोड़ना और उन्हें निर्णय-निर्माण में सक्रिय भागीदारी के लिए सशक्त करना था। इस संशोधन के केंद्र में ग्राम सभा को रखा गया, जिसे स्थानीय स्वशासन की आत्मा माना जाता है। ग्राम सभा ग्रामीणों को एक ऐसा मंच उपलब्ध कराती है, जहाँ वे प्रत्यक्ष रूप से विकास योजनाओं पर विचार-विमर्श कर सकते हैं, प्राथमिकताओं का निर्धारण कर सकते हैं और

स्थानीय प्रशासन की जवाबदेही तय कर सकते हैं। इस प्रकार, 73वें संशोधन के अंतर्गत ग्राम सभा की स्थापना ने न केवल लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को वास्तविक स्वरूप प्रदान किया, बल्कि शासन व्यवस्था में जनता को एक सक्रिय साझेदार भी बनाया।

यद्यपि ग्राम सभा को संवैधानिक मान्यता प्राप्त है, किंतु व्यवहारिक स्तर पर इसकी कार्यप्रणाली में अनेक चुनौतियाँ बनी हुई हैं। कम नागरिक सहभागिता, पारित प्रस्तावों के सीमित अनुपालन, और विचार-विमर्श की कार्यवाही के दस्तावेजीकरण की कमी इसके प्रभाव को कमजोर करती है। एक बड़ी व्यावहारिक चुनौती यह भी है कि अधिकांश ग्राम पंचायतों में स्थायी पंचायत सचिव का अभाव रहता है तथा कार्यवाही लिखने के लिए प्रशिक्षित या पेशेवर स्टाफ उपलब्ध नहीं होता। फलस्वरूप ग्राम सभा की बैठकों की कार्यवाही का मसौदा तैयार करने में अत्यधिक समय लगता है, जिससे पारदर्शिता और जवाबदेही दोनों प्रभावित होती हैं।

इन्हीं चुनौतियों को देखते हुए कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artlflclal lntelllgence - Al) की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। A। ग्राम सभा की कार्यवाही को अधिक पारदर्शी, प्रभावी और समयबद्ध बनाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। इस दिशा में 'सबहासार' नामक एक अभिनव A। आधारित उपकरण विकसित किया गया है, जिसका उद्देश्य ग्राम सभा की बैठकों की कार्यवाही का स्वचालित और मानकीकृत दस्तावेजीकरण सुनिश्चित करना है। यह उपकरण ग्राम सभा की चर्चाओं के ऑडियो और वीडियो रिकॉर्डिंग का विश्लेषण कर स्वतः कार्यवृत्त तैयार करता है, जिससे कार्यवाही के मसौदे में लगने वाला समय कम होता है और एकरूपता भी बनी रहती है ।

केंद्र सरकार ने इस महत्वाकांक्षी डिजिटल पहल की औपचारिक शुरुआत 15 अगस्त 2025 को त्रिपुरा से की और इसे चरणबद्ध तरीके से अन्य राज्यों में लागू किया जा रहा है। यह पहल न केवल ग्राम सभा की कार्यप्रणाली को आधुनिक और कुशल बनाएगी, बल्कि नागरिक सहभागिता को भी प्रोत्साहित करेगी। इस प्रकार ग्राम सभा की संवैधानिक महत्ता और A। जैसे आधुनिक उपकरणों का उपयोग मिलकर स्थानीय लोकतंत्र को और अधिक सशक्त तथा पारदर्शी बनाने का मार्ग प्रशस्त करते हैं (पंचायती राज मंत्रालय, 2025)।

सबहासार 'भाषिणी' राष्ट्रीय भाषा अनुवाद मंच पर आधारित है, जो ऑडियो और वीडियो सामग्री का स्वचालित ट्रांसक्रिप्शन, चुनी हुई भाषा में अनुवाद तथा संक्षिप्त सार प्रस्तुत करने में सक्षम है। वर्तमान में यह हिंदी, बंगाली, तमिल, तेलुगु, मराठी, गुजराती सहित प्रमुख भारतीय भाषाओं एवं अंग्रेज़ी में कार्य करता है। इस पहल को ग्राम सभा बैठकों को अधिक पारदर्शी, समावेशी और सहभागी बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है (इंडियन एक्सप्रेस, 14 अगस्त 2025)।

डिजिटल परिवर्तन के संदर्भ में कर्नाटक का अनुभव विशेष रूप से उल्लेखनीय है । कर्नाटक, जहाँ 5, 955 ग्राम पंचायतें हैं, ने ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज (RDPR) विभाग के माध्यम से कई

महत्वपूर्ण सुधार लागू किए हैं। कर्नाटक लंबे समय से ई-गवर्नेंस अपनाने में अग्रणी रहा है और एक दशक पूर्व विकसित पंचतंत्र 1.0 समाधान के माध्यम से देश में पंचायती राज संस्थाओं के डिजिटल रूपांतरण का मार्ग प्रशस्त किया। इसी विरासत को आगे बढ़ाते हुए राज्य ने पंचतंत्र 2.0 की परिकल्पना की, जो ग्राम पंचायतों के सभी प्रमुख कार्यों को डिजिटल और केंद्रीकृत करने का एक व्यापक एवं एकीकृत प्लेटफ़ॉर्म है (पंचतंत्र, 2023)।

पंचतंत्र 2.0 का उद्देश्य सहभागी योजना को सुदृढ़ करना, सेवा वितरण में पारदर्शिता बढ़ाना, प्रक्रियाओं का मानकीकरण करना, प्रदर्शन-आधारित मूल्यांकन को बढ़ावा देना तथा डिजिटल रूप से सक्षम कराधान एवं राजस्व संग्रह की व्यवस्था को सुदृढ़ करना है। यह समाधान ग्राम पंचायतों के कार्य संचालन को सुव्यवस्थित करता है, योजनाओं की प्रगति पर वास्तविक समय निगरानी प्रदान करता है तथा डेटा-आधारित निर्णय-निर्माण को सक्षम बनाता है (पंचतंत्र, 2023)।

कर्नाटक का यह अनुभव स्पष्ट करता है कि डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म केवल प्रशासनिक दक्षता में वृद्धि नहीं करते, बल्कि नागरिक सेवाओं की पहुँच, सहभागिता और जवाबदेही को भी सुदृढ़ करते हैं। यह अनुभव सबहासार जैसे राष्ट्रीय स्तर पर लागू किए जाने वाले डिजिटल नवाचारों के लिए एक सशक्त संदर्भ प्रदान करता है और यह संकेत करता है कि तकनीकी हस्तक्षेप तभी अधिक प्रभावी सिद्ध होते हैं जब वे संस्थागत क्षमता निर्माण, नागरिक सहभागिता तथा नीतिगत समर्थन के साथ समन्वित रूप में लागू किए जाएँ।

तुलनात्मक दृष्टि से, जहाँ कर्नाटक का पंचतंत्र 2.0 स्थानीय स्तर पर डिजिटल परिवर्तन का सफल मॉडल प्रस्तुत करता है, वहीं सबहासार का राष्ट्रीय स्तर पर कार्यान्वयन इसे एक व्यापक और समावेशी पहल बनाता है, जो पूरे देश में ग्राम सभाओं को अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी और डेटा-संचालित बनाने की क्षमता रखता है।

सबहासार: ग्राम सभा दस्तावेजीकरण के लिए AI

सबहासार का अर्थ है "हर चर्चा का सार एक ही स्थान पर"। इसे पंचायती राज मंत्रालय द्वारा विकसित किया गया है। यह स्थानीय शासन में लंबे समय से विद्यमान एक कमजोरी ग्राम सभा की कार्यवाही का सही और समय पर दस्तावेजीकरण को दूर करने का प्रयास है।

मुख्य विशेषताएँ

- **स्वचालित लिप्यंतरण:** ऑडियो और वीडियो रिकॉर्डिंग से ग्राम सभा चर्चाओं को एआई और प्राकृतिक भाषा संसाधन (NLP) द्वारा ट्रांसक्राइब करता है।
- **निर्णय पहचान:** यह स्वचालित रूप से प्रस्ताव, कार्य बिंदु और प्रतिबद्धताओं की पहचान करता है।

- **मानकीकृत कार्यवृत्त:** यह मानकीकृत दस्तावेज तैयार करता है जिससे मानवीय त्रुटियाँ और पक्षपात कम होते हैं।
- **बहुभाषीय समर्थन:** भाषिणी (राष्ट्रीय भाषा अनुवाद मिशन) से एकीकृत, प्रारंभ में 13 भारतीय भाषाओं में समर्थन उपलब्ध।
- **विस्तार क्षमता:** भविष्य में अन्य भाषाओं और क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुसार विस्तार योग्य।

नीति दिशा और प्रारंभिक क्रियान्वयन

पंचायती राज मंत्रालय ने सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को ग्राम सभाओं के कार्यवृत्त तैयार करने हेतु सबहासार अपनाने का निर्देश दिया। इसका आधिकारिक शुभारंभ 15 अगस्त 2025 को विशेष ग्राम सभाओं के दौरान हुआ। त्रिपुरा में इसके माध्यम से 1, 194 ग्राम पंचायतों (पारंपरिक संस्थाओं सहित) को पूर्ण कवरेज दिया गया।

अपेक्षित परिवर्तन

- **पारदर्शिता और जवाबदेही :** एआई-जनित कार्यवृत्त हेरफेर की संभावना कम करते हैं।
- **दक्षता:** लिपिकीय बोझ घटने से पंचायत कर्मचारी सेवा वितरण पर अधिक ध्यान दे सकते हैं।
- **समावेशिता:** बहुभाषीय लिप्यंतरण विभिन्न भाषाई क्षेत्रों में समान पहुंच सुनिश्चित करता है।
- **संस्थागत स्मृति:** डिजिटलीकृत अभिलेख दीर्घकालिक निगरानी में सहायक होंगे।

पंचतंत्र 2.0: डिजिटल शासन का पूर्ववृत्त

सबहासार से पूर्व कर्नाटक में पंचतंत्र 2.0 ने यह सिद्ध किया कि डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म ग्राम पंचायतों के कार्य में पारदर्शिता और जवाबदेही ला सकते हैं।

मुख्य विशेषताएँ

- वास्तविक समय वित्तीय प्रबंधन और संसाधन उपयोग की निगरानी।
- विकास योजनाओं को एकीकृत प्लेटफ़ॉर्म पर ट्रैक करना।
- नागरिक शिकायत निवारण और सेवा मॉनिटरिंग।
- निर्णय समर्थन हेतु विश्लेषणात्मक डैशबोर्ड।

सबहासार के लिए सीख

- **क्षमता निर्माण:** डिजिटल साक्षरता और प्रशिक्षण अत्यावश्यक।
- **प्रशासनिक इच्छाशक्ति:** राज्य सरकार का सक्रिय समर्थन आवश्यक।
- **एकीकरण:** इसे अन्य शासकीय प्लेटफॉर्म से जोड़ना ताकि ग्राम सभा प्रस्ताव योजनाओं और बजट में परिलक्षित हों।
- **नागरिक सहभागिता:** कार्यवृत्त नागरिकों को सुलभ कराना, जिससे लोकतांत्रिक मूल्य सुदृढ़ हों।

निष्कर्ष

सबहासार का महत्व केवल तकनीकी समाधान तक सीमित नहीं है; यह ग्राम सभाओं को एक आधुनिक, पारदर्शी और उत्तरदायी मंच बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। कर्नाटक के पंचतंत्र 2.0 का अनुभव इस बात को पुष्ट करता है कि जब डिजिटल नवाचार प्रशासनिक इच्छाशक्ति, क्षमता निर्माण और नागरिक भागीदारी से जुड़े होते हैं, तो वे ग्रामीण शासन की प्रभावशीलता को बढ़ा सकते हैं। यदि सबहासार का क्रियान्वयन व्यवस्थित ढंग से किया जाए, तो यह भारत में सहभागी लोकतंत्र के सुदृढ़ीकरण में एक मील का पत्थर साबित हो सकता है।

संदर्भ

- *पंचतंत्र* (2023). *पंचतंत्र 2.0.* https://panchatantra.karnataka.gov.ln/USER_MODULE/userLogln/loadAboutUs
- पंचायती राज मंत्रालय। (2025). *सबहासार पोर्टल.* https://sabhasaar.panchayat.gov.ln/
- इंडियन एक्सप्रेस (14 अगस्त 2025) कैसे एआई टूल देश भर में ग्राम सभा बैठकों के कार्यवृत्त में संरचना और एकरूपता लाएगा, https://lndlanexpress.com/artlcle/lndla/al-tool-structure-unlformlty-gram-sabha-meetlngs-country-al-10186886/
- कोठारी, सी.आर. (2019) रिसर्च मेथोडोलॉजी: मेथड्स एंड टेक्निक्स, चौथा एडिशन, न्यू एज इंटरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

14

ग्रामीण भारत में सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रियाएँ

डॉ. विजय प्रकाश शर्मा

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.160-166
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

यह अध्याय सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं और ग्रामीण विकास के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को विश्लेषित करता है। परिवर्तन को प्रकृति का शाश्वत नियम मानते हुए इसमें विज्ञान, तकनीक और वैश्वीकरण से उत्पन्न अवसरों और चुनौतियों पर प्रकाश डाला गया है। ग्रामीण भारत में सामुदायिक विकास, पंचायती राज, औद्योगीकरण और नीतिगत पहलों के प्रभाव का विवेचन किया गया है। अध्याय स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वतंत्रता पश्चात् ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की निरंतरता और उनकी उपलब्धियों को दर्शाता है। इसमें वर्तमान में लागू योजनाओं की भूमिका और जनसहभागिता के महत्व पर भी चर्चा की गई है, जो ग्रामीण भारत को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में सहायक है।

मुख्य शब्द: परिवर्तन, सामाजिक परिवर्तन, ग्रामीण विकास, पंचायती राज, वैश्वीकरण

परिवर्तन की प्रक्रियाएँ

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। हर सुबह एक नया परिवर्तन लेकर आता है। आज की चिंतन धारा में सामाजिक परिवर्तन पर शोध प्रबल रूप से उभरा है, मनुष्य और उसकी सामाजिक संस्थाएं समय के साथ-साथ विकसित हुई हैं। इस विकास की प्रक्रिया में मनुष्य एवं उसकी संस्थाएं अनगिनत परिवर्तनों के दौर से गुजर चुकी हैं, और आगे भी यह क्रम चलता रहेगा।

विज्ञान एवं तकनीक के विकास ने प्रकृति आधारित मानव जीवन को नई शक्ति प्रदान की है। विश्व एक लघु दायरे में आ गया है, क्योंकि यातायात की आधुनिक सुविधाओं ने देशों को एक दूसरे के करीब ला दिया है।

अब 'वैश्विक ग्राम' की चर्चा होने लगी है। संचार क्रांति ने टेलीविजन, रेडियो, कंप्यूटर, इंटरनेट, मोबाइल फोन के माध्यम से दूरी को ड्राइंग रूम में समेट दिया है। इसमें एक-दूसरे को समझने की क्षमता का विकास हुआ है, पूर्वाग्रह में कमी आ रही है, भौगोलिक, सांस्कृतिक, भू-भागीय दूरियाँ सिमट गई है। स्वास्थ्य उपकरणों में एवं शल्य चिकित्सा में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है, जिससे मनुष्य की औसत आयु में वृद्धि हुई है जो पहले संभव नहीं था। इससे आज के मानव में सुंदर भविष्य, सुखमय भविष्य की आशाएं जागृत हुई हैं।

इस सब के बावजूद, आज का आदमी भयाक्रांत भी हो गया है, क्योंकि उसके द्वारा विकसित तकनीक शक्ति ने उसे नाभिकीय युद्ध) के द्वार पर लाकर खड़ा कर दिया है, गलत उपयोग से संपूर्ण विनाश की संभावना उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। दूसरे प्रकार का भय अमीरों और गरीबों के बीच बढ़ती दूरी है, गरीबों का दोहन रुका नहीं है। तीसरे प्रकार का भय धर्मन्धता जनित आतंकवाद है। राज्यों, धर्मों आदि के पूर्वाग्रह बढ़ रहा है, समाजिक विभेद समाप्त नहीं हुआ है। ऐसा लगता है, कि जैसे-जैसे मनुष्य की तकनीकी शक्ति बढ़ती जा रही है, उसकी सामाजिक चेतना विलुप्त होती जा रही है। इस विडंबना ने सामाजिक परिवर्तन की सत्यता को समझने की अहमियत बढ़ा दी है, अतः सामाजिक सत्य और बदलते सामाजिक व्यवस्था को वैश्विक परिप्रेक्ष्य में समझना अत्यंत आवश्यक हो जाता है, जिससे सामाजिक परिवर्तन की दिशा और दशा को समझा जा सके। ग्रामीण भारत के संदर्भ में हो रहे परिवर्त्तन की इन सामाजिक प्रक्रियाओं को निम्नलिखित दस मुख्य कारकों के रूप में समझा जा सकता हैः-1. हिन्दूत्व ग्रहण 2. जनजाति करण 3. ईस्लामी करण 4. औधोगीकरण एवं नगरीकरण 5. आधुनिकीकरण 7. पुनर्नवीकरण 8. ख्रीस्ती करण 9. उदारीकरण और 10. वैश्वीकरण

इतिहास: स्वतंत्रतापूर्व- ग्रामीण विकास के इतिहास पर डॉ0 सुभाष चंद्रा ने प्रकाश डालते हुए लिखा है- कि आधुनिक भारत में ग्रामीण विकास की संकल्पना ब्रितानी शासनकाल में 1930 में बंगाल के सुदरवन में सर डेनियल हैमिल्टन ने प्रायोगिक तौर पर प्रारंभ किया तदुपरांत 1920 में रवींद्रनाथ ठाकुर ने शान्तिनिकेतन प्रयोग किया, 1921 में ब्रायन ने गुड़गांव प्रयोग किया, कृष्णामाचारी ने बड़ौदा पुनर्निर्माण आंदोलन के माध्यम से 1930 के दशक में काम किया, मोहनदास करमचंद गांधी ने 1936 में गुजरात में 'सेवाग्राम' की संकल्पना विकसित की तथा 1946 में मद्रास में 'फिरका' विकास योजना का आरंभ मील के पत्थर सिद्ध हुए।

स्वतंत्र भारत में ग्रामीण विकास कार्यक्रम

1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1948-52 के दशक में ग्रामीण पुनर्संरचना कार्यक्रम प्रारंभ हुआ जिसे अलबर्ट मेयर ने 'ईटावा परियोजना' के नाम से(1947-48) में प्रारंभ किया, जिसे भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभारंभ कहा जा सकता है। डेढ़ वर्ष के सफल प्रयास ने एक प्रशासनिक ढांचा प्रदान किया जिसमें पहली बार ग्रामीण स्तर तक सामुदायिक विकास कार्यक्रम को पहुंचाया गया। विभिन्न भागों के

कार्यक्रमों को एक सामान्य एजेंसी के माध्यम से संचालित किया गया तथा पहली बार 'बहुद्देशीय ग्रामीण स्तरीय कार्यकर्ता की नियुक्ति हुई।

1947-48 में ही कृषि उत्पाद वृद्धि हेतु अधिक अन्न उपजाओ कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। परंतु यह सुचारु रुप से चल नहीं पाया फलतः इस के क्रियाकलापों के मूल्यांकन हेतु एक समिति बनाई गई, जिसने 1952 में अपनी रिपोर्ट सौंपी तथा बहुत से सुझाव दिए। इस सुझावों के आलोक में भारत सरकार ने 1952 में ही सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारंभ कर दिया। कमिटि रिपोर्ट तथा 'इटावा पायलट प्रोजेक्ट' को ध्यान में रखते हुए, 1953-60 में अमेरिकी वित्तीय सहायता (फोर्ड फाउंडेशन) के माध्यम से 15 पायलट प्रोजेक्ट सामुदायिक विकास हेतु प्रारंभ किए गए। इसके बाद 1952 में 'इंडो-अमेरिकन टेक्निकल ऑपरेशन एग्रीमेंट' के माध्यम से अक्टूबर 1952 में 55 जिलों में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरुआत, ग्रामीणों के सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन हेतु हुआ।

यहां यह बताना जरूरी है कि इस परियोजना के तहत अमेरिकी मानवशास्त्रियों तथा भारतीय मानवशास्त्रियों ने मिलकर भारत में ग्राम्य-अध्ययन प्रारंभ किया जिसका उद्देश्य ग्रामीण विकास में सामुदायिक विकास का ढांचा तैयार करना था। इन अध्ययनों के आधार पर बाद में 'पंचवर्षीय योजना' का कार्यक्रम तय किया गया। इन प्रारंभिक प्रयासों के बाद ग्रामीण विकास को दिशा तथा गति मिलना प्रारंभ हो गया और फिर निम्नलिखित बलवंत राय मेहता समिति का गठन किया गया जिसने पूर्व के प्रयासों का आकलन करने के बाद अपनी संस्तुति सरकार को सौंपी जिसमें शासन के प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण की बात उठाई गई और 'पंचायती राज' प्रारंभ किया गया।

इस पंचायती राज व्यवस्था में त्रिस्तरीय व्यवस्था लागू की गई। पहला 'जिला परिषद' दूसरा प्रखंड स्तर पर 'पंचायत समिति' और तीसरा गांव स्तर पर 'ग्राम पंचायत'।

इस प्रणाली की प्रशासन व्यवस्था हेतु निम्नलिखित तीन संरचनाएं बनी-

1. पंचायती राज
2. सीधी रेखिय सेवक, जैसे बी.डी.वो
3. विशेषज्ञ जैसे विभिन्न विभागों के एक्सटेंशन ऑफिसर

इसके बाद एक राष्ट्रीय स्तर पर नेशनल एक्सटेंशन ऑर्गेनाइजेशन की शुरुआत हुई ताकि ग्रामीण कार्य को गति प्रदान किया जा सके। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सामुदायिक विकास तथा एम.ई.ओ को ग्रामीण जमीन के उत्थान हेतु एकीकृत मान लिया गया। 1958 में कृषि प्रशासन समिति का गठन किया गया। जिसने अपने प्रतिवेदन में कृषि विभाग की कार्यशैली में सुधार की बात उठाई। यहां से ग्रामीण विकास की दशा और दिशा दोनों में सुधार होना प्रारंभ हो गया, तदुपरांत निम्नलिखित कार्यक्रम चलाएं गये और चलाये जा रहे हैं।

राष्ट्रीय ग्रामीण विकास की आवश्यकता

ग्रामीण विकास एक सतत प्रक्रिया है जिसमें कृषि विकास आर्थिक एवं सामाजिक अंतर संरचना, उचित मजदूरी, गृह निर्माण, ग्राम आधारित योजना का निर्माण, जन स्वास्थ्य शिक्षा, प्रकार्यात्मक साक्षरता तथा संचार मुख्य विभाग हैं। भारत में ग्रामीण विकास एक राष्ट्रीय आवश्यकता है इस अवस्था के निम्नलिखित कारण है-

1. भारत की अधिक जनसंख्या गांव में निवास करती है अतः राष्ट्रीय विकास हेतु ग्रामीण विकास आवश्यक है।
2. भारत की कुल राष्ट्रीय आय लगभग 50 प्रतिशत कृषि पर आधारित है जो भारत का मुख्य पेशा है।
3. लगभग 70 प्रतिशत भारतीय जनसंख्या कृषि कार्य के माध्यम से रोजगार प्राप्त करती है।
4. उद्योग के लिए सबसे अधिक समाग्री कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र से प्राप्त होती है
5. औद्योगिक जनसंख्या वृद्धि को तभी न्यायोचित माना जा सकता है जब ग्रामीण जनसंख्या की क्रय शक्ति बढ़ाकर समर्थ बनाया जाए ताकि औद्योगिक उत्पाद की खपत हो सके।
6. शहरी अभिजात्य एवं ग्रामीण गरीबों में बढ़ती दूरी राजनीतिक अस्थिरता को आमंत्रित कर सकती है।

उपरोक्त तथ्यों के आलोक में ग्रामीण विकास हेतु निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है-

1. संपूर्ण सर्वांगीण ग्रामीण विकास हेतु संस्कृति, समाज, अर्थव्यवस्था, तकनीक तथा स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रम का विकास।
2. ग्रामीण जनसंख्या के जीवन स्तर में सुधार के उपाय।
3. ग्रामीण युवा बच्चे तथा महिलाओं का विकास कार्यक्रम।
4. ग्रामीण क्षेत्र में मानव संसाधन का शक्तिवर्धन ताकि मनोवैज्ञानिक कौशल ज्ञान और योग्यता का विकास हो।
5. ग्रामीण क्षेत्र में संरचनात्मक सुविधाओं का निर्माण।
6. ग्रामीण जनता को पेयजल, शिक्षा, यातायात, बिजली तथा संचार जैसी बुनियादी आवश्यकताओं को मुहैया कराना
7. ग्रामीण संस्थान यथा पंचायत, सरकारी समिति, डाक सेवा, बैंक एवं ऋण व्यवस्था का सुदृढ़ीकरण।
8. ग्रामीण हस्त कौशल को बढ़ावा देने हेतु हस्त कलाकार समुदाय यथा लोहार, कुम्हार, बढ़ाई, बुनकर को संरक्षण।
9. ग्रामीण लघु एवं कुटीर उद्योग का पुनरुद्धार।

10. कृषि पशुपालन तथा अन्य कृषि संबंधित कार्यों को बढ़ावा।
11. गैर-मजरूआ तथा टांड जमीन को कृषि भूमि में स्थानांतरण हेतु सिंचाई व्यवस्था एवं नई तकनीक के इस्तेमाल हेतु ग्रामीण जन जागरण कार्यक्रम।
12. भूमि संरक्षण हेतु विशेष योजना।
13. ग्रामीण जनता के लिए मनोरंजन, खेलकूद जैसे कार्यक्रम।
14. ग्रामीण बाजार सुविधा का विकास।
15. ग्रामीण क्षेत्र में युवा नेतृत्व को बढ़ावा देने संबंधित योजना को लागू करना।
16. ग्रामीण और शहरी क्षेत्र की जन सेवा के अंतर को कम करना।
17. ग्रामीण जन सहभागिता को बढ़ावा देकर राज्य एवं देश के विकास से जोड़ना।
18. ग्रामीण आबादी के लिए रोजगार सृजन।
19. ग्रामीण गरीबी उन्मूलन।
20. ग्रामीण आबादी के विकास में आने वाली बाधाओं का समाधान करना इत्यादि।

नई सुबह

2014-15 से योजना आयोग का अस्तित्व बदलकर विकसित नीति आयोग हो गया है कार्यक्रम को नया नाम स्वरूप दिया जा रहा हैं नई सरकार की सत्ता में आने से ग्रामीण विकास कार्यक्रम में तेजी आई है और निम्नलिखित कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं इन कार्यक्रमों की विशेषता यह है कि इनमें जन-सहभागिता बेहतर हो रही है जिसका पूर्ववर्त्ती कार्यक्रमों में अभाव था।

'सबका साथ सबका विकास' नारे के साथ प्रारंभ हुए नए ग्रामीण विकास कार्यक्रम 2014-16 सेः-

1. प्रधानमंत्री जन-धन योजना
2. प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (जनवरी 2016)
3. प्रधानमंत्री मुद्रा योजना (असंगठित मजदूरों के लिए)
4. प्रधानमंत्री सुकन्या समृद्धि योजना
5. प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना
6. निशुल्क गैस कनेक्शन योजना
7. स्वच्छ भारत अभियान

8. प्रखंड कौशल विकास योजना (जुलाई 2015)
9. मृदा स्वास्थ्य कार्ड
10. ग्राम उदय से भारत उदय (14 अप्रैल 2016)
11. प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (2016)
12. पंडित दीनदयाल उपाध्याय श्रमेव जयते योजना (16 अक्टूबर 2014)
13. सांसद आदर्श ग्राम योजना (11 अक्टूबर 2014)
14. बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ
15. प्रधानमंत्री आवास योजना
16. कृषक सुरक्षा योजना
17. ग्रामीण कौशल योजना
18. पंडित दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना
19. अटल पेंशन योजना

भारत के विकास के संकल्प के साथ 2014 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में नई सरकार का गठन हुआ और जनता के प्रति जवाबदेह सरकार बनाने की प्रक्रिया चल पड़ी। प्रधानमंत्री ने गांव-गरीब और किसान फसल बीमा, किसानों को पेंशन, मजदूरों को 12 रूपये वार्षिक प्रीमियम पर बीमा और पेंशन, जन-धन योजना द्वारा करोड़ों की बैंकिंग सेवा से जोड़ना, उज्ज्वला अभियान जिसके लिए एक करोड़ से अधिक लोगों ने गैस सब्सिडी छोड़ी (मई 2016 तक), आर्थिक समावेशीकरण का नया दौर चला जिसके अंतर्गत जो वित्तीय संस्थाएं हैं, उसका लाभ गरीबों तक पहुंचाएं, उन संस्थानों से गरीबों को लाभ मिले। इसके लिए जन-धन योजना के तहत बैंकों में खाते खोले गये हैं। डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर स्कीम के तहत सीधा गरीबों तक लाभ पहुंचाने का आधार कानून-बना। ग्रामीण आर्थिक विकास की ओर दूसरा कदम बढ़ाते हुए सरकार ने किसानों के लिए 'कृषि ऋण' को बढ़ाकर 9 लाख करोड़ कर दिया। किसानों के लिए कृषक सुरक्षा योजना शुरू हुई।

उपरोक्त नये ग्रामीण विकास योजनाओं को देखने से यह आशा जगती है कि बहुत सी योजनाएं दीर्घकालीन परिणाम और लक्ष्य को सामने रखकर बनाई गई हैं, ताकि उसके सकारात्मक परिणाम प्राप्त हो सकें। सरकार की निर्णय प्रक्रिया में तेजी लाई गई है, निर्णय लेने की क्षमता बड़ी उपलब्धि मानी जा रही है, जो सस्टेनेबिलिटी के लिए जरूरी है। सभी गांव तक खाद्य सुरक्षा की बात भी चल रही है। जरूरत इस बात की है कि सरकार इन लक्ष्यों को पूरा करने में सतत् प्रयत्नशील रहे और इन्हें पूरा करें तो ग्रामीण विकास की 'नई सुबह' अच्छे दिन ले आएंगीं।

निष्कर्ष

परिवर्तन की प्रक्रिया ने ग्रामीण भारत को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से निरंतर नया स्वरूप प्रदान किया है। ऐतिहासिक कार्यक्रमों से लेकर हाल की सरकारी योजनाओं तक, सभी प्रयासों का लक्ष्य ग्राम समुदायों का सशक्तिकरण और जीवन स्तर में सुधार रहा है। तकनीकी प्रगति और वैश्वीकरण ने जहां अवसर उत्पन्न किए हैं, वहीं असमानता और पर्यावरणीय संकट जैसी चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। अतः ग्रामीण विकास के लिए बहु-हितधारक सहभागिता और सतत् प्रयास आवश्यक हैं। यह निष्कर्ष निकलता है कि स्थानीय संसाधनों और जनशक्ति का उपयोग कर ही स्थायी और समावेशी परिवर्तन संभव है।

संदर्भ

- शर्मा.विजय प्रकाश. (2018). भारत में ग्रामीण विकास के सपने और वास्तविकताएँ, कल्पाज प्रकाशन, दिल्ली।
- शर्मा.विजय प्रकाश. (2018). ग्रामीण सामाजिक संरचना और ग्रामीण विकास, कल्पाज प्रकाशन, दिल्ली।
- शर्मा.विजय प्रकाश. (2018). भारत में ग्रामीण विकास का एक परिचय, जेन नेक्स्ट प्रकाशन, नई दिल्ली।
- शर्मा.विजय प्रकाश एवं अन्य. (2015). वैश्वीकरण- आदिवासियों के लिए लुप्त रास्ते, कल्पाज प्रकाशन, दिल्ली।
- मामोरिया चतुर्भुज और सिंह कोमल. (2023). ग्रामीण विकास, एसबीपीडी प्रकाशन. नई दिल्ली।

15

जैव-चिकित्सा अपशिष्ट के कारण सिवान जिला के तटवर्ती गाँव एवं दाहा नदी (वाण गंगा) का अस्तित्व खतरे में

सना शमशाद **डॉ. रीता कुमारी**

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.167-181
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

चिकित्सा विज्ञान मानव जाति के लिए दिव्य है। इसके बिना, दुनिया भर की स्वास्थ्य सुविधाएँ पंगु हैं। यह हमारी देखभाल करता है, कई हानिकारक या घातक बीमारियों का इलाज करता है और हमारी जान बचाता है, लेकिन इससे उत्पन्न होने वाला भारी मात्रा में जैव-चिकित्सा अपशिष्ट, चाहे वह ठोस हो, तरल हो या गैसीय, पूरे विश्व पर भारी बोझ डाल रहा है। जैव-चिकित्सा अपशिष्ट को "अस्पताल अपशिष्ट", "स्वास्थ्य सेवा अपशिष्ट", "नैदानिक अपशिष्ट" और "विनियमित चिकित्सा अपशिष्ट" के रूप में भी जाना जाता है। किसी भी स्वास्थ्य सेवा केंद्र में, चाहे वह अस्पताल परिसर में हो या उसके बाहर, जैव-चिकित्सा अपशिष्ट उत्सर्जित होते हैं, जैसे नुकीली सुइयाँ, तरल रक्त, कांच, प्लास्टिक की बोतलें, ठोस प्लास्टिक और शारीरिक अपशिष्ट, मानव शरीर के अंग, पट्टियाँ और रुई, आई.वी. ट्यूबिंग, जैव प्रौद्योगिकी और सूक्ष्म जीव विज्ञान अपशिष्ट, अजन्मे भ्रूण, प्लेसेंटा, मृत शरीर और कई अन्य। जैव-चिकित्सा अपशिष्ट का एक बड़ा हिस्सा (80-85%) सामान्य अपशिष्ट के रूप में वर्गीकृत किया जाता है जिसमें कई खाद्य कण होते हैं। ये खाद्य कण, शेष 15-20% खतरनाक और संक्रामक जैव-चिकित्सा अपशिष्ट के संपर्क में आने पर संक्रामक और विषाक्त प्रकृति के हो जाते हैं। जैव-चिकित्सा अपशिष्ट कई बीमारियों का मुख्य कारण है और हानिकारक रोगाणुओं का कारण बनता है। जैव-चिकित्सा अपशिष्ट के अनुचित निपटान से

डायरिया, टिटनेस, एड्स, डेंगू, हेपेटाइटिस बी और डी, जापानी इंसेफेलाइटिस, टिक फीवर, टाइफाइड, बैक्टेरिमिया, संक्रामक रोग और कई अन्य बीमारियां होती हैं।

इस अध्ययन के निष्कर्ष (अध्ययन क्षेत्र-सीवान, बिहार) में, यहाँ जैव-चिकित्सा अपशिष्ट प्रबंधन संतोषजनक और वैज्ञानिक नहीं पाया गया है। यहाँ जैव-चिकित्सा अपशिष्ट प्रबंधन के बारे में ज्ञान, दृष्टिकोण और व्यवहार का प्रतिशत कम है, इस कारण से दैनिक आधार पर उत्पन्न होने वाले जैव-चिकित्सा अपशिष्ट की एक बड़ी मात्रा अनुपचारित रह जाती है, और यह अनुपचारित जैव-चिकित्सा अपशिष्ट सूक्ष्म जीवों के विकास का केंद्र बन जाता है और आसपास के जानवरों और मनुष्यों के साथ-साथ हमारे तात्कालिक पर्यावरण को भी प्रभावित करता है। यहाँ उत्सर्जित ठोस जैव-चिकित्सा अपशिष्ट का मेडी-केयर प्राइवेट लिमिटेड मुजफ्फरपुर द्वारा कुछ हद तक वैज्ञानिक उपचार किया जाता है लेकिन तरल जैव-चिकित्सा अपशिष्ट अधिकांशतः अनुपचारित रह जाता है और यह अनुपचारित तरल जैव-चिकित्सा अपशिष्ट अंततः दाहा नदी में छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार, दाहा नदी का पूरा पानी प्रदूषित हो जाता है और इस प्रदूषित पानी में विभिन्न रोग पैदा करने वाले खतरनाक सूक्ष्म जीव और अप्रयुक्त एंटीबायोटिक्स शामिल हैं, जो भूमिगत जल के रसायन विज्ञान को बदल देते हैं। कई गाँव और आस-पास के इलाके कृषि, मत्स्य पालन, पीने, आजीविका और अन्य दैनिक गतिविधियों के कारण से स्थानीय नदी (दाहा नदी) पर निर्भर हैं। और जब शहरी क्षेत्रों से छोड़ा गया प्रदूषित पानी स्थानीय नदी में प्रवेश करता है तो अंततः खाद्य श्रृंखला और खाद्य जाल के माध्यम से गांवों में पहुँच जाता है, और इस प्रकार शहरी क्षेत्र और ग्रामीण क्षेत्र (गांव) दोनों खतरे में हैं।

मुख्य शब्द: चिकित्सा विज्ञान, जैव-चिकित्सा अपशिष्ट, अस्पताल अपशिष्ट, स्वास्थ्य सेवा अपशिष्ट

प्रस्तावना

जैव-चिकित्सा अपशिष्ट का जल प्रणाली पर प्रभाव

एडविन चैटविक ने 1800 के दशक के मध्य में ब्रिटिश अस्पतालों और जेलों की विकट परिस्थितियों पर शोध किया, जिसके परिणामस्वरूप 1848 में लोक स्वास्थ्य अधिनियम पारित हुआ, जो जन स्वास्थ्य को बेहतर बनाने की दिशा में पहला कदम था। 19वीं शताब्दी की शुरुआत में स्वच्छता और कचरा निपटान व्यावहारिक रूप से अनसुना था, और 1980 के दशक तक, जब पूर्वी तट के कई समुद्र तटों पर चिकित्सा अपशिष्ट जमा होने लगे, तब लोगों ने इनसे उत्पन्न होने वाले संभावित स्वास्थ्य जोखिमों पर ध्यान देना शुरू किया (ब्रुक ब्राउन एवं अन्य, 2021)।

विभिन्न प्रकार के कार्बनिक और अकार्बनिक जैव-चिकित्सा अपशिष्ट पूरे पर्यावरण के साथ-साथ जल पारिस्थितिकी तंत्र को भी प्रदूषित करते हैं, जिसके कारण कई सूक्ष्म जीव इन प्रदूषकों पर क्रिया करने लगते हैं जिससे आसपास का तापमान बढ़ जाता है। नदी और किसी भी जल पारिस्थितिकी

तंत्र का तापमान जल निकायों के अंदर मौजूद जीवों के चयापचय के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण मानदंड है, और यह जल के कई मापदंडों को भी प्रभावित करता है। जल के भौतिक-रासायनिक पैरामीटर नदियों और पर्यावरण के तापमान से प्रभावित होते हैं (रीता कुमारी एवं अन्य, 2008)। जब भी इन भौतिक-रासायनिक पैरामीटरों में गड़बड़ी होती है, तो पर्यावरण में इससे संबंधित संतुलन भी बिगड़ जाता है।

मानव और पर्यावरणीय स्वास्थ्य की सुरक्षा और अपशिष्ट में कमी लाने के लिए, 1965 का ठोस अपशिष्ट निपटान अधिनियम बनाया गया था। पर्यावरण संरक्षण एजेंसी (ईपीए) इसे "अपशिष्ट निपटान तकनीक में सुधार का पहला संघीय प्रयास" बताती है। 1972 में मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन ने मानव स्वास्थ्य पर पर्यावरणीय खतरों पर विश्वव्यापी ध्यान केंद्रित किया (डब्ल्यूएचओ, 1961) और उच्च न्यायालय (एम.सी. मेहता, 1992) द्वारा उचित आदेश पारित करके इसे सख्ती से रोका गया।

जैव-चिकित्सा अपशिष्ट से होने वाला प्रदूषण

जैव-चिकित्सा अपशिष्ट पूरे पर्यावरण को प्रदूषित करता है, चाहे वह मिट्टी हो, पानी हो या हवा। जैव-चिकित्सा अपशिष्ट में मौजूद भारी धातुएँ भूमिगत जल और मिट्टी को दूषित करती हैं। भारी धातुओं से युक्त जैव-चिकित्सा अपशिष्ट को जब फेंका जाता है तो वह रिसने लगती है और पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न करती है (अल रईसी एवं अन्य 2014)। जैव-चिकित्सा अपशिष्ट में मौजूद प्लास्टिक अपशिष्ट पॉलीविनाइल क्लोराइड (PVC) के उपचार के दौरान भस्मक से फ्यूरान और डाइऑक्सिन जैसी विषैली गैसें निकलती हैं (थॉर्टन एवं अन्य, 1996)। डाइऑक्सिन, फ्यूरान और कई अन्य विषैली गैसें वायु की गुणवत्ता को काफी हद तक प्रदूषित करती हैं। सुब्रमण्यन एवं अन्य 2000 ने नई दिल्ली, मुंबई और कोलकाता से एकत्रित मानव स्तन के दूध में डाइऑक्सिन के उच्च स्तर का अध्ययन किया। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद और राष्ट्रीय अंतःविषय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान ने संयुक्त रूप से तिरुवनंतपुरम में डाइऑक्सिन की उपस्थिति के अध्ययन के लिए एक परियोजना शुरू की है (टाइम्स ऑफ इंडिया, अंतिम अभिगमन तिथि: 31 अक्टूबर 2017)। जब छोटे पैमाने के भस्मकों का संचालन अनुचित या अपर्याप्त तरीके से किया जाता है, तो इससे अपूर्ण अपशिष्ट दहन, अपर्याप्त राख निपटान और डाइऑक्सिन उत्सर्जन हो सकता है जो स्टॉकहोम कन्वेंशन (बैटरमैन, 2004) में उल्लिखित उत्सर्जन सीमाओं से 40, 000 गुना अधिक होता है। डेनमार्क में भस्मक निर्माण पर प्रतिबंध लगा दिया गया है और फिलीपींस में भी। कुछ स्वास्थ्य देखभाल उप-उत्पाद पर्यावरण के लिए सबसे अधिक संवेदनशील हैं और जिन पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है, वे हैं रेडियोधर्मी अपशिष्ट, पारा अपशिष्ट और पीवीसी प्लास्टिक अपशिष्ट (रेमी, 2001)। इसलिए, हमारे पूरे पर्यावरण को इस विशाल और संक्रामक जैव-चिकित्सा अपशिष्ट से बचाने के लिए जैव-चिकित्सा अपशिष्ट को कम करने, पुन: उपयोग और पुनर्चक्रण पर ध्यान केंद्रित करना महत्वपूर्ण है। प्रियदर्शिनी एवं अन्य (2016) ने तर्क दिया कि

अस्पताल का अपशिष्ट मानव स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर समस्या है और इसमें मौजूद रासायनिक रूप से खतरनाक, संक्रामक और अक्सर रेडियोधर्मी पदार्थों के अनुचित और अवैज्ञानिक निपटान और उपचार रणनीतियों के कारण समुदाय के लिए खतरा है। स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं का आकलन करने वाले कई अध्ययनों ने साइटोटॉक्सिक दवाओं के संपर्क से प्रदूषित अस्पतालों की हवा पर ध्यान केंद्रित किया है। साइटोटॉक्सिक अपशिष्ट प्रकृति में जोखिम भरे होते हैं, इसलिए इन्हें ऐसे कंटेनरों में एकत्र किया जाता है जिन पर स्पष्ट रूप से साइटोटॉक्सिक अपशिष्ट लेबल लगे हों और जो रिसाव-रोधी हों (आचार्य और सिंह मीता, 2000)। परिणामस्वरूप, अस्पताल अपशिष्ट उत्पादन एक बड़ी समस्या बन गया है क्योंकि यह रोगियों, अस्पताल कर्मचारियों के स्वास्थ्य के लिए एक जोखिम कारक के रूप में अपने विविध प्रभावों के कारण चिकित्सा पेशे से परे आम जनता तक फैल रहा है (पी. पशुपति एवं अन्य, 2011)।

अनुचित अपशिष्ट प्रबंधन (बीएमडब्ल्यू) के कारण विभिन्न प्रकार के पर्यावरण प्रदूषण और संक्रामक रोग उत्पन्न होते हैं (राय एवं अन्य, 2020)। अपशिष्ट मानव स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर समस्या है (नेमा एवं अन्य, 2011)। उत्पन्न अपशिष्ट कई प्रकार के संक्रामक रोगों का कारण बनता है क्योंकि उत्पन्न अपशिष्ट में कई हानिकारक सूक्ष्मजीव और रोगाणु होते हैं, और यह पूरे पर्यावरण को भी प्रदूषित करता है। एंटरोकोकी, गैर-हेमोलिटिक स्ट्रेप्टोकोकी, एनारोबिक कोकी, क्लॉस्ट्रिडियम टेटानी, क्लेबसिएला, एचआईवी और एचबीवी संक्रमण के लिए जिम्मेदार सूक्ष्मजीवों के मेजबान हैं (ब्लेनखार्म, 1995)। ये सूक्ष्म जीव शरीर में विभिन्न मार्गों से प्रवेश करते हैं: साँस द्वारा; अंतर्ग्रहण द्वारा; किसी छिद्र या कट के माध्यम से; श्लेष्मा झिल्ली के माध्यम से। एचआईवी, हेपेटाइटिस सी या अन्य रक्त जनित रोगों के संक्रामक रोगाणु रक्त, या किसी अन्य रक्त-द्रव या एरोसोल या लार के संपर्क में आने से फैल सकते हैं (नेजाद एवं अन्य, 2011)। संक्रामक अपशिष्ट या तेज धार वाली वस्तुएं, फार्मास्यूटिकल्स और रासायनिक अपशिष्ट, जीनोटॉक्सिक अपशिष्ट और रेडियोधर्मी अपशिष्ट से होने वाले खतरे कई प्रकार की बीमारियां पैदा करते हैं। यदि इसका उचित प्रबंधन नहीं किया जाता है, तो संक्रामक अपशिष्ट वयस्कों और बच्चों में संक्रमण, बांझपन, जननांग विकृति, कैंसर, उत्परिवर्तन, अस्थमा, त्वचाशोथ और तंत्रिका संबंधी विकारों का कारण बन सकता "ब्लू बुक" के अनुसार, तीखे कचरे को अत्यंत खतरनाक अपशिष्ट श्रेणी में माना जाता है क्योंकि ये दोहरी समस्याएँ पैदा करते हैं; एक तो त्वचा में कट, छेद या घर्षण, और दूसरा, अगर ये तीखे सामान हानिकारक रोगाणुओं से दूषित हों तो इन कट, खरोंच या छिद्रों में संक्रमण। 'ब्लू बुक' में यह भी उल्लेख है कि अमेरिका में एक अस्पताल के हाउसकीपर को सुई लगने के बाद स्टैफिलोकोकल बैक्टेरिमिया और एंडोकार्डिटिस हो गया।

ग्रामीण क्षेत्रों से जैव-चिकित्सा अपशिष्ट

शहरी क्षेत्र की परवाह किए बिना, ग्रामीण क्षेत्रों में भी पर्याप्त मात्रा में जैव-चिकित्सा अपशिष्ट पाया जाता है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, एक्सपायर हो चुकी दवाएँ, पशु चिकित्सालयों और गर्भाधान केंद्रों

से उत्पन्न अपशिष्ट, पशुओं के जन्म के दौरान प्लेसेंटा, अजन्मे भ्रूण, मृत बीमार पशुओं के शव, जानबूझकर मारे गए कृंतक और घरेलू जैव-चिकित्सा अपशिष्ट (एक्सपायर हो चुकी और अप्रयुक्त दवाएँ, पट्टियाँ, सैनिटरी नैपकिन, कंडोम, डायपर) ये सभी ग्रामीण क्षेत्रों में जैव-चिकित्सा अपशिष्ट के प्रमुख स्रोत हैं। शहरी क्षेत्र में जैव-चिकित्सा अपशिष्ट को अवैध रूप से जलाने से कई खतरनाक गैसें निकलती हैं, जो आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों में भी जैव-चिकित्सा अपशिष्ट जमा कर देती हैं।

सामग्री एवं विधियाँ

अध्ययन क्षेत्र

सीवान एक अत्यधिक संभावित रोगी क्षेत्र है, क्योंकि यह स्वास्थ्य सुविधाओं का केंद्र है। सीवान शहर में लगभग 1000 स्वास्थ्य सुविधाएँ (जैसे अस्पताल, नर्सिंग होम, क्लीनिक, पशु चिकित्सा, रोग प्रयोगशालाएँ, ब्लड बैंक (सरकारी और निजी)) और सीवान जिले में लगभग 1500 स्वास्थ्य सुविधाएँ (सरकारी और निजी) चल रही हैं।

सीवान की जनसांख्यिकी

2011 में हुई नवीनतम जनगणना के अनुसार, सीवान जिले की कुल जनसंख्या 3, 318, 176 है, जिसमें 1, 646, 055 महिलाएँ और 1, 672, 121 पुरुष हैं। 2001 में 51.65 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 71.59 प्रतिशत हो गई है, इस जिले की औसत साक्षरता दर समय के साथ बढ़ी है। इस जिले में पुरुषों की साक्षरता दर महिलाओं की तुलना में अधिक है। यहाँ बोली जाने वाली भाषा भोजपुरी है। इसके अलावा, सिवान के निवासी हिंदी, उर्दू और मैथिली भाषा में पारंगत हैं। ज़िले में कुल 293 पंचायतें, 1530 गाँव और 19 प्रखंड हैं। सिवान शहर दाहा नदी के पूर्वी तट पर स्थित है।

सिवान की नदियाँ

सिवान ज़िले के भीतरी इलाकों में कई महत्वपूर्ण नदियाँ बहती हैं, जिनमें दाहा, झरही, धमती, गंडकी, निकारी, सियाही और सोना शामिल हैं। घाघरा नदी, जो इस क्षेत्र की मुख्य बहती धारा भी है, सिवान की दक्षिणी सीमा को परिभाषित करती है। इस क्षेत्र में हिमालय से निकलने वाली एकमात्र बारहमासी नदी घाघरा है; अन्य सभी नदियों के स्रोत अलग-अलग हैं। सिवान की नदियों में प्रतिवर्ष बाढ़ आती है, जो एक खास बात है।

धमती और गंडकी नदियाँ गंडक नदी की सहायक नदियाँ हैं, जबकि दाहा और जरही नदियाँ घाघरा नदी की सहायक नदियाँ हैं। जैसे ही सोना नदी दाहा नदी में मिलती है, निकारी और सियाही नदियाँ सीधे झरही में मिल जाती हैं। बरसात के मौसम में, ये सभी नदियाँ और नाले काफ़ी महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि ये ज़िले से अतिरिक्त पानी निकालने में मदद करती हैं।

सीवान के गाँव

सीवान ज़िले में 1530 गाँव हैं, जिनमें से कुछ सीधे दाहा नदी से जुड़े हैं, जैसे हुसैनगंज, फ़रीदपुर, भीखपुर और कई अन्य। यह नदी ज़िले के छह प्रखंडों से होकर गुज़रती है: बड़हरिया, सदर, हुसैनगंज, हसनपुरा, सिसवन और अंदर।

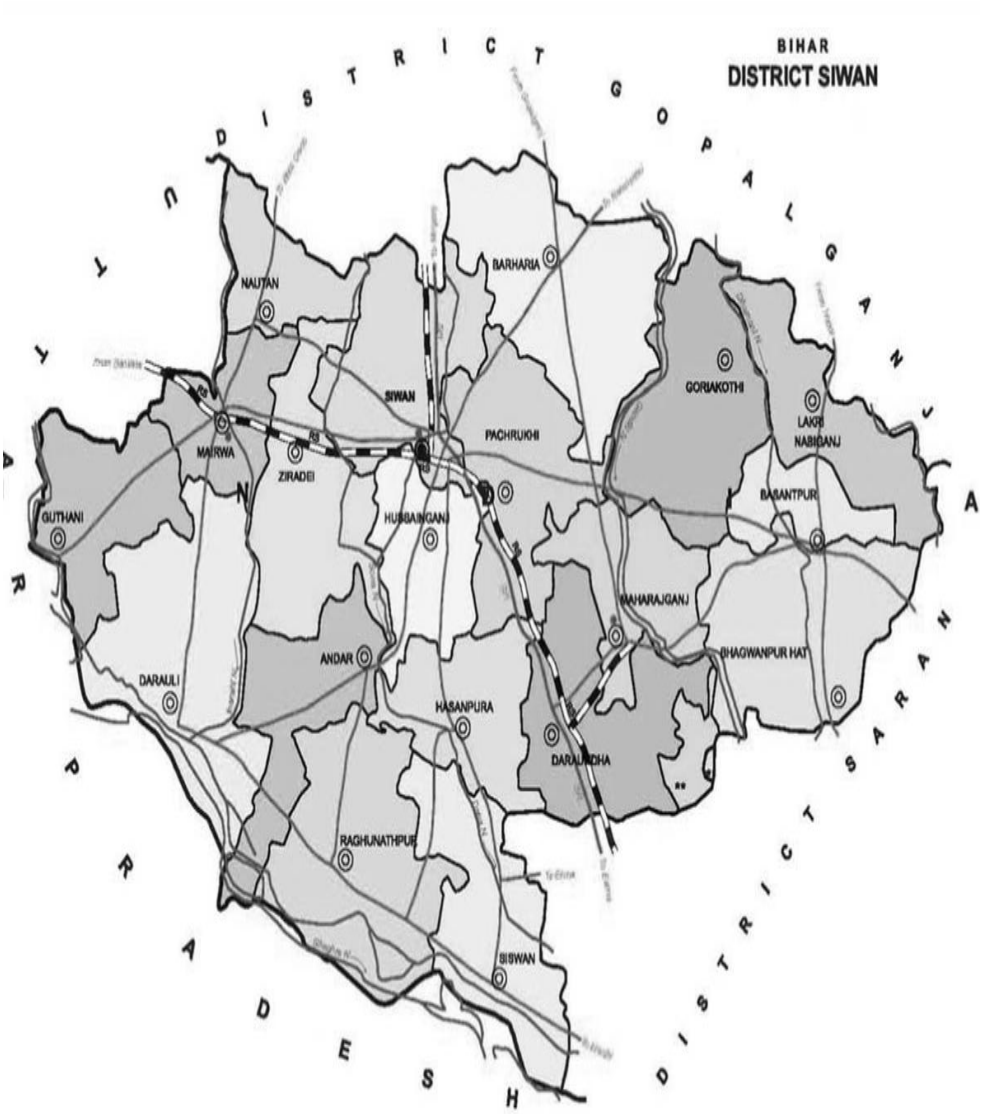

चित्र 15.1: सिवान, बिहार, भारत के आसपास के क्षेत्र का मानचित्र

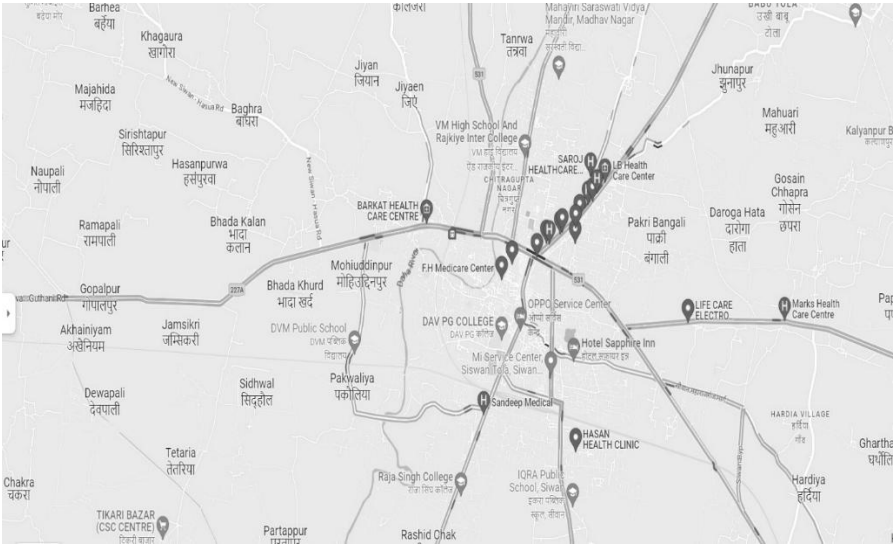

चित्र 15.2: बिहार के सिवान में अस्पताल केंद्र को दर्शाता हुआ

चित्र 15.3: हॉस्पिटल रोड, सिवान, बिहार में अस्पतालों का केंद्र दर्शाता है, गूगल मानचित्र

नमूनाकरण विधियाँ

बीएमडब्ल्यू रिपोर्ट के बारे में

अध्ययन अवधि: जनवरी 2019 से दिसंबर 2021 तक

अध्ययन क्षेत्र: शहर में विभिन्न स्वास्थ्य देखभाल सुविधाएँ (एचसीएफ), सरकारी और निजी दोनों

आँकड़ा संग्रह: प्राथमिक और द्वितीयक आँकड़े बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (बीएसपीसीबी) पटना और जिला स्वास्थ्य समिति (डीएचएस) सीवान (जनवरी 2019-दिसंबर 2021) से एकत्र किए गए।

मेडिकेयर एनवायरनमेंटल मैनेजमेंट प्राइवेट लिमिटेड, मुजफ्फरपुर, बिहार, भारत द्वारा सदर अस्पताल और सीवान (बिहार) के कई निजी अस्पतालों के "जैव-चिकित्सा अपशिष्ट की दैनिक संग्रहण रिपोर्ट" का डेटा संग्रह।

अपशिष्ट जल नमूनाकरण/तरल अपशिष्ट जल (BMW) के बारे में

अध्ययन की अवधि जुलाई-2022 से सितंबर-2022 तक 3 महीने थी।

नदी के वातावरण में विभिन्न भौतिक-रासायनिक मापदंडों और रोग पैदा करने वाले सूक्ष्म जीवों का पता लगाने के लिए दाहा नदी, सीवान के शिव-घाट और पुलवा घाट से अपशिष्ट जल के नमूने एकत्र किए गए। अस्पताल के वातावरण में विभिन्न रोग पैदा करने वाले सूक्ष्म जीवों का पता लगाने के लिए सदर अस्पताल, सीवान के नाले से अपशिष्ट जल के नमूने एकत्र किए गए और उनका संवर्धन (बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, पटना) किया गया। तरल अपशिष्ट जल के उचित और वैज्ञानिक उपचार के लिए प्रयुक्त प्रक्रियाओं (जैसे WWTP के लिए ETP) के आकलन हेतु प्रश्न-आधारित सर्वेक्षण किया गया।

दाहा नदी के जल संवर्धन के बारे में

यह अध्ययन डीएवी कॉलेज लैब, सीवान, बिहार, भारत में, अपशिष्ट जल (BMW) में सूक्ष्मजीवविज्ञानी निष्कर्षों की खोज के लिए किया गया था। सीवान, बिहार, भारत। हमने सीवान की दाहा नदी के जल के नमूने को पोषक तत्व अगर माध्यम (NAM) और मैककॉन्की अगर माध्यम पर संवर्धित किया। सीवान की दाहा नदी के शिव घाट और पुलवा घाट से सात जल के नमूने एकत्र किए गए। सभी नमूने 20 मिलीलीटर के निष्फल कंटेनरों में एकत्र किए गए। सभी आवश्यक सावधानियों के साथ नमूने एकत्र किए गए।सूक्ष्म जीवों की वृद्धि के संवर्धन के लिए पोषक तत्व अगर माध्यम (NAM) और मैककॉन्की माध्यम का उपयोग किया गया।

हमने ऊष्मा निष्फलीकरण विधि अपनाई और नमूनों को लूप की सहायता से चिपकाया, और फिर उन्हें 37.5°C पर 24 घंटे के लिए इनक्यूबेट किया। आकृति विज्ञान के आधार पर वृद्धि की जाँच

की गई। एस्चेरिचिया कोलाई और स्यूडोमोनास एरुगिनोसा के पृथक्कों की पुष्टि जैव रासायनिक लक्षण वर्णन और ग्राम अभिरंजन द्वारा की गई।

सूक्ष्मजीवविज्ञानी खोज के बारे में

मई 2022 से मई 2023 तक एक वर्ष की अवधि में कुल 100 शारीरिक द्रव के नमूने एकत्र किए गए। शहर में बीएमडब्ल्यू के खुले डंपिंग स्थल के पास रहने वाले विभिन्न रोगियों से शारीरिक द्रव के नमूने एकत्र किए गए और विभिन्न प्रकार के रोग पैदा करने वाले सूक्ष्मजीवों का पता लगाने के लिए उनका संवर्धन (पैथ लैब) किया गया।

सदर अस्पताल सीवान के नाले से अपशिष्ट जल के नमूने एकत्र किए गए और अस्पताल के वातावरण में रोग पैदा करने वाले सूक्ष्मजीवों का पता लगाने के लिए उनका संवर्धन (बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड पटना) किया गया। सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के संवर्धन के लिए रक्त अगर, चॉकलेट अगर, मैककॉन्की माध्यम और क्लेड मीडिया का उपयोग किया गया।

रूपात्मक जैव रासायनिक अभिलक्षणन पर जीवाणुओं के पृथक्करण के लिए

वर्तमान अध्ययन सीवान, बिहार, भारत के बीएमडब्ल्यू में सूक्ष्मजीवविज्ञानी निष्कर्षों की खोज के लिए डीएवी कॉलेज लैब, सीवान, बिहार, भारत में किया गया था।

सीवान शहर क्षेत्र के विभिन्न अस्पतालों, जिनमें सरकारी और निजी दोनों शामिल हैं, से दस नमूने एकत्र किए गए। सभी नमूने 20 मिलीलीटर के निष्फल कंटेनरों में एकत्र किए गए थे। नमूने तरल अपशिष्ट थे, और आवश्यक सावधानियों के साथ वैज्ञानिक उपचार, यानी ईटीपी, से पहले एकत्र किए गए थे। सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के संवर्धन के लिए ब्लड एगर, चॉकलेट एगर, मैककॉन्की माध्यम और क्लेड एगर माध्यम का उपयोग किया गया था।

हमने ऊष्मा निष्फलीकरण विधि का प्रयोग किया और नमूनों को एक-एक करके लूप की सहायता से चिपकाया। हमने प्रत्येक संवर्धन प्लेट को पाँच भागों में चिह्नित किया और संवर्धन प्लेट के एक कम्पार्टमेंट में एक नमूना चिपकाया। और फिर अगले नमूने के लिए लूप को गर्म किया और फिर प्रत्येक कम्पार्टमेंट पर दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें नमूने को इस प्रकार गर्म किया कि सभी नमूने एक-दूसरे में न मिल सकें और फिर इसे 37.5 डिग्री सेल्सियस पर 24 घंटे के लिए इनक्यूबेट किया। वृद्धि की जाँच आकृति विज्ञान के आधार पर की गई।

क्लेबसिएला न्यूमोनिया, एस्चेरिचिया कोलाई और स्यूडोमोनास एरुगिनोसा आइसोलेट्स की पुष्टि जैव रासायनिक लक्षण वर्णन और ग्राम अभिरंजन द्वारा की गई।

परिणाम और चर्चा

सीवान (बिहार, भारत) आस-पास के गाँवों की तुलना में बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं के कारण एक अत्यधिक संभावित रोगी क्षेत्र है। सीवान जिले में 1530 गाँव हैं और अधिकांश ग्रामीण अपने इलाज के लिए सीवान के स्वास्थ्य केंद्रों पर निर्भर हैं। सीवान शहर में लगभग 1000 स्वास्थ्य केंद्र (सरकारी और निजी) और सीवान जिले में लगभग 1500 स्वास्थ्य केंद्र (सरकारी और निजी) चल रहे हैं और आँकड़ों (सीवान, बिहार की जिला स्वास्थ्य समिति) के अनुसार प्रतिदिन भारी मात्रा में जैव-चिकित्सा अपशिष्ट निकलता है। जैव-चिकित्सा अपशिष्ट की यह भारी मात्रा एक गंभीर समस्या है। मेरे अध्ययन के निष्कर्ष में, जैव-चिकित्सा अपशिष्ट के उचित और वैज्ञानिक उपचार का अभाव पाया गया है। यहाँ स्वास्थ्य कर्मियों द्वारा केवल कुछ ही विधियों का उपयोग किया जाता है, जैसे कि रंग-कोडिंग डिब्बे, ऑटोक्लेविंग, रासायनिक कीटाणुनाशक, ईटीपी और सुई कटर। इसके अलावा, यहाँ जैव-चिकित्सा अपशिष्ट प्रबंधन नियमों का कड़ाई से पालन नहीं किया जाता है। किसी भी समस्या से निपटने के लिए, हमारे पास उस समस्या के बारे में पर्याप्त ज्ञान, दृष्टिकोण और अभ्यास होना चाहिए।

मेरे वर्तमान अध्ययन में पाया गया है कि 47% स्वास्थ्य देखभाल कर्मियों के पास जैव-चिकित्सा अपशिष्ट के बारे में पर्याप्त ज्ञान, दृष्टिकोण और अभ्यास (केएपी) है और केएपी के इस कम प्रतिशत के कारण, जैव-चिकित्सा अपशिष्ट आमतौर पर घरेलू कचरे में मिला दिये जाते हैं जबकि जैव-चिकित्सा अपशिष्ट वैन (मेडिकेयर पर्यावरण प्रबंधन प्राइवेट लिमिटेड, मुजफ्फरपुर, बिहार, भारत द्वारा मेडिकेयर वैन) पूरे शहर में चलती रहती है। ये अपशिष्ट पूरे शहर में इधर-उधर बिखरे रहते हैं और प्रदूषण, संक्रामक रोगों और एंटीबायोटिक-प्रतिरोधी बैक्टीरिया का एक संभावित स्रोत हैं। मेरे अध्ययन में पाया गया कि शहर में केवल 10% एचसीएफ अपशिष्ट जल उपचार प्रक्रिया (डब्ल्यूडब्ल्यूटीपी) के लिए एफ्लुएंट ट्रीटमेंट प्लांट (ईटीपी) से सुसज्जित थे, जबकि अस्पताल की लगभग 90% जल निकासी प्रणाली बिना किसी वैज्ञानिक उपचार के सीधे घरेलू जल निकासी प्रणाली में मिल जाती है और अंततः सिवान (बिहार) की दाहा नदी में छोड़ दी जाती है। ज्ञान, दृष्टिकोण, व्यवहार, जागरूकता, सामाजिक दुविधा और वित्तीय समस्याओं का अभाव अनुचित प्रबंधन के पीछे प्रमुख कारण हैं।

यह अध्ययन यह दर्शाने के लिए किया गया है कि दाहा नदी विभिन्न स्वास्थ्य देखभाल सुविधाओं (HCF) द्वारा छोड़े गए अपशिष्ट/अपशिष्ट जल के कारण प्रदूषित होता जा रहा है (चित्र 4)। मेरे अध्ययन में पाया गया कि केवल 10% HCF ही अपशिष्ट जल उपचार (WWT) के लिए ETP का उपयोग कर रहे हैं। और लगभग 90% बिना किसी वैज्ञानिक उपचार के अपने अपशिष्ट सीधे घरेलू कचरे में छोड़ रहे हैं। शहर में अधिकांश अस्पताल जागरूकता और ज्ञान की कमी या वित्तीय समस्याओं के कारण बीएमडब्ल्यू प्रबंधन नियमों का उल्लंघन कर रहे हैं। यह अध्ययन सस्मिता बिस्वाल, 2013 के अध्ययन से समानता दर्शाता है, उनके अध्ययन के अनुसार, वैश्विक स्तर पर

स्वास्थ्य देखभाल सुविधाओं (एचसीएफ) से निकलने वाला 90% अपशिष्ट जल, जिसका वैज्ञानिक तरीके से उपचार नहीं किया जाता है, जल प्रदूषण का प्रमुख कारण है, और इस प्रदूषित पानी का उपयोग विशेष रूप से कम आय वाले देशों में पानी की कमी के कारण सिंचाई के लिए किया जाता है।

चित्र 15.4: दाहा नदी के शिव घाट, सिवान, बिहार की भयावह स्थिति, शहर के सभी एचसीएफ से अपशिष्ट जल घरेलू जल निकासी प्रणाली में मिलाया जाता है और इस बिंदु पर दाहा नदी में छोड़ा जाता है, यहां हम जैव चिकित्सा अपशिष्ट और घरेलू अपशिष्ट मिश्रण का एक पहाड़ भी देख सकते हैं।

अनुचित जैव चिकित्सा अपशिष्ट निपटान और प्रबंधन के कारण जैव चिकित्सा अपशिष्ट से विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं के विकास और उनसे संबंधित रोगों को दर्शाने के लिए सूक्ष्मजीवविज्ञानी जाँच की गई है। मेरे वर्तमान अध्ययन में जैव चिकित्सा अपशिष्ट के नमूने में एस्चेरिचिया कोली, क्लेबसिएला न्यूमोनिया और स्यूडोमोनास एरुगिनोसा पाए गए, शरीर के नमूनों में एस्चेरिचिया कोली, क्लेबसिएला न्यूमोनिया, स्टैफिलोकोकस ऑरियस, स्यूडोमोनास एरुगिनोसा, साल्मोनेला टाइफी और एंटरोकोकस फेकेलिस पाए गए, जबकि दाहा नदी के नमूनों में एस्चेरिचिया कोली और स्यूडोमोनास एरुगिनोसा पाए गए, हालांकि पार्क एट अल., 2009 के अनुसार नैदानिक ठोस अपशिष्ट (सीएसडब्ल्यू) में सबसे प्रचलित सूक्ष्मजीव स्टैफिलोकोकस ऑरियस, एस्चेरिचिया कोली, स्यूडोमोनास एरुगिनोसा और बैसिलस सेरेस पाए गए। इन सभी पृथक जीवाणुओं में से, एस्चेरिचिया कोलाई और स्यूडोमोनास एरुगिनोसा मेरे अध्ययन के तीनों प्रकार के नमूनों, अर्थात् जैव-चिकित्सा अपशिष्ट नमूनों, दाहा नदी के नमूनों और शरीर-द्रव नमूनों में समान थे। एस्चेरिचिया कोलाई, स्यूडोमोनास एरुगिनोसा और स्टैफिलोकोकस ऑरियस बहु-

औषधि प्रतिरोधी पाए गए, जिनमें रोग नियंत्रण एवं रोकथाम केंद्र (सीडीसी-2019) के अनुसार स्यूडोमोनास एरुगिनोसा और स्टैफिलोकोकस ऑरियस एंटीबायोटिक प्रतिरोधी होने के गंभीर खतरे में हैं।

एम्पीसिलीन (एएमपी), सिप्रोफ्लोक्सासिन (सीआईपी), एमिकासिन (एमी), टेट्रासाइक्लिन (टेट), सेफोटैक्सिम (सीटीएक्स), ओफ्लॉक्सासिन (ओएफएल), जेंटामाइसिन (जेन) ये सभी एंटीबायोटिक्स चिकित्सा उपचार में सबसे अधिक उपयोग किए जाते हैं, जैसे सर्जरी, ऑर्थोपेडिक्स, मेडिसिन, हृदय, स्त्री रोग और सामान्य वार्ड, इसलिए इन वार्डों के कचरे में संबंधित एंटीबायोटिक प्रतिरोधी बैक्टीरिया पाए जाने की सबसे अधिक संभावना है। पर्यावरण में एंटीबायोटिक के अनावश्यक रूप से संपर्क को रोकना बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत और अन्य स्थानों में हाल ही में एंटीबायोटिक प्रतिरोधी बैक्टीरिया का उभरना आने वाले भविष्य के लिए चिंताजनक मुद्दा है। कुछ सबूत खराब बीएमडब्ल्यू प्रबंधन अभ्यास और दवा प्रतिरोधी बैक्टीरिया के उभरने के बीच संबंध दिखाते हैं (क्रिस्टीन कटुसिमे, 2018)। और अंततः इस तरीके से यह खाद्य श्रृंखला में और फिर खाद्य जाल में प्रवेश करता है। मेरे अध्ययन में अस्पताल के अपशिष्ट जल और दाहा नदी के नमूने दोनों में स्यूडोमोनास एरुगिनोसा एक गंभीर खतरा पाया गया। यह बहु-औषधि प्रतिरोधी बैक्टीरिया है। इसने एचसीएफ और दाहा नदी के अपशिष्ट जल के नमूने के बीच सूक्ष्मजीवविज्ञानी निष्कर्षों को भी जोड़ा है।

चित्र 15.5: बीएमडब्ल्यू अस्पताल परिसर में भोजन के कणों की तलाश में कुत्ते

बीएमडब्ल्यू का एक बड़ा हिस्सा (80-85%) कई खाद्य कणों वाले सामान्य अपशिष्ट के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। ये खाद्य कण, शेष 15-20% खतरनाक और संक्रामक जैव चिकित्सा अपशिष्ट के संपर्क में आने पर संक्रामक और विषाक्त प्रकृति में बदल जाते हैं। और इन बीएमडब्ल्यू के अनुचित, अवैज्ञानिक और खुले डंपिंग के कारण, इन बीएमडब्ल्यू युक्त स्थल में कई अलग-अलग प्रकार के जानवरों, जैसे चूहे, कृंतक, कुत्ते, बिल्ली, मवेशी, कई प्रकार के पक्षी, कीड़े (जैसे

मक्खियाँ और मच्छर), जलीय जीव और मनुष्य भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इन बीएमडब्ल्यू के संपर्क में आते हैं और कई संक्रामक रोगों के वाहक बन जाते हैं क्योंकि इन अपशिष्टों में संक्रामक खाद्य कणों के साथ संक्रामक पदार्थ होते हैं और फिर वे खाद्य श्रृंखला और खाद्य जाल में प्रवेश कर जाते हैं (चित्र 15.5)।

निष्कर्ष

यहाँ से निकलने वाले ठोस जैव-चिकित्सा अपशिष्ट का मेडी-केयर प्राइवेट लिमिटेड, मुजफ्फरपुर द्वारा कुछ हद तक वैज्ञानिक उपचार किया जाता है, लेकिन तरल जैव-चिकित्सा अपशिष्ट का उपचार अधिकांशतः नहीं किया जाता और यह अनुपचारित तरल बीएमडब्ल्यू अंततः दाहा नदी में छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार, दाहा नदी का पूरा पानी प्रदूषित हो जाता है और इस प्रदूषित पानी में विभिन्न रोग पैदा करने वाले खतरनाक सूक्ष्म जीव और अप्रयुक्त एंटीबायोटिक्स होते हैं, जो भूमिगत जल के रसायन विज्ञान को बदल देते हैं। कई गाँव और आस-पास के इलाके कृषि, मत्स्य पालन, पेयजल, आजीविका और अन्य दैनिक गतिविधियों के कारण से स्थानीय नदी (दाहा नदी) पर निर्भर हैं। और जब शहरी क्षेत्रों से छोड़ा गया प्रदूषित पानी स्थानीय नदी में प्रवेश करता है तो अंततः खाद्य श्रृंखला और खाद्य जाल के माध्यम से गाँवों में पहुँच जाता है, और इस प्रकार शहरी क्षेत्र और ग्रामीण क्षेत्र (गाँव) दोनों खतरे में पड़ जाते हैं। दुर्भाग्य से, अनुपचारित जैव-चिकित्सा तरल अपशिष्ट और अन्य स्रोतों से प्रदूषित नदी पर निर्भर समुदायों (विशेषकर ग्रामीणों) के स्वास्थ्य और आजीविका को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है, जिससे स्वास्थ्य समस्याएं, कृषि उपज में कमी और जैव विविधता का नुकसान हो सकता है। शहरी क्षेत्र और ग्रामीण क्षेत्र कोई धरती और आकाश नहीं हैं, दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं, इसलिए जब एक प्रभावित होगा तो अंततः दूसरे पर भी इसका प्रभाव पड़ेगा।

संदर्भ

- आचार्य, डी. बी., एवं सिंह, मीता. (2000). *द बुक ऑफ हॉस्पिटल वेस्ट मैनेजमेंट* (प्रथम संस्करण)। नई दिल्ली: मिनर्वा।

- अदेग्बिता, एम. ए., न्वाफोर, एस. ओ., अफॉन, ए., अबेगुंडे, ए. ए., एवं बामिसे, सी. टी. (2010). एक नाइजीरियाई तृतीयक अस्पताल में दंत अपशिष्ट प्रबंधन का आकलन। *अपशिष्ट प्रबंधन अनुसंधान*, 28, 769–777।

- अल रईसी, एस. ए. एच., सुलेमान, एच., सुलेमान, एफ. ई., एवं अब्दुल्ला, ओ. (2014). ओमान सल्तनत में एक बिना लाइन वाले लैंडफिल के निक्षालन में भारी धातुओं का आकलन। *अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण विज्ञान और विकास जर्नल*, 5(1), 60–63।

- एम. सी. मेहता बनाम ओडिशा राज्य. (1992). ए.आई.आर. 1992 ओरी 225 (226, 231, 232)।

- क्रिस्टीन, कटुसिमे. (2018). खराब स्वास्थ्य सेवा अपशिष्ट प्रबंधन से जुड़े रोगाणुरोधी प्रतिरोधी बैक्टीरिया का उद्भव: कार्रवाई का आह्वान। *एक्टा साइंटिफिक माइक्रोबायोलॉजी*, ।SSN 2581–3226।

- नेजाद, बी., एलेग्रांज़ी, एस., एवं सैयद, एस. बी. (2011). अफ्रीका में स्वास्थ्य देखभाल से जुड़ा संक्रमण: एक व्यवस्थित समीक्षा, *विश्व स्वास्थ्य संगठन बुलेटिन*, 89(10), 757–765। https: //dol.org/10.2471/BLT.11.088179

- नेमा, ए., बजाज, पी., सिंह, एच., एवं कुमार, एस. (2011). हिमाचल प्रदेश के शहरी अस्पताल में जैव-चिकित्सा अपशिष्ट प्रबंधन अभ्यास: एक केस अध्ययन। *अपशिष्ट प्रबंधन और अनुसंधान*, 29(6), 669–673।

- पार्क, एच., ली, एच., किम, एम., ली, जे., सेओंग, एस. वाई., एवं को, जी. (2009). चिकित्सा अपशिष्ट में रोगजनक सूक्ष्मजीवों का पता लगाना और खतरे का आकलन। *जर्नल ऑफ एनवायरनमेंटल साइंस एंड हेल्थ*, 44, 995–1003।

- पासुपति, पी., सिंधु, एस., पोन्नुशा, बी. एस., एवं अंबिका, ए. (2011). *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ बायोलॉजिकल एंड मेडिकल रिसर्च*, 2(1), 472–486।

- प्रियदर्शिनी, एन. आर., श्रीकांतस्वामी, एस., शिव कुमार, डी., एवं अभिलाष, एम. आर. (2016). मैसूर शहर के अस्पतालों के जैव चिकित्सा अपशिष्ट का लक्षण वर्णन। *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंजीनियरिंग साइंस एंड रिसर्च टेक्नोलॉजी*, 5(9), 452–459।

- राय, ए., कोठारी, आर., एवं सिंह, डी. पी. (2020). अपशिष्ट प्रबंधन: अवधारणाएँ, पद्धतियाँ, उपकरण और अनुप्रयोग। आईजीआई ग्लोबल।

- रीता, कुमारी, एवं रानी, पी. (2008). बिहार के सीवान की दहा नदी की पारिस्थितिक जाँच।

- रेमी, एल. (2001). अस्पताल के कचरे का प्रबंधन: एक बड़ी समस्या। *ग्रेट वेस्टर्न पैसिफिक कोस्टल पोस्ट*।

- रोग नियंत्रण एवं रोकथाम केंद्र (CDC). (2019). *एंटीबायोटिक प्रतिरोध खतरा रिपोर्ट*।

- सस्मिता, बिस्वाल. (2013). तरल जैव-चिकित्सा अपशिष्ट प्रबंधन: चिकित्सकों के लिए एक उभरती चिंता।

- सुब्रमण्यम, ए., ओहटेक, एम., कुनिसु, टी., एवं तनाबे, एस. (2000). भारत के चेन्नई शहर में माताओं के दूध में ऑर्गेनोक्लोरीन का उच्च स्तर। *केमोस्फीयर*, 68, 928–939।

- थॉर्टन, जे., मैककैली, एम., ओरिस, पी., एवं वेनबर्ग, जे. (1996). अस्पताल और प्लास्टिक: डाइऑक्सिन रोकथाम और चिकित्सा अपशिष्ट भस्मक। *जन स्वास्थ्य रिपोर्ट*, 111(4), 298–313।

- डब्ल्यू. एच. ओ. (1961). *विश्व स्वास्थ्य संगठन तकनीकी प्रतिनिधि क्रमांक 225*। जिनेवा: डब्ल्यूएचओ।

- बैटरमैन, एस. (2004). *विश्व स्वास्थ्य संगठन: स्वास्थ्य देखभाल अपशिष्ट के लिए लघु-स्तरीय भस्मक का आकलन*। जिनेवा: डब्ल्यूएचओ।

- ब्लेंकहार्म, जे. आई. (1995). क्लिनिकल अपशिष्ट का निपटान। *जर्नल ऑफ हॉस्पिटल इन्फेक्शन*, 30, 514–520।

- ब्रुक, ब्राउन. (2021). चिकित्सा अपशिष्ट का इतिहास।

- मान्येले, एस. वी., एवं मुजुनी, सी. एम. (2010). तंजानिया में निचले स्तर की स्वास्थ्य सुविधाओं में तीखे अपशिष्ट प्रबंधन की वर्तमान स्थिति। *तंजानिया जर्नल ऑफ हेल्थ रिसर्च*, 12(4), 257–264।

16

हिमाचल प्रदेश में महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य: सामाजिक, सांस्कृतिक और नीति-आधारित दृष्टिकोण से एक समग्र विश्लेषण

डॉ. राजीव बंसल दीप्ती सूर्या किशोर सिंह दीपिका शर्मा

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.182-1936
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

यह अध्ययन हिमाचल प्रदेश में महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य को सामाजिक, सांस्कृतिक और नीतिगत परिप्रेक्ष्य से समझने का प्रयास करता है, जिसमें ग्रामीण विकास की भूमिका को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के 'ओटावा चार्टर' के अनुसार, मानसिक स्वास्थ्य न केवल शारीरिक क्षमताओं का, बल्कि सामाजिक और भावनात्मक संसाधनों का भी संतुलित समावेश है। यद्यपि भारत में मानसिक स्वास्थ्य को लेकर जागरूकता में वृद्धि हुई है, परंतु महिलाओं के लिए सेवाओं की पहुँच अब भी सीमित और असमान बनी हुई है। घरेलू हिंसा, सामाजिक अपेक्षाएँ, यौन उत्पीड़न, आर्थिक निर्भरता, और कलंक जैसे कारक महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। हिमाचल प्रदेश में शैक्षणिक और स्वास्थ्य संकेतकों में प्रगति के बावजूद, आत्महत्या की घटनाएँ, छेड़छाड़, और बलात्कार की बढ़ती प्रवृत्ति यह दर्शाती हैं कि मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं सतह के नीचे गहराई से जमी हुई हैं। सरकार द्वारा आरंभ किए गए कार्यक्रम जैसे कि राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम (NMHP), टेली-मानस, और मानसविनी सराहनीय पहलें हैं, परंतु इनकी पहुँच और प्रभावशीलता में और विस्तार की आवश्यकता है। यह शोध महिलाओं की मानसिक स्वास्थ्य स्थिति का आकलन करते हुए यह पहचानने का प्रयास करता है कि किस प्रकार सामाजिक समर्थन, शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता और सुरक्षित वातावरण उनके मानसिक स्वास्थ्य में सुधार ला सकते हैं। साथ ही, यह शोध छेड़छाड़ जैसे "सामान्यीकृत अपराधों" को मानसिक हिंसा के रूप में देखने का आग्रह करता है। शोध के निष्कर्ष बताते हैं कि

हिमाचल प्रदेश में महिलाओं की मानसिक स्थिति को सुधारने के लिए लिंग-संवेदनशील नीति निर्माण, समुदाय-आधारित हस्तक्षेप, तथा स्कूल व पंचायत स्तर पर परामर्श सेवाओं की आवश्यकता है। हिमाचल प्रदेश के प्राप्त आंकड़ों में देखा जा सकता है, पुरुषों में आत्महत्या के मामलों की संख्या महिलाओं की तुलना में अधिक है। मौजूदा सरकारी योजनाओं और नीतिगत हस्तक्षेपों का मूल्यांकन कर यह शोध भविष्य में अधिक प्रभावी और समावेशी ग्रामीण विकास नीति के लिए सुझाव प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन नीति-निर्माताओं, स्वास्थ्य पेशेवरों, शिक्षकों और सामाजिक संगठनों के लिए एक सन्दर्भ दस्तावेज हो सकता है।

मुख्य शब्द: महिला मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य, ग्रामीण विकास, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न, मानसिक हिंसा

प्रस्तावना

मानसिक स्वास्थ्य, किसी व्यक्ति के समग्र स्वास्थ्य और जीवन गुणवत्ता का एक अनिवार्य अंग है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के *'ओटावा चार्टर फॉर हेल्थ प्रमोशन (1986)'* के अनुसार, स्वास्थ्य एक *'सकारात्मक अवधारणा'* है, जिसमें शारीरिक, मानसिक और सामाजिक भलाई को समग्र रूप से शामिल किया जाता है। यह न केवल बीमारी की अनुपस्थिति है, बल्कि यह क्षमता हैजीवन की चुनौतियों से निपटने, उत्पादक कार्य करने, और समुदाय में योगदान देने की (विश्व स्वास्थ्य संगठन, *1986*). मानसिक स्वास्थ्य इस व्यापक दृष्टिकोण का एक मूल आधार है।

भारत में मानसिक स्वास्थ्य से जुड़ी सेवाएँ, नीतियाँ और सार्वजनिक चर्चा धीरे-धीरे प्रगति कर रही हैं। फिर भी, महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में कई स्तरों पर असमानता, उपेक्षा और लिंग आधारित भेदभाव दिखाई देता है। भारतीय समाज में महिलाएँ पारिवारिक जिम्मेदारियों, सांस्कृतिक अपेक्षाओं, आर्थिक निर्भरता, यौनिक और प्रजनन स्वास्थ्य के मुद्दों, तथा हिंसा की घटनाओं के कारण अनेक मानसिक स्वास्थ्य चुनौतियों से जूझती हैं (*एनसीडब्ल्यू, वार्षिक रिपोर्ट 2023–24*).

हिमाचल प्रदेश जैसे लगभग 90% ग्रामीण आबादी वाले राज्य में, जहाँ विकास, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच अपेक्षाकृत बेहतर मानी जाती है, वहाँ भी मानसिक स्वास्थ्य विशेषकर महिलाओं के संदर्भ में अब भी उपेक्षित विषय है। छेड़छाड़, घरेलू हिंसा, सामाजिक कलंक और कार्यस्थल पर उत्पीड़न जैसी घटनाएँ महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डालती हैं। हाल ही में स्टेट सीआईडी, हिमाचल प्रदेश (2024) के आँकड़ों के अनुसार, महिलाओं के विरुद्ध दर्ज मामलों में छेड़छाड़ की घटनाएँ सबसे अधिक पाई गईं, जो स्ट-ट्रॉमैटिक स्ट्रेस डिसऑर्ड (पीटीएसडी), अवसाद और सामाजिक संकोच जैसी मानसिक समस्याओं को जन्म देती हैं।

कई लेखकों जैसे कि दावर (1999), पैरी (2000), विश्व स्वास्थ्य संगठन (2000), थारा और पटेल (2001), रेल और पाठक (2025) ने महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य को समझाने में योगदान दिया है और महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य में सुधार के लिए अनुशंसाएँ भी दी हैं। विश्व स्वास्थ्य

संगठन (2022) के अनुसार, वैश्विक स्तर पर महिलाओं में अवसाद, चिंता और पीटीएसडी की दर पुरुषों की तुलना में अधिक है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-5 (2021) के अनुसार, भारत में 29% विवाहित महिलाओं ने घरेलू हिंसा की जानकारी दी।एनसीआरबी (2023) के आंकड़ों के अनुसार, हिमाचल में आत्महत्या की दर महिलाओं में विशेष रूप से गृहिणियों के बीच उच्च रही है। शर्मा, (2022) के अध्ययन में पर्वतीय क्षेत्रों की महिलाओं में सामाजिक अलगाव, चिंता और आत्मसम्मान की समस्या को प्रमुख बताया गया।

इस शोध का उद्देश्य हिमाचल प्रदेश में महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य की स्थिति को एक सामाजिक-मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से विश्लेषित करना है, जिसमें संरचनात्मक कारकों, पारिवारिक माहौल, सामाजिक समर्थन, और नीति हस्तक्षेपों की भूमिका को समग्र रूप से समझा जाएगा। यह अध्ययन न केवल नीति निर्माताओं के लिए दिशा-निर्देश प्रदान करेगा, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं को और अधिक लिंग-संवेदनशील, सुलभ और प्रभावकारी बनाने में भी सहायक सिद्ध होगा। हिमाचल प्रदेश में मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में अभी भी नीति, संसाधन और समुदाय आधारित हस्तक्षेपों की आवश्यकता है। ग्रामीण, पहाड़ी क्षेत्रों में भौगोलिक पहुंच, गोपनीयता का अभाव, और मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञों की कमी भी एक बड़ी चुनौती है।

शोध की आवश्यकता

हिमाचल प्रदेश में महिलाओं के शैक्षिक और सामाजिक स्तर में सुधार के बावजूद, मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ उपेक्षित हैं। यह अध्ययन आवश्यक है क्योंकि यह छिपी हुई सामाजिक समस्या को सामने लाता है और नीति-निर्माण के लिए प्रमाण आधारित दिशा निर्देश प्रदान करता है।

उद्देश्य

- हिमाचल प्रदेश में महिलाओं की मानसिक स्वास्थ्य स्थिति का आकलन करना।
- सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक और सांस्कृतिक कारकों की भूमिका को समझना।
- छेड़छाड़, घरेलू हिंसा और लैंगिक असमानताओं का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पहचानना।
- महिला-केंद्रित मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच और प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।
- महिलाओं के लिए प्रभावी, सुलभ और लिंग-संवेदनशील नीति सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध पद्धति

इस शोध में केवल प्रकाशित आंकड़ों और सरकारी रिपोर्टों का विश्लेषण किया गया है। प्रमुख स्रोतों में राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-5, राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो रिपोर्ट्स (2024–2025),

स्वास्थ्य मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2024–25, और राष्ट्रीय महिला आयोग की रिपोर्ट 2023–24 शामिल हैं। इन द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से महिलाओं की मानसिक स्वास्थ्य स्थिति, उससे जुड़े जोखिम कारक और कार्यक्रमों की समीक्षा की गई है। अध्ययन की प्रकृति वर्णनात्मक और तथ्यात्मक है, जिसमें मौजूदा डेटा का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है।

विश्लेषण

हिमाचल की पारंपरिक पितृसत्तात्मक व्यवस्था महिलाओं की भूमिका को सीमित करती है। मानसिक समस्याओं को सामाजिक रूप से कमजोरी समझा जाता है, जिससे महिलाएं मदद लेने से कतराती हैं। युवा किशोरियों और शिक्षित महिला नेताओं में भी मानसिक तनाव की पुष्टि हुई है। सार्वजनिक स्थानों पर छेड़छाड़ की बढ़ती घटनाएं और बलात्कार के मामले मानसिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालते हैं।

हिमाचल प्रदेश में वैवाहिक हिंसा का स्तर राष्ट्रीय और वैश्विक औसत की तुलना में अपेक्षाकृत कम है, फिर भी यह एक गंभीर सामाजिक समस्या बनी हुई है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-5 के अनुसार, राज्य में 8% विवाहित महिलाएं अपने पति द्वारा शारीरिक या यौन हिंसा की शिकार हुई हैं, जबकि 7% महिलाओं ने भावनात्मक हिंसा की रिपोर्ट की है। यह आंकड़े भारत के औसत 29.3% और वैश्विक औसत 25% से काफी कम हैं, लेकिन चिंता की बात यह है कि हिंसा सभी सामाजिक-आर्थिक वर्गों में देखी गई है। [वार्षिक प्रतिवेदन 2023–2024, राष्ट्रीय महिला आयोग]

भारत सरकार द्वारा प्रारंभ किए गए प्रमुख मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम

1. **राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम, 1982**

   भारत सरकार ने 1982 में इस कार्यक्रम की शुरुआत की, जिसका उद्देश्य मानसिक विकारों की रोकथाम, उपचार और पुनर्वास सेवाओं को जिला स्तर तक पहुँचाना था। इसके अंतर्गत जिला मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम (आज देश के 700+ जिलों में सक्रिय है (*स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, 2024*), जो स्कूलों, कॉलेजों, जेलों, और पंचायत स्तर पर मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं को सुलभ बना रहा है।

2. **राष्ट्रीय टेली-मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम, 2022**

   डिजिटल युग में मानसिक स्वास्थ्य को सुलभ बनाने के लिए 10 अक्टूबर 2022 को *Tele-MANAS* सेवा की शुरुआत की गई, जिसे 2024 में मोबाइल ऐप के रूप में विस्तारित किया गया। यह 24x7 निशुल्क, गोपनीय मानसिक परामर्श उपलब्ध कराता है, विशेषकर ग्रामीण व दूरस्थ क्षेत्रों के लिए (*स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, 2024*).

3. **"मानसविनी" कार्यक्रम (2024)**

   यह विशेष कार्यक्रम *पिरामल फाउंडेशन* और *राष्ट्रीय महिला आयोग* के सहयोग से महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर केंद्रित है। इसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में 2000+ करुणा फ़ेलोज़ को प्रशिक्षित कर महिलाओं में मानसिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता और प्रारंभिक हस्तक्षेप सुनिश्चित करना है (*एनसीडब्ल्यू वार्षिक रिपोर्ट, 2023–24*).

4. **POSH अधिनियम पर प्रशिक्षण व जनजागरूकता (Preventlon of Sexual Harassment - 2013)**

   कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की रोकथाम हेतु राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा 2023-24 में 3000 से अधिक प्रतिभागियों को प्रशिक्षित किया गया, जिससे मानसिक तनाव को कम करने व सुरक्षित कार्य वातावरण सुनिश्चित करने की दिशा में पहल हुई (राष्ट्रीय महिला आयोग, *2024*).

5. **सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय की योजना – "सक्षम" और "उद्यम"**

   जिनका उद्देश्य मानसिक रूप से अस्वस्थ महिलाओं के लिए पुनर्वास, काउंसलिंग, और पुन: रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना है। इस योजना के तहत विभिन्न NGO और केंद्रों को वित्तीय सहायता दी जाती है।

6. **WHO-lndla द्वारा समर्थित "मनोदय" पायलट कार्यक्रम**

   यह परियोजना स्कूलों और किशोर-केंद्रित कार्यक्रमों के माध्यम से, खासकर लड़कियों में, मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता और स्किल-बेस्ड हस्तक्षेप विकसित करने पर केंद्रित है।

7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत 'छात्र सहायता केंद्र' (Student Support Centers) मानसिक स्वास्थ्य को शिक्षा से जोड़ते हुए स्कूलों और कॉलेजों में काउंसलिंग व्यवस्था, लाइफ स्किल ट्रेनिंग और तनाव प्रबंधन कार्यशालाओं की परिकल्पना की गई है।

मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं तक महिलाओं की पहुँच की प्रमुख बाधाएँ

- कलंक (Stlgma): मानसिक बीमारियों को 'कमज़ोरी' या 'पागलपन' से जोड़ना।
- सामाजिक अपेक्षाएँ: पारिवारिक भूमिकाओं में संपूर्णता की माँग और त्याग की संस्कृति।
- आर्थिक निर्भरता: वित्तीय संसाधनों की कमी के कारण काउंसलिंग या थैरेपी की सेवाओं से दूरी।
- लैंगिक हिंसा का अनुभव: पीटीएसडी, अवसाद, आत्महत्या की प्रवृत्ति में वृद्धि।

I. वैश्विक परिप्रेक्ष्य

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, मानसिक स्वास्थ्य वैश्विक स्तर पर एक सार्वजनिक स्वास्थ्य संकट बन चुका है। 2022 की रिपोर्ट बताती है कि विश्व स्तर पर लगभग 1 अरब लोग किसी न किसी मानसिक विकार से पीड़ित हैं, जिनमें महिलाओं में अवसाद (DepressIon), चिंता (AnxIety), और पीटीएसडी की दर पुरुषों की तुलना में 1.5 गुना अधिक पाई गई है। यौन हिंसा, लैंगिक असमानता, आर्थिक निर्भरता और सामाजिक कलंक जैसी संरचनात्मक बाधाएँ महिलाओं की मानसिक भलाई को सीधे प्रभावित करती हैं। यूनिसेफ और विश्व बैंक की संयुक्त रिपोर्ट (2023) के अनुसार, 15-29 वर्ष की आयु वर्ग की महिलाओं में मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं आत्महत्या का प्रमुख कारण बनती जा रही हैं। विशेषकर विकासशील देशों में यह प्रवृत्ति अधिक गंभीर है, जहाँ संसाधनों की कमी और कलंक का स्तर अधिक होता है।

II. राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

भारत में मानसिक स्वास्थ्य परिदृश्य बहुआयामी है। भारत सरकार द्वारा संचालित राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण, 2016 के अनुसार, 13.7% आबादी किसी न किसी मानसिक विकार से पीड़ित है, जिसमें महिलाओं की भागीदारी विशिष्ट है। महिलाओं के मामले में मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले प्रमुख कारक हैं घरेलू हिंसा, विवाह से संबंधित दबाव, सामाजिक अपेक्षाएँ, और कार्यस्थल पर असमानता।

एनएफएचएस-5 (2019–21) के अनुसार, भारत में 29.3% विवाहित महिलाओं ने घरेलू हिंसा का अनुभव किया, जबकि 52% ने यह स्वीकार किया कि वे निर्णय लेने में स्वतंत्र नहीं हैं। मानसिक स्वास्थ्य कानून, 2017 के बावजूद, महिलाओं में मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच सीमित बनी हुई है। इसके अतिरिक्त, राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो 2023 की रिपोर्ट बताती है कि आत्महत्या करने वालों में 50% से अधिक महिलाएँ घरेलू तनाव, दहेज उत्पीड़न, और यौन हिंसा के कारण यह कदम उठाती हैं। गृहिणियाँ आत्महत्या करने वाली महिलाओं में सबसे बड़ी श्रेणी हैं।

III. राज्य स्तर: हिमाचल प्रदेश की स्थिति

हिमाचल प्रदेश को आमतौर पर शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और सामाजिक संकेतकों के लिहाज से भारत के बेहतर राज्यों में माना जाता है। परंतु, महिला मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में यह राज्य भी चिंताजनक तस्वीर प्रस्तुत करता है:

घरेलू हिंसा और सामाजिक तनाव

- एनएफएचएस-5 (2019–21) के अनुसार, हिमाचल प्रदेश में 8% विवाहित महिलाओं ने शारीरिक या यौन हिंसा और 7% ने भावनात्मक हिंसा की शिकायत दर्ज की।
- यह आँकड़े राष्ट्रीय औसत (29.3%) से कम हैं, परंतु यह ध्यान देने योग्य है कि हिंसा की घटनाएँ सभी सामाजिक-आर्थिक वर्गों में समान रूप से फैली हुई हैं।
- विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों (11%) और शराब की लत वाले पति वाले परिवारों में हिंसा की दर अधिक पाई गई है।

यौन उत्पीड़न और किशोरियों पर बलात्कार

- राज्य अपराध अन्वेषण विभाग (CID, HP) के अनुसार, वर्ष 2014 से 2025 तक 12 से 30 वर्ष की आयु वर्ग की महिलाएं यौन हिंसा की सर्वाधिक शिकार रही हैं।
- किशोरियों में पीटीएसडी, सामाजिक अलगाव, आत्महत्या की प्रवृत्ति और आत्मसम्मान में गिरावट जैसे मानसिक स्वास्थ्य परिणाम स्पष्ट रूप से देखे जाते हैं।

गृहिणियों में आत्महत्या की दर

- राज्य अपराध अन्वेषण विभाग डेटा (2020–2024) के अनुसार, आत्महत्या करने वाली महिलाओं में 70% से अधिक गृहिणियाँ थीं — जिनका प्रमुख कारण घरेलू हिंसा, सामाजिक उपेक्षा, और भावनात्मक समर्थन की कमी था।
- औसतन हर वर्ष 100+ गृहिणियों ने आत्महत्या की, जो मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की तत्काल आवश्यकता को दर्शाता है।

छेड़छाड़ और कार्यस्थल उत्पीड़न

- वर्ष 2014–2025 के आंकड़ों में 'छेड़छाड़' (आईपीसी धारा 354) महिलाओं के विरुद्ध सबसे अधिक दर्ज होने वाला अपराध रहा है।
- 2020–2024 के बीच औसतन 490+ मामले हर वर्ष दर्ज किए गए हैं, जबकि 2025 की पहली छमाही में ही 188 मामले दर्ज हुए।
- यह न केवल सार्वजनिक स्थानों पर असुरक्षा की भावना बढ़ाता है, बल्कि महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर स्थायी दुष्प्रभाव डालता है — जैसे डर, सामाजिक संकोच, और आत्मविश्वास में कमी।

संवेदनशीलता और कलंक

- हिमाचल की पारंपरिक पितृसत्तात्मक व्यवस्था महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य को लेकर खुलापन नहीं अपनाती।
- मानसिक समस्याओं को 'कमजोरी' या 'पागलपन' के रूप में देखा जाता है, जिससे महिलाएँ सहायता लेने से झिझकती हैं।

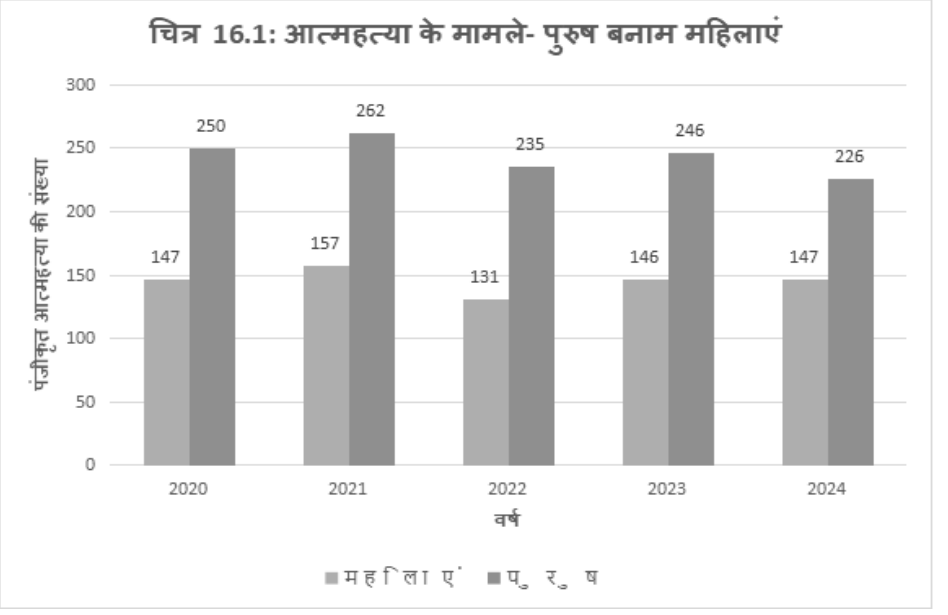

जैसा कि चित्र 1 में वर्ष 2020 से 2024 तक हिमाचल प्रदेश सीआईडी विभाग से प्राप्त आंकड़ों में देखा जा सकता है, पुरुषों में आत्महत्या के मामलों की संख्या महिलाओं की तुलना में अधिक है। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि पुरुष भी मानसिक रूप से अत्यधिक परेशान हैं और उनकी मानसिक स्वास्थ्य की स्थिति भी संतोषजनक नहीं है। इसलिए पुरुषों पर केंद्रित नीतियों और कार्यक्रमों के ढांचे पर ध्यान देने की आवश्यकता है। किशोरावस्था में लड़कों और लड़कियों दोनों के लिए परामर्श सत्र (काउंसलिंग सेशन) अनिवार्य रूप से आयोजित किए जाने चाहिए।

इस गहराई से विश्लेषण से स्पष्ट है कि मानसिक स्वास्थ्य एक बहुस्तरीय सामाजिक मुद्दा है जो वैश्विक संदर्भ में व्यापक और स्थानीय संदर्भ में विशिष्ट रूप धारण करता है। इसलिए यह आवश्यक है कि मानसिक स्वास्थ्य को केवल चिकित्सकीय समस्या नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और लैंगिक समानता के दृष्टिकोण से भी देखा जाए।

परिणाम

अध्ययन के विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि हिमाचल प्रदेश में महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक घरेलू हिंसा, लैंगिक असमानता, सामाजिक कलंक, आर्थिक निर्भरता, और मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की सीमित उपलब्धता हैं।

- वैश्विक और राष्ट्रीय तुलना में पाया गया कि राज्य का महिला साक्षरता और स्वास्थ्य सूचकांक अपेक्षाकृत बेहतर है, लेकिन मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान अपेक्षाकृत कम है।
- सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में, पारंपरिक पितृसत्तात्मक सोच और सामाजिक दबाव महिलाओं को मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं के बारे में खुलकर बोलने से रोकते हैं।
- आर्थिक दृष्टिकोण से, बेरोज़गारी, असमान वेतन और आर्थिक निर्भरता महिलाओं में तनाव, चिंता और अवसाद के स्तर को बढ़ाते हैं।
- नीति-आधारित समीक्षा से पता चला कि मौजूदा सरकारी योजनाओं में मानसिक स्वास्थ्य को लेकर विशेष लैंगिक दृष्टिकोण का अभाव है।
- सेवाओं की पहुंच के मामले में, ग्रामीण व दूरदराज़ क्षेत्रों में मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञों की कमी और जागरूकता की कमी प्रमुख बाधा है।

कुल मिलाकर, अध्ययन यह इंगित करता है कि हिमाचल प्रदेश में महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार हेतु बहु-क्षेत्रीय, सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील और नीतिगत रूप से सुदृढ़ हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

गाँव की सोच से विकास की दिशा तक

ग्राम विकास के संदर्भ में प्राप्त अनुभवों से स्पष्ट होता है कि जमीनी स्तर पर महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य केवल स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता से नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मान्यताओं और आर्थिक अवसरों से भी गहराई से जुड़ा है। संवाद के दौरान उभरने वाले मुद्दे जैसे घरेलू हिंसा, आर्थिक असमानता, सामाजिक कलंक और सेवाओं तक सीमित पहुँचनीतिगत निर्णयों के लिए ठोस आधार प्रदान करते हैं। जब इन अनुभवों का वैज्ञानिक विश्लेषण और तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है, तो वे केवल व्यक्तिगत या स्थानीय समस्या न रहकर, व्यापक नीतिगत सुधार की दिशा में मार्गदर्शक बन जाते हैं। इस दृष्टि से, 'ग्राम विकास संवाद' न केवल समुदाय की वास्तविक चुनौतियों को सामने लाने का माध्यम है, बल्कि उन्हें नीति निर्माण में समाहित कर स्थायी और समावेशी विकास सुनिश्चित करने का भी सशक्त साधन है।

सुझाव

1. **स्कूल और पंचायत स्तर पर मानसिक स्वास्थ्य शिक्षा:** किशोरियों के लिए मानसिक स्वास्थ्य परामर्शदाताओं की नियुक्ति की जाए और पाठ्यक्रम में जीवन कौशल, यौन शिक्षा एवं तनाव प्रबंधन को सम्मिलित किया जाए।

2. **ग्रामीण क्षेत्रों में मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं का विकेंद्रीकरण:** सखी वन स्टॉप सेंटर और टेली-मानस सेवाओं की पहुँच दूरदराज़ के गांवों तक सुनिश्चित की जाए।

3. **पीड़ित-केन्द्रित पुनर्वास नीति:** यौन हिंसा एवं छेड़छाड़ की शिकार महिलाओं के लिए विशेष मानसिक परामर्श, कानूनी सहायता एवं सामाजिक पुनर्वास केंद्रों की स्थापना की जाए।

4. **छेड़छाड़ को मनोवैज्ञानिक हिंसा के रूप में मान्यता:** स्कूलों, कॉलेजों और कार्यस्थलों पर छेड़छाड़ के मानसिक प्रभावों पर जनजागरूकता अभियान और परामर्श सुविधाएं चलाई जाएं।

5. **महिला स्वास्थ्य नीति में समावेशी दृष्टिकोण:** महिलाओं की मानसिक स्वास्थ्य जरूरतों को उनकी सामाजिक स्थिति, हिंसा के अनुभव, आर्थिक निर्भरता और सांस्कृतिक कारकों के आधार पर विश्लेषित किया जाए और योजनाएं तैयार की जाएं।

6. **पारिवारिक और सामुदायिक संवाद:** परिवारों और स्थानीय समुदायों में मानसिक स्वास्थ्य को लेकर संवाद एवं संवेदनशीलता बढ़ाने हेतु कार्यशालाओं और प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन हो।

7. **करुणा फ़ेलोज़ जैसे मॉडल का विस्तार:** 'मानसविनी' जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से प्रशिक्षित समुदाय आधारित मानसिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की संख्या बढ़ाई जाए।

8. **नियमित डेटा संग्रह एवं विश्लेषण:** महिला मानसिक स्वास्थ्य पर राज्य स्तर पर समय-समय पर सर्वेक्षण और विश्लेषण किया जाए, ताकि कार्यक्रमों की प्रभावशीलता को मापा और सुधारा जा सके।

निष्कर्ष

ग्रामीण विकास के परिप्रेक्ष्य में यह स्पष्ट होता है कि महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य केवल चिकित्सा सुविधाओं पर निर्भर नहीं है, बल्कि यह सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश, आर्थिक अवसरों और नीतिगत प्राथमिकताओं से भी गहराई से प्रभावित होता है। इस अध्ययन में प्राप्त अनुभवों और विश्लेषण से यह सामने आया है कि घरेलू हिंसा, आर्थिक निर्भरता, सामाजिक कलंक, लैंगिक भेदभाव और सेवाओं की सीमित उपलब्धता जैसी समस्याएँ ग्रामीण समुदायों में महिलाओं की मानसिक स्थिति को गंभीर रूप से प्रभावित करती हैं। इन अनुभवों को ग्राम स्तर के संवादों के माध्यम से संकलित कर, यदि नीतिगत ढांचे में समुचित स्थान दिया जाए, तो यह न केवल

महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य में सुधार लाएगा, बल्कि समग्र रूप से ग्रामीण विकास की गति को भी सुदृढ़ करेगा। अतः अनुभवों से नीति निर्माण की यह प्रक्रिया, स्थायी और समावेशी विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम साबित हो सकती है।

हालांकि भारत सरकार द्वारा विभिन्न योजनाएं और डिजिटल पहलें चलाई जा रही हैं, फिर भी नीति, सेवा और सामाजिक व्यवहार में अभी भी गहरी खाइयाँ हैं। मानसिक स्वास्थ्य को केवल बीमारी न मानकर, जीवन की गरिमा, सामाजिक न्याय और लैंगिक समानता के परिप्रेक्ष्य से देखने की आवश्यकता है।

यह शोध स्पष्ट करता है कि महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य संकट को दूर करने के लिए शिक्षा, सामाजिक चेतना, समुदाय आधारित हस्तक्षेप, और समर्पित नीति पहल की आवश्यकता है। छेड़छाड़ जैसे 'सामान्यीकृत' अपराध को भी मनोवैज्ञानिक हिंसा के रूप में मान्यता देना और इस पर सख्त सामाजिक व संस्थागत प्रतिक्रिया विकसित करना आवश्यक है।

अंततः, यदि हम मानसिक स्वास्थ्य को महिलाओं के अधिकारों और गरिमा से जोड़कर देखें, तभी एक समावेशी और स्वस्थ समाज की कल्पना साकार हो सकती है।

सन्दर्भ

- अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान (।IPS).(2021). *राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5), भारत 2019–21: हिमाचल प्रदेश।* मुंबई: ।IPS
- उमंग फाउंडेशन, हिमाचल प्रदेश.(2024). *मानसिक स्वास्थ्य और महिला सशक्तिकरण पर रिपोर्ट*।
- नीति आयोग.(2023). *SDG इंडिया इंडेक्स (लक्ष्य 5: लैंगिक समानता)।* भारत सरकार। उपलब्ध: https://sdgIndIaIndex.nItI.gov.In
- राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB). (2023). *भारत में अपराध रिपोर्ट (2020–2023)।* गृह मंत्रालय, भारत सरकार, उपलब्ध: https://ncrb.gov.In
- राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5) .(2021). *हिमाचल प्रदेश तथ्य पत्रक (2019–21),* अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान (।IPS), मुंबई, उपलब्ध: https: //rchIIps.org/nfhs
- राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW).(2024). *वार्षिक प्रतिवेदन 2023–2024।* भारत सरकार। उपलब्ध: https://ncw.nIc.In
- दावर, बी. वी. (1999). *भारतीय महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य: एक नारीवादी एजेंडा,* नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन।

- पैरी, बी. एल. (2000)। *महिलाओं में मूड विकारों का हार्मोनल आधार।* ई. फ्रैंक (संपादक), *लैंगिकता और उसका मनोविकार विज्ञान पर प्रभाव* (पृ. 61–84), वॉशिंगटन डी.सी.: अमेरिकन साइकियाट्रिक प्रेस ।

- परिवार कल्याण मंत्रालय (MoHFW). (2017). *मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017,* भारत सरकार, उपलब्ध: https://maln.mohfw.gov.ln

- परिवार कल्याण मंत्रालय (MoHFW).(2025), *वार्षिक प्रतिवेदन 2024–25।* भारत सरकार, नई दिल्ली।

- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय (MWCD) .(2023). *वार्षिक प्रतिवेदन 2022–23।* भारत सरकार उपलब्ध: https://wcd.nlc.ln

- राज्य अपराध अन्वेषण विभाग (ClD) हिमाचल प्रदेश(2020–2025) *महिलाओं के विरुद्ध अपराध पर सांख्यिकीय विश्लेषण ।*

- राय, शिवांगी, एवं पाठक, अभिषेक.(2025).*ग्रामीण महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य: चुनौतियाँ, निर्धारिक और संकल्प की राहें। SSR इंस्टीट्यूट ऑफ इंटरनेशनल जर्नल ऑफ लाइफ साइंसेज,* 11(4). https://dol.org/10.21276/SSR-lIJLS.2025.11.4.33

- शर्मा, नीलिमा. (2022). *पर्वतीय क्षेत्रों में महिलाओं और मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन। इंडियन जर्नल ऑफ साइकोलॉजी,* 58(3), 145–160

- स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय (MoHFW) (2017) *मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017,* भारत सरकार, उपलब्ध: https://maln.mohfw.gov.ln

- थारा, आर., एवं पटेल, वी. (2001) *महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य: एक सार्वजनिक स्वास्थ्य चिंता। क्षेत्रीय स्वास्थ्य फोरम – WHO दक्षिण-पूर्व एशिया क्षेत्र,* 5, 24–34 ।

- हिमाचल प्रदेश पुलिस (2025) *नागरिक पोर्टल – राज्य अपराध अन्वेषण विभाग डेटा,* उपलब्ध: https://cltlzenportal.hppollce.gov.in

- विश्व स्वास्थ्य संगठन(2000) *महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य: एक साक्ष्य-आधारित समीक्षा,* जेनेवा:WHO प्रकाशन ।

- विश्व स्वास्थ्य संगठन, एवं स्वास्थ्य और कल्याण कनाडा. (1986). *ओटावा चार्टर फॉर हेल्थ प्रमोशन,* कनाडियन पब्लिक हेल्थ एसोसिएशन।

- वैश्विक अंतर्दृष्टि. (2025).*मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए सरकार और व्यवसायों के अवसर,* दिनांक:19 मई 2025 ।

17

बेटी, बगिया और पंचायत: पिपलांत्री की अनूठी पहल

डॉ. सोनल मोबार रॉय

DOI: https://doi.org/10.65651/NP.978-93-5857-988-8.2025.194--205
ISBN: 978-93-5857-988-8

सार

राजस्थान का पिपलांत्री गाँव इस बात का सशक्त उदाहरण है कि स्थानीय परंपराएँ और सरकारी योजनाएँ जब एक-दूसरे से जुड़ती हैं, तो ग्राम विकास केवल नीतिगत दस्तावेज़ नहीं रहता, बल्कि एक जीवंत सामाजिक परिवर्तन का रूप ले लेता है। बेटी के जन्म पर 111 पौधे लगाने की परंपरा ने यहाँ न केवल लैंगिक समानता की चेतना को प्रबल किया, बल्कि जल संरक्षण और पर्यावरणीय पुनर्जीवन को भी सामुदायिक उत्सव में बदल दिया। इस सांस्कृतिक पहल को ग्राम पंचायत ने महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) जैसे कार्यक्रमों से जोड़ा, जिससे यह केवल प्रतीकात्मक न रहकर आर्थिक और सामाजिक रूप से स्थायी बनी। अध्याय में राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर मनरेगा में महिलाओं की भागीदारी के आँकड़ों का विश्लेषण किया गया है। वित्तीय वर्ष 2023–24 में महिलाओं की हिस्सेदारी 59% तक पहुँचना यह दर्शाता है कि यह योजना ग्रामीण भारत में महिला श्रमिकों के लिए सशक्तिकरण का प्रमुख साधन बन चुकी है। विशेषकर राजस्थान में यह आँकड़ा राष्ट्रीय औसत से कहीं अधिक (66–68%) है, जिसने पिपलांत्री जैसे गाँवों में महिलाओं की भूमिका को श्रमिक से आगे बढ़ाकर सामाजिक नेतृत्व तक पहुँचाया है। यह अध्याय तर्क प्रस्तुत करता है कि पिपलांत्री मॉडल केवल पर्यावरणीय पहल या सांस्कृतिक परंपरा नहीं है, बल्कि सतत् विकास लक्ष्यों की स्थानीय व्याख्या भी है। इसमें गरीबी उन्मूलन, लैंगिक समानता, जलवायु कार्रवाई और पारिस्थिति की संरक्षण जैसे आयाम एक साथ जुड़े हैं। पिपलांत्री यह सिखाता है कि जब पंचायत और समुदाय मिलकर कार्य करते हैं, तो अनुभव नीति में बदलते हैं और संवाद से विकास की वास्तविक यात्रा आरंभ होती है।

मुख्य शब्द: *महिला भागीदारी, ग्राम पंचायत,* सतत् *विकास, लैंगिक समानता, पर्यावरणीय संरक्षण*

प्रस्तावना

भारत के गाँव केवल भौगोलिक इकाइयाँ नहीं हैं; वे सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक परंपरा और जीवन-निर्वाह की धुरी हैं। आज भी ग्रामीण भारत लगभग 65% आबादी का घर है, और वहीं से देश की अर्थव्यवस्था, संस्कृति और लोकतांत्रिक सहभागिता की जड़ें पोषित होती हैं। इस संदर्भ में *ग्राम पंचायतें* केवल प्रशासनिक संस्थाएँ नहीं बल्कि लोकतांत्रिक चेतना और सामाजिक ऊर्जा की वाहक हैं।

राजस्थान के राजसमंद ज़िले का एक छोटा-सा गाँव पिपलांत्री आज ग्राम विकास की प्रयोगशाला माना जाता है। पिपलांत्री गाँव उदयपुर से लगभग 70 किलोमीटर दूर, राजसमंद ज़िले की *रेलमगरा तहसील* में स्थित है। यह गाँव अरावली की पहाड़ियों के बीच बसा है और ऐतिहासिक रूप से *खनन गतिविधियों* के लिए जाना जाता रहा है। पास के क्षेत्रों में संगमरमर और अन्य खनिजों की खदानें हैं, जिसने लंबे समय तक गाँव के पर्यावरण और जल संसाधनों पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। पिपलांत्री की कुल जनसंख्या लगभग 5, 000–6, 000 के बीच है (2011 की जनगणना और स्थानीय स्रोतों के अनुसार)। गाँव का सामाजिक ढांचा विशिष्ट रूप से राजस्थानी ग्रामीण संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ कृषि और पशुपालन आजीविका का मुख्य आधार है, लेकिन खनन उद्योग के कारण यहाँ के पर्यावरण पर गंभीर संकट मंडराने लगा था (येल रिव्यू ऑफ इंटरनेशनल स्टडीज, 2016; आईजेएसआरएसटी, 2017)। खनन की वजह से:

- जलस्तर लगातार नीचे जा रहा था, कई क्षेत्रों में पानी 800–900 फीट की गहराई से ही मिल पाता था (मिशन सस्टेनेबिलिटी, 2024)।
- मिट्टी का कटाव और हरित आवरण में भारी कमी आई थी (ग्लोबल बिज़नेस सर्टिफ़िकेशन इंक., 2019)।
- खदानों से निकलने वाले अपशिष्ट ने भूमि की उर्वरता और आसपास के जल स्रोतों को प्रदूषित किया (आईजेएसआरएसटी, 2017)।
- गाँव गर्म और शुष्क जलवायु में और भी जलविहीन तथा असुरक्षित होता चला गया (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, 2021)।

इस संदर्भ में पिपलांत्री ने अपने लिए एक *वैकल्पिक रास्ता* चुना। जब स्थानीय नेतृत्व और ग्राम पंचायत ने निर्णय लिया कि बेटी के जन्म को पौधारोपण से जोड़ा जाएगा, तब यह केवल एक सामाजिक संदेश नहीं था, बल्कि *पर्यावरणीय पुनर्जीवन* और *जल संकट से निपटने की रणनीति* भी थी (द ट्रिब्यून इंडिया, 2024) । आज पिपलांत्री को "मॉडल विलेज" कहा जाता है।

जिस गाँव को कभी *खनन और जल संकट* ने असुरक्षित बना दिया था, वही गाँव आज *सतत विकास, लैंगिक न्याय और पंचायत आधारित नवाचार* का आदर्श बन गया है (आइडियाज़ फ़ॉर

इंडिया, 2025; संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, 2021)। यहाँ विकास का अर्थ केवल सड़कों और इमारतों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह *लैंगिक समानता, पर्यावरण संरक्षण और सामुदायिक सहभागिता* का सम्मिलित दर्शन है। यह गाँव इस बात का जीवंत उदाहरण है कि जब पंचायत, समाज और परंपरा एक साथ खड़े होते हैं, तो विकास न केवल योजनाओं से, बल्कि *सांस्कृतिक मूल्यों* से भी आकार लेता है। राजस्थान के राजसमंद ज़िले का पिपलांत्री गाँव विकास का एक प्रेरणादायी मॉडल बन चुका है। ग्राम पंचायतें अक्सर सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन के औजार के रूप में देखी जाती हैं, लेकिन राजस्थान के राजसमंद ज़िले का पिपलांत्री गाँव बताता है कि जब स्थानीय संस्कृति, पर्यावरणीय चेतना और सामुदायिक भागीदारी एक साथ आती हैं, तो गाँव *नीति का निष्क्रिय केंद्र* नहीं, बल्कि *परिवर्तन का सक्रिय स्रोत* बन जाता है। इस गाँव ने एक अद्भुत पहल की—हर बेटी के जन्म पर 111 पौधे लगाना। यह प्रतीकात्मक कदम धीरे-धीरे एक *सामुदायिक नवाचार* बन गया, जिसने न केवल पर्यावरण को संवारा बल्कि बेटियों के प्रति सोच और पंचायत के विकास मॉडल को भी बदल डाला (इंडियन एक्सप्रेस, 2023; द प्रिंट, 2024; प्रेस सूचना ब्यूरो , 2023)।

राजस्थान के राजसमंद ज़िले का एक छोटा-सा गाँव—पिपलांत्री—इसी सामाजिक ऊर्जा का जीवंत उदाहरण है। यह गाँव एक अनूठे मॉडल के रूप में जाना जाता है जहाँ *बेटी, बगिया और पंचायत* एक साथ मिलकर विकास की नई परिभाषा गढ़ते हैं। बेटी का जन्म अब केवल परिवार की निजी घटना नहीं बल्कि पूरे गाँव का सामूहिक उत्सव है। इस उत्सव को पौधारोपण और पर्यावरणीय संरक्षण से जोड़ा गया है। यह न केवल *लैंगिक समानता* को बढ़ावा देता है बल्कि सतत विकास और ग्राम पंचायत के नेतृत्व की शक्ति को भी प्रदर्शित करता है।

पहल की शुरुआत

पिपलांत्री की अनूठी पहल की नींव 2000 के दशक में उस समय रखी गई जब गाँव की बच्चियों और पर्यावरण को लेकर एक सामाजिक संकल्प लिया गया। गाँव में यह परंपरा शुरू हुई कि हर बेटी के जन्म पर 111 पौधे लगाए जाएंगे। यह प्रतीकात्मक कदम समय के साथ सामूहिक सामाजिक आंदोलन में बदल गया। इसकी अगुवाई पूर्व सरपंच श्याम सुंदर पालीवाल ने की, जिनकी बेटी की असामयिक मृत्यु ने इस अभियान को व्यक्तिगत दर्द से सामुदायिक संकल्प में रूपांतरित कर दिया। इस सांस्कृतिक अनुष्ठान में पूरी पंचायत ने भाग लिया।

इस अवसर पर बेटी के माता-पिता और समुदाय की ओर से ₹21, 000 तथा पंचायत की ओर से ₹10, 000 बेटी के नाम पर बैंक में फिक्स्ड डिपॉज़िट जमा किए जाते हैं। इस प्रकार यह पहल सर्वव्यापी हो गई और समस्त ग्रामवासी इसका हिस्सा बने । माता-पिता एक अफ़िडेविट पर हस्ताक्षर करते हैं जिसमें यह सुनिश्चित किया जाता है कि वे बेटी की शिक्षा जारी रखेंगे, उसका समय से पूर्व विवाह नहीं करेंगे और लगाए गए पौधों की नियमित देखभाल करेंगे। इसके अतिरिक्त,

ग्राम पंचायत इस पूरी प्रक्रिया को मनरेगा से जोड़कर सामूहिक श्रम और वित्तीय सहयोग उपलब्ध कराती है । पिपलांत्री अब न केवल *पर्यावरणीय पुनरुद्धार* बल्कि *लैंगिक न्याय* और *पंचायती नवाचार* का प्रतीक माना जाने लगा है (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, 2021)।

बेटी और बगिया का संगम

बेटी और बगिया का संगम केवल प्रतीकात्मक नहीं बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण का आधार है। पहले जहाँ बेटी के जन्म को बोझ समझा जाता था, वहीं अब पौधारोपण की परंपरा ने उसे पूरे गाँव की धरोहर और सामूहिक गर्व का विषय बना दिया है। प्रत्येक पौधा किसी बेटी के नाम से जुड़ा होता है, जिससे गाँववाले न केवल उसे अपने परिवार का हिस्सा मानते हैं, बल्कि उसकी देखभाल को सामाजिक कर्तव्य समझते हैं। इस प्रक्रिया ने सामुदायिक चेतना को गहरा किया है, क्योंकि बेटियों और पौधों दोनों की सुरक्षा अब ग्राम सभा और पंचायत की साझा जिम्मेदारी बन चुकी है (ग्लोबल बिज़नेस सर्टिफ़िकेशन इंक., 2019; आईजेएसआरएसटी, 2017)। यह मॉडल केवल परंपरा और आधुनिकता का सम्मिलन नहीं, बल्कि सामाजिक समस्या का समाधान सांस्कृतिक नवाचार से खोजने का उदाहरण है। इसने ग्रामीण समाज में एक नई सामूहिक पहचान गढ़ी है, जहाँ बेटी का भविष्य और गाँव का पर्यावरण एक-दूसरे से अविभाज्य हो गए हैं।

इसके अतिरिक्त, इस पहल ने ग्रामीण जीवन में नई ऊर्जा का संचार किया है। पौधों की देखभाल में महिलाओं और युवाओं की सक्रिय भागीदारी ने सामाजिक पूँजी को सुदृढ़ किया है और पीढ़ी-दर-पीढ़ी सामूहिक जिम्मेदारी की भावना को मजबूत किया है। बेटियों के नाम से जुड़ी बगिया अब केवल हरियाली नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, पारिस्थितिक संवेदनशीलता और लोकतांत्रिक सहभागिता का भी प्रतीक बन चुकी है। इसने ग्रामीण समाज को यह संदेश दिया कि बेटी और बगिया, दोनों मिलकर ही जीवन की स्थिरता और विकास का आधार हैं।

केस-वृत्तांत: सोनी की बगिया

उदाहरण के तौर पर, जब गाँव की एक किसान परिवार की बेटी सोनी का जन्म हुआ, तो पंचायत की परंपरा के अनुसार 111 पौधे लगाए गए। सुनीता की माँ कहती हैं कि *"पहले बेटी होने पर लोग सहानुभूति जताते थे, पर अब लोग बधाई देते हैं और पेड़ लगाने में साथ आते हैं। हमें लगता है कि बेटी अकेली नहीं है, पूरा गाँव उसके साथ है।"*सोनी के नाम पर लगाए गए नीम और आम के पौधे अब बड़े पेड़ बन चुके हैं। वे न केवल छाया और हरियाली दे रहे हैं, बल्कि गाँव के बच्चों के खेलने और पढ़ने की जगह भी बन गए हैं।

यह छोटी-सी कहानी दिखाती है कि कैसे एक बच्ची और उससे जुड़े पौधे दोनों गाँव की सामूहिक पहचान का हिस्सा बन गए हैं। यह पहल केवल पर्यावरण सुधार तक सीमित नहीं है, बल्कि यह गाँववालों की मानसिकता और भावनाओं में गहराई तक उतर चुकी है।

पंचायत की भूमिका और सामुदायिक सहभागिता

पिपलांत्री की विशेषता यह रही कि यहाँ ग्राम पंचायत ने इस पहल को केवल सांस्कृतिक अनुष्ठान के स्तर पर सीमित नहीं रहने दिया। अक्सर गाँवों में कोई सामाजिक परंपरा उत्साह से शुरू होती है, लेकिन समय बीतने के साथ वह केवल प्रतीकात्मक रह जाती है। पिपलांत्री की पंचायत ने इसके विपरीत कार्य किया उसने इस पहल को सरकारी योजनाओं और संस्थागत प्रक्रियाओं से जोड़कर स्थायी रूप दिया । यही कारण है कि यह आंदोलन केवल व्यक्तिगत प्रेरणा तक सीमित नहीं रहा बल्कि पूरे गाँव की सामूहिक जीवन-शैली में गहराई से उतर गया।

ग्राम पंचायत ने *महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा)* का उपयोग इस दिशा में विशेष रूप से किया। वृक्षारोपण, तालाब खुदाई, नालों और चेक डैम का निर्माण, जल संरक्षण के प्रयास, इन सबको मनरेगा के अंतर्गत प्राथमिकता दी गई। इसका लाभ यह हुआ कि एक ओर प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और पुनर्जीवन हुआ, दूसरी ओर गाँव के लोगों को स्थानीय स्तर पर ही रोजगार उपलब्ध हो गया। इस तरह पर्यावरण और आजीविका, दोनों लक्ष्यों को साथ-साथ पूरा किया गया । साथ ही, पंचायत ने *राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन* और महिला स्वयं सहायता समूहों को भी इस आंदोलन से जोड़ा। एलोवेरा और औषधीय पौधों की खेती को बढ़ावा दिया गया, ताकि महिलाएँ केवल पौधारोपण तक सीमित न रहें, बल्कि उनकी देखभाल और उनसे आय अर्जित करने में भी सक्रिय भागीदारी निभाएँ। इससे महिला आय में वृद्धि हुई और उनके भीतर आत्मनिर्भरता की भावना भी सुदृढ़ हुई। यह पहल दिखाती है कि पंचायत ने केवल प्रतीकात्मक अनुष्ठान नहीं किया, बल्कि इसे आर्थिक रूप से टिकाऊ बनाने की योजना भी बनाई।

इसके अतिरिक्त, सामुदायिक बंधन को मजबूत करने के लिए ग्राम सभा को भी सक्रिय किया गया। ग्राम सभा की बैठकों में यह समीक्षा की जाने लगी कि पौधों की देखभाल किस स्तर पर हो रही है और परिवार अपनी बेटियों की शिक्षा के प्रति कितने प्रतिबद्ध हैं। इस प्रकार यह पहल केवल पौधे लगाने तक सीमित नहीं रही बल्कि एक सामाजिक अनुबंध (soclal contract) का रूप ले चुकी है। बेटियों की शिक्षा और पौधों की सुरक्षा अब केवल व्यक्तिगत दायित्व नहीं रहे, बल्कि पूरे समुदाय की साझा जिम्मेदारी बन गए (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, 2021; आइडियाज़ फ़ॉर इंडिया, 2025)।

इस प्रकार पिपलांत्री की पंचायत ने सांस्कृतिक पहल को संस्थागत रूप प्रदान किया। उसने परंपरा को आधुनिक नीतियों और कार्यक्रमों से जोड़ा और सामुदायिक सहभागिता के ज़रिए इसे टिकाऊ बनाया। यही कारण है कि पिपलांत्री का उदाहरण अन्य गाँवों और नीतिनिर्माताओं के लिए प्रेरणा बन सका ।

सामाजिक और आर्थिक प्रभाव

पिपलांत्री की पहल ने केवल एक सांस्कृतिक अनुष्ठान को जन्म नहीं दिया, बल्कि इसने गाँव की सामाजिक संरचना, पर्यावरणीय स्थिति और आर्थिक जीवन पर गहरे और दीर्घकालिक असर डाले। बेटियों के जन्म को पौधारोपण से जोड़ने का यह प्रयोग समय के साथ एक *व्यापक ग्राम परिवर्तन आंदोलन* में बदल गया। इसने सामाजिक मानसिकता को बदला, पर्यावरणीय संसाधनों को पुनर्जीवित किया और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नई दिशा दी। सामूहिक श्रमदान, महिला भागीदारी और पंचायत की दूरदृष्टि ने मिलकर इसे एक ऐसा मॉडल बनाया, जहाँ लैंगिक न्याय, पर्यावरणीय संरक्षण और आर्थिक आत्मनिर्भरता एक साथ आगे बढ़ते हैं।

1. लैंगिक समानता

पिपलांत्री की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि इसने बेटियों के प्रति दृष्टिकोण को पूरी तरह बदल दिया। पहले जहाँ बेटी का जन्म कई परिवारों में चिंता और उपेक्षा का कारण माना जाता था, वहीं अब वह पूरे गाँव का उत्सव बन गया है। पौधारोपण को बेटी जन्मोत्सव से जोड़कर यह सुनिश्चित किया गया कि बेटी केवल परिवार की नहीं बल्कि पूरे समुदाय की धरोहर बने। इस सांस्कृतिक परिवर्तन ने लैंगिक समानता की चेतना को गहरा किया और महिलाओं की पंचायत गतिविधियों तथा सामुदायिक निर्णय-प्रक्रियाओं में भागीदारी बढ़ाई।

2. पर्यावरणीय लाभ

पिपलांत्री ने वृक्षारोपण और जल संरक्षण को अपने विकास मॉडल का केंद्र बनाया। अब तक तीन लाख से अधिक पौधे गाँव और उसके आसपास लगाए जा चुके हैं, जिसने हरित आच्छादन (green cover) को उल्लेखनीय रूप से बढ़ाया है। पहले जो गाँव सूखा-प्रवण और जल संकट से ग्रस्त था, वहीं अब तालाब, चेक डैम और बग़ीचों के कारण भूजल स्तर 800–900 फीट से सुधरकर 300–400 फीट तक पहुँच गया है। इसके साथ ही तापमान में औसतन 3–4 डिग्री सेल्सियस की गिरावट आई है, जिससे जलवायु का संतुलन बेहतर हुआ है। इस प्रकार पर्यावरणीय दृष्टि से पिपलांत्री अब *पर्यावरण-संवेदनशील ग्राम विकास* का आदर्श उदाहरण बन चुका है।

3. आर्थिक परिवर्तन

पिपलांत्री की महिलाओं ने एलोवेरा और अन्य औषधीय पौधों की खेती को आजीविका का नया आधार बना लिया है। एलोवेरा से तैयार उत्पाद जैसे जेल, साबुन और औषधियाँ न केवल स्थानीय बाज़ार में बिकते हैं बल्कि स्वयं सहायता समूहों के नेटवर्क के माध्यम से आसपास के कस्बों तक पहुँचते हैं। इससे महिलाओं की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है और उनके भीतर आत्मनिर्भरता का भाव गहराया है। वृक्षारोपण और जल-संरक्षण के कारण कृषि उत्पादन में भी वृद्धि हुई है, जिससे गाँव की अर्थव्यवस्था और मज़बूत हुई।

4. सामाजिक पूँजी

इस पहल का सबसे गहरा प्रभाव गाँव की *सामाजिक पूँजी (soc/al cap/tal)* पर पड़ा है। पौधों और बेटियों की देखभाल के लिए पूरे गाँव ने सामूहिक श्रमदान और साझा जिम्मेदारी का भाव अपनाया। इससे लोगों के बीच आपसी सहयोग और विश्वास की भावना मजबूत हुई। अब पिपलांत्री केवल एक भौगोलिक इकाई नहीं बल्कि एक *सामुदायिक परिवार* की तरह कार्य करता है। यह सामाजिक एकजुटता ही है जिसने गाँव को मॉडल विलेज का दर्जा दिलाया और इसे भारत तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई।

तालिका 17.1: पिपलांत्री पहल के प्रमुख परिणाम

क्षेत्र	**परिणाम**
वृक्षारोपण	3 लाख से अधिक पौधे लगाए गए
जलस्तर	800–900 फीट से सुधरकर 300–400 फीट
तापमान	3–4°C की गिरावट
बेटियों की शिक्षा	सभी पंजीकृत बालिकाएँ विद्यालय में
महिला आय	एलोवेरा उत्पाद से 20–25% आय वृद्धि

स्रोत: क्षेत्र डेटा संग्रह से

मनरेगा डेटा (वित्तीय वर्ष 2023–24) और महिला भागीदारी: स्थिति और विश्लेषण

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) को भारत के ग्रामीण जीवन में "सामाजिक सुरक्षा की रीढ़" कहा जा सकता है। यह केवल रोज़गार का साधन नहीं, बल्कि ग्रामीण गरीबों को जीवन की कठिन परिस्थितियों में सहारा देने वाला कार्यक्रम है। वर्ष 2006 में लागू इस कानून का उद्देश्य था कि ग्रामीण परिवारों को कम से कम सौ दिन का मज़दूरी आधारित रोजगार सुनिश्चित हो और इसके साथ ही गाँवों के लिए टिकाऊ परिसंपत्तियाँ भी निर्मित हों। समय के साथ यह योजना केवल रोजगार गारंटी का साधन न रहकर महिलाओं के लिए सामाजिक न्याय और आत्मनिर्भरता का एक प्रभावी माध्यम बन गई।

राष्ट्रीय स्तर पर देखें तो वित्तीय वर्ष 2023–24 में महिला श्रमिकों की भागीदारी अभूतपूर्व रही। इस वर्ष मनरेगा के तहत किए गए कार्य-दिवसों में महिलाओं का हिस्सा 58.8% से 59.25% तक पहुँच गया, जो पिछले एक दशक का सबसे ऊँचा स्तर था (द प्रिंट, 2024)। यदि पिछले पाँच वर्षों का रुझान देखें तो यह आँकड़ा लगातार बढ़ा है: 2019–20 में 54.7% से बढ़कर 2022–23 में

57.4% और अंततः 2023–24 में लगभग 59% तक पहुँच गया। यह वृद्धि केवल संख्यात्मक नहीं है; यह इस बात का संकेत है कि ग्रामीण महिलाएँ अब योजनाओं में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं और अपने परिवारों के आर्थिक जीवन में निर्णायक योगदान दे रही हैं।

राजस्थान के आँकड़े इस प्रवृत्ति को और भी रोचक बनाते हैं। यहाँ महिला भागीदारी का स्तर राष्ट्रीय औसत से कहीं अधिक रहा है। 2018–19 से 2022–23 के बीच राजस्थान में महिलाओं की हिस्सेदारी 66% से 68% के बीच रही (प्रेस सूचना ब्यूरो , 2023), इसका अर्थ है कि राजस्थान की महिलाएँ न केवल श्रमिक के रूप में बल्कि ग्राम पंचायतों की योजना और विकास प्रक्रिया में भी अग्रणी भूमिका निभा रही हैं।

इसी पृष्ठभूमि में पिपलांत्री का उदाहरण विशेष महत्व रखता है। यह गाँव पहले खनन और जल संकट से जूझ रहा था, परंतु पंचायत और समुदाय की सामूहिक पहल ने इसे मॉडल गाँव बना दिया। यहाँ मनरेगा को केवल मजदूरी तक सीमित न रखकर वृक्षारोपण, तालाब निर्माण और चेक डैम जैसे कार्यों से जोड़ा गया। इन गतिविधियों ने गाँव को पर्यावरणीय सुरक्षा दी और साथ ही महिलाओं को बड़े पैमाने पर काम मिला। महिलाओं ने न केवल खेतों और बग़ीचों में श्रम किया बल्कि एलोवेराऔर औषधीय पौधों की खेती में भी भागीदारी की। स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से इन उत्पादों का विपणन हुआ, जिससे महिलाओं की आय में वृद्धि हुई और वे परिवार के आर्थिक निर्णयों में अधिक सक्षम हुईं।

पिपलांत्री में मनरेगा की भूमिका इस मायने में भी महत्वपूर्ण है कि इसने महिलाओं को केवल श्रमिक की भूमिका से आगे बढ़ाकर *सामाजिक परिवर्तन की नायिका* बनाया। उच्च महिला भागीदारी ने ग्राम पंचायत की जवाबदेही और पारदर्शिता को भी मज़बूत किया। जब महिलाएँ सामुदायिक परिसंपत्तियों के निर्माण और रख-रखाव में सक्रिय भूमिका निभाती हैं, तो योजनाओं का असर गहरा और दीर्घकालिक होता है। मनरेगा ने पिपलांत्री जैसी पंचायतों में महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय रूप से सक्रिय बनाने का काम किया है। इस कार्यक्रम के भीतर उच्च महिला भागीदारी ने न केवल आय और रोजगार का विस्तार किया, बल्कि आत्मसम्मान और सामुदायिक चेतना को भी बढ़ाया। पिपलांत्री यह दिखाता है कि जब पंचायत केवल नीति लागू करने वाली संस्था न रहकर समुदाय की आकांक्षाओं को केंद्र में रखे, तब विकास "अनुभव से नीति और संवाद से परिवर्तन" की वास्तविक यात्रा बन जाता है।

अलग-अलग स्रोत अनुसार, पिपलांत्री में अब तक 3 लाख से अधिक वृक्ष लगाए जा चुके हैं; जलस्तर में 800–900 फीट की रिकवरी हुई, तापमान में 3–4 डिग्री सेल्सियस तक की गिरावट आई है; पर्यावरण में विविधता और हरियाली लौट आई है। साथ ही, एलोवेरा को बचाने और उसका बिक्री प्रारूप अपनाने से ग्रामीण महिलाओं को स्वरोजगार और आजीविका का अवसर मिला। इसने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी मजबूती दी।

सतत् विकास लक्ष्य (SDGs) के संदर्भ में पिपलांत्री

पिपलांत्री का अनुभव यह दर्शाता है कि ग्राम पंचायतें यदि चाहें तो सतत् विकास लक्ष्यों (SDGs) को केवल एक अंतरराष्ट्रीय एजेंडा भर न मानकर, उन्हें स्थानीय संदर्भों में मूर्त रूप दे सकती हैं। इस छोटे-से गाँव ने अपनी सांस्कृतिक परंपरा और पंचायत आधारित नेतृत्व के माध्यम से कई लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में ठोस योगदान दिया है।

सबसे पहले, गरीबी उन्मूलन (SDG 1) के संदर्भ में देखें तो एलोवेरा और अन्य औषधीय पौधों की खेती ने महिलाओं और किसानों को नई आजीविका दी। इससे न केवल परिवारों की आय बढ़ी बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में स्थिरता भी आई। लैंगिक समानता (SDG 5) के क्षेत्र में पिपलांत्री की पहल विशेष रूप से उल्लेखनीय है। बेटी का जन्म अब बोझ नहीं बल्कि पूरे गाँव का उत्सव है। शिक्षा की गारंटी और समय से पूर्व विवाह न करने की शर्तों ने महिलाओं की स्थिति को मजबूत किया और लैंगिक न्याय की दिशा में नई दृष्टि दी। स्वच्छ जल और स्वच्छता (SDG 6) की दिशा में भी गाँव ने उल्लेखनीय प्रगति की। वृक्षारोपण, तालाब निर्माण और चेक डैम जैसी गतिविधियों ने जलस्तर को पुनर्जीवित किया। पहले जहाँ पानी 800–900 फीट नीचे था, वहीं अब यह 300–400 फीट की गहराई पर उपलब्ध है। इसने गाँव को सूखा-प्रवण स्वरूप से बाहर निकालने में मदद की।

जलवायु कार्रवाई (SDG 13) के संदर्भ में पिपलांत्री का मॉडल यह दिखाता है कि स्थानीय स्तर पर भी जलवायु संकट का समाधान संभव है। लाखों पौधों ने न केवल तापमान में औसतन 3–4 डिग्री की गिरावट लाई, बल्कि वातावरण को अधिक संतुलित और स्वास्थ्यप्रद भी बनाया।स्थलीय पारिस्थितिकी (SDG 15) के क्षेत्र में यह पहल और भी प्रासंगिक है। गाँव में हरित आच्छादन व्यापक रूप से बढ़ा, जैव विविधता लौट आई और खेती के लिए नई संभावनाएँ बनीं। इससे ग्रामीण जीवन और प्राकृतिक संसाधन दोनों को स्थायित्व मिला।

इस प्रकार पिपलांत्री यह प्रमाणित करता है कि सतत् विकास लक्ष्य केवल कागज़ी संकल्प नहीं हैं। यदि पंचायतें सामुदायिक भागीदारी और स्थानीय नवाचार को प्राथमिकता दें तो ये लक्ष्य गाँवों की ज़मीन पर भी उतने ही जीवंत हो सकते हैं।

नीति-सुझाव और अनुकरणीय पहल

पिपलांत्री मॉडल यह स्पष्ट करता है कि जब स्थानीय संस्कृति, पंचायत नेतृत्व, पर्यावरणीय संरक्षण और लैंगिक न्याय एक साथ काम करते हैं तो सतत् विकास की दिशा केवल आदर्श नहीं, बल्कि व्यावहारिक रूप से संभव हो जाती है। इस पहल ने यह साबित किया कि कोई भी सामाजिक परंपरा यदि ग्राम पंचायत के संस्थागत ढांचे और योजनाओं से जुड़ जाए तो वह दीर्घकालिक परिवर्तन का आधार बन सकती है। इसलिए अन्य पंचायतों के लिए पिपलांत्री से कई महत्वपूर्ण सीखें निकलती हैं।

सबसे पहले, बेटी जन्मोत्सव को सामुदायिक उत्सव बनाना इस मॉडल का मूल है। यह केवल सांस्कृतिक आयोजन नहीं बल्कि सामूहिक प्रतिबद्धता का प्रतीक है, जो पूरे समुदाय को एक साझा उद्देश्य से जोड़ता है। इसके साथ-साथ पौधारोपण और पर्यावरणीय गतिविधियों को ग्राम पंचायत की विकास योजना का अनिवार्य हिस्सा बनाना चाहिए, ताकि गाँव का प्राकृतिक संतुलन कायम रहे और जलवायु संकट से निपटने की क्षमता बढ़े। इसी तरह, बेटियों की शिक्षा और वित्तीय सुरक्षा को सुनिश्चित करना भी ज़रूरी है, ताकि यह पहल केवल प्रतीकात्मक न रहे बल्कि महिलाओं और बेटियों के जीवन में ठोस बदलाव ला सके।

नीतिगत स्तर पर यह आवश्यक है कि ग्राम पंचायत विकास योजना (GPDP) में लैंगिक और पर्यावरणीय संकेतकों को समाविष्ट किया जाए। यदि योजना निर्माण में इन बिंदुओं को अनिवार्य कर दिया जाए तो पिपलांत्री जैसे प्रयोग पूरे देश में फैल सकते हैं। साथ ही, वृक्षारोपण और बागवानी जैसी गतिविधियों को महिला स्वयं सहायता समूहों और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन से जोड़ना चाहिए, ताकि आजीविका और पर्यावरणीय संरक्षण एक साथ आगे बढ़ें। ग्राम सभा की नियमित समीक्षा इस पूरी प्रक्रिया को और पारदर्शी तथा जवाबदेह बनाती है, क्योंकि इससे यह सुनिश्चित होता है कि पौधों की देखभाल और बेटियों की शिक्षा पर परिवार और समुदाय लगातार ध्यान देते रहें।

हालाँकि, इस मॉडल को बड़े स्तर पर लागू करने में कुछ चुनौतियाँ भी हैं। सबसे बड़ी चुनौती है निरंतर सामुदायिक भागीदारी को बनाए रखना, क्योंकि समय के साथ सामाजिक ऊर्जा कम हो सकती है। इसके अलावा, संसाधनों की उपलब्धता और संस्थागत सहयोग भी बेहद आवश्यक है। नीति स्तर पर ऐसी पहलों को बढ़ावा देना और पंचायतों को आवश्यक वित्तीय व प्रशासनिक सहायता प्रदान करना इस दिशा में मददगार होगा। इस प्रकार पिपलांत्री यह दिखाता है कि यदि स्थानीय परंपरा और आधुनिक पंचायत शासन का संयोजन हो, तो सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति केवल अंतरराष्ट्रीय संकल्प तक सीमित नहीं रहती, बल्कि गाँवों की ज़मीन पर भी साकार हो सकती है।

निष्कर्ष

पिपलांत्री बताता है कि विकास योजनाएँ तभी सफल होती हैं जब वे समुदाय की संस्कृति और संवेदना से जुड़ती हैं। यहाँ बेटी सम्मान है, बगिया भविष्य है और पंचायत उसका सूत्रधार है।पिपलांत्री एक गाँव नहीं, बल्कि परिवर्तन का प्रतीक हैजहाँ बेटी की अपेक्षा और उपेक्षा के बीच, हर बेटी को गहराई से सम्मान मिला। पिपलांत्री केवल एक गाँव नहीं, बल्कि *आशा और नवाचार का प्रतीक* है। पिपलांत्री गाँव यह बताता है कि विकास केवल योजनाओं का क्रियान्वयन नहीं बल्कि संस्कृति और सामूहिक चेतना का परिणाम है। यह सिखाता है कि जब स्थानीय नेतृत्व, पंचायत की संस्थागत ताक़त और समुदाय की सामूहिक चेतना एक साथ आती हैं, तो संसाधनों की

कमी और सामाजिक पूर्वाग्रह भी विकास की बाधा नहीं बन पाते। यह गाँव इस बात का प्रमाण है कि "गाँव केवल योजनाओं का उपभोक्ता नहीं, बल्कि नवाचार और नीतिगत प्रयोग का सक्रिय केंद्र भी हो सकता है।" पिपलांत्री की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि इसने लैंगिक समानता और पर्यावरण संरक्षण जैसे दो ऐसे विषयों को जो अक्सर अलग-अलग नीति क्षेत्रों में देखे जाते हैं, एक ही सामाजिक परंपरा के ज़रिये जोड़ दिया।

इस पहल ने साबित किया कि ग्राम पंचायतें यदि चाहें तो सतत् विकास लक्ष्यों को केवल "अंतरराष्ट्रीय एजेंडा" न मानकर स्थानीय वास्तविकताओं से जोड़ सकती हैं। शोध और अकादमिक दृष्टि से पिपलांत्री का अनुभव यह दिखाता है कि "अनुभव से नीति" कोई नारा नहीं बल्कि व्यावहारिक हकीकत है। यहाँ के अनुभव नीतियों को यह सोचने पर मजबूर करते हैं कि विकास केवल आर्थिक सूचकांकों से नहीं, बल्कि *लोगों के जीवन, संबंधों और संस्कृति* से परिभाषित होता है। भविष्य की दिशा में यह ज़रूरी है कि ऐसे मॉडल गाँवों की कहानियाँ केवल मीडिया की सुर्खियों में न रह जाएँ, बल्कि उन्हें प्रशिक्षण, नीति निर्माण और अकादमिक विमर्श का हिस्सा बनाया जाए। यदि पिपलांत्री जैसे प्रयोगों को अन्य पंचायतें सीखकर अपनाएँ, तो भारत में ग्राम विकास का चेहरा और अधिक आत्मनिर्भर, समावेशी और पर्यावरण-संवेदनशील हो सकता है। इस प्रकार, पिपलांत्री न केवल राजस्थान का, बल्कि पूरे भारत का एक "आशा का गाँव" है जहाँ बेटी सम्मान है, बगिया भविष्य है और पंचायत उसका सूत्रधार है।

संदर्भ

- आइडियाज़ फ़ॉर इंडिया. (2025). *मनरेगा का संक्षिप्त इतिहास: 20 साल, 10 चार्ट्स में।* आइडियाज़ फ़ॉर इंडिया. https://www.ldeasforlndla.ln/toplcs/poverty-lnequallty/a-short-hlstory-of-mnrega-20-years-ln-10-charts.html

- आईजेएसआरएसटी (IJSRST). (2017). *इको-फेमिनिज़्म और* सतत् *ग्रामीण विकास: पिपलांत्री का अध्ययन।* इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ साइंटिफ़िक रिसर्च इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, 3(5), 52–59. https://ljsrst.com/paper/10167.pdf

- इंडियन एक्सप्रेस. (2023). *मनरेगा में महिलाओं की भागीदारी लगातार बढ़ रही है।* इंडियन एक्सप्रेस. https://lndlanexpress.com/artlcle/lndla/women-partlc|patlon-ln-nregs-contlnues-to-rlse

- ग्लोबल बिज़नेस सर्टिफ़िकेशन इंक. (GBCl). (2019). *इट टेक्स अ विलेज टू सेव द प्लानेट:पिपलांत्री, राजस्थान.* https://www.gbcl.org/lt-takes-vlllage-save-planet-p|plantrl-rajasthan

- द ट्रिब्यून इंडिया. (2024). *हर बेटी के लिए 111 पेड़: सुप्रीम कोर्ट ने राजस्थान गाँव की सराहना की।* द ट्रिब्यून. https://www.tr|bune|nd|a.com/news/|nd|a/111-trees-for-every-g|rl-ch|ld-sc-lauds-rajasthan-v|llages-|n|t|at|ve

- द प्रिंट. (2024). *मनरेगा में महिलाओं की भागीदारी 10 वर्षों के उच्चतम स्तर पर पहुँची,* द प्रिंट. https://thepr|nt.|n/|nd|a/womens-part|c|pat|on-|n-mgnregs-h|ts-10-yr-h|gh-at-58-8

- भारत के महापंजीयक एवं जनगणना आयुक्त का कार्यालय. (2011). *भारत की जनगणना 2011: अस्थायी जनसंख्या आँकड़े.* गृह मंत्रालय, भारत सरकार। https://census|nd|a.gov.|n

- *प्रेस सूचना ब्यूरो* (P|B). (2023, 12 जुलाई). *मनरेगा में महिला भागीदारी पर प्रेस नोट [प्रेस विज्ञप्ति].* ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार। https://p|b.gov.|n/PressReleasePage.aspx?PR|D=1942377

- मिशन सस्टेनेबिलिटी. (2024). *द पिपलांत्री मॉडल: इकोलॉजी और कम्युनिटी का संगम.* https://m|ss|onsusta|nab|||ty.org/blog/the-p|plantr|-model

- येल रिव्यू ऑफ़ इंटरनेशनल स्टडीज़. (2016). *राजस्थान में हरियाली और नारीवाद: पिपलांत्री गाँव में जमीनी मरुस्थलीकरण से संघर्ष.* येल रिव्यू ऑफ़ इंटरनेशनल स्टडीज़. https://yr|s.y|ra.org/essays/grow|ng-up-green-in-rajasthan

- संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP). (2021). *भारत में* सतत् *विकास लक्ष्यों का स्थानीयकरण: ग्राम पंचायतों की भूमिका.* यूएनडीपी इंडिया. https://www.undp.org/India/publications

References

- *Amin, S. (1988). Event, Metaphor, Memory: Chauri Chaura, 1922–1992. Berkeley: University of California Press.*
- *Béteille, A. (1996). Caste, Class and Power: Changing Patterns of Stratification in a Tanjore Village. Oxford University Press.*
- *Bihar Public Health Engineering Department. (2022). Annual Report 2021–22. Government of Bihar.*
- *Bihar Skill Development Mission. (2023). Annual Performance Report. Government of Bihar.*
- *Census of India. (2011). Primary Census Abstracts. Registrar General of lndia.*
- *Centre for Policy Research. (2021). Assessment of Bihar's Nal Jal Yojana. CPR, New Delhi.*
- *Centre for Policy Research. (2021). Governance and Accountability in Bihar's Rural Programs. CPR, New Delhi.*
- *Desai, R. (2020). Social Audit and Citizen Participation in Rural Bihar. Indian Journal of Public Administration, 66(3), 285–302.*
- *Desai, R., & Joshi, S. (2014). Collective Action and Women's Empowerment: Self-Help Groups in Indla. The World Bank.*
- *Desai, R., & Joshi, S. (2021). Livelihoods and Empowerment through SHGs in Bihar: A Review. lndian Journal of Development Studies, 45(3), 34–52.*
- *Deshpande, A. (2015). Women's Empowerment and Grassroots Development in Bihar. Gender and Development Studies, 11(1), 34–51.*

- *Dreze, J., & Khera, R. (2009). The Battle for Employment Guarantee. Oxford University Press.*
- *Dreze, J., & Khera, R. (2017). Recent Social Security Initatives in India. Economic & Political Weekly, 52(4), 45–55.*
- *Frankel, F. R. (1971). India's Green Revolution: Economic Gains and Political Costs. Princeton University Press.*
- *Gandhi, M. K. (1938). Hind Swaraj and Other Writings. Ahmedabad: Navajivan Publishing House.*
- *Gandhi, M. K. (1938). Hind Swaraj. Navajivan Publishing House.*
- *Global Business Certification Inc. (GBCI). (2019). It takes a village to save the planet: Piplantri, Rajasthan. https://www.gbci.org/it-takes-village-save-planet-piplantri-rajasthan*
- *Government of Bihar. (2020). Annual Report of Rural Development Department. Patna: Government Press.*
- *Government of Bihar. (2020). Rural Development Department Reports. Patna: Government of Bihar.*
- *Government of Bihar. (2022). Annual Report on Rural Development. Patna: Rural Development Department.*
- *Ideas for India. (2025, January 5). A short history of MGNREGA: 20 years in 10 charts. https://www.ideasforIndia.in/topics/poverty-inequality/a-short-history-of-mnrega-20-years-in-10-charts.html*
- *International Journal of Scientific Research in Science and Technology (IJSRST). (2017). Ecofeminism and sustainable rural development: A case study of Piplantri. International Journal of Scientific Research in Science and Technology, 3(5), 52–59. https://ijsrst.com/paper/10167.pdf*

- *Jha, D. (1991). Rural Economy of Bihar: Past and Present. Economic and Polit|cal Weekly, 26(13), A19–A25.*
- *Jha, S., & Mathur, K. (1999). Decentralisation and Local Politics. Economic and Political Weekly, 34(51), 3575–3580.*
- *Jha, S., Mathur, S., & Mishra, M. (2017). Grassroots Governance and Participatory Planning in Bihar. |ndian Journal of Public Administration, 63(4), 456–472.*
- *Jodhka, S. S. (2002). Nation and Village: Images of Rural India in Gandhi, Nehru and Ambedkar. Economic and Political Weekly, 37(32), 3343–3353.*
- *Jodhka, S. S. (2012). Caste: Oxford India Short Introduct|ons. New Delhi: Oxford University Press.*
- *Jodhka, S. S. (2014). Caste, Class and Power in Rural India. Oxford University Press.*
- *Kakkoth, S 2005 The Primitive Tribal Groups of Kerela: A Situational Appraisal in Studies of Tribes And Tribals, 3(1), pp 47-55*
- *Kumar, A. (2008). Social Movements in Bihar: Caste, Class and Mobilisation. New Delhi: Sage.*
- *Kumar, A. (2015). Poll|t|cal Economy of Rural Development |n B|har. Econom|c and Poll|t|cal Weekly, 50(12), 45–53.*
- *Kumar, V., & Singh, M. (2020). Decentralization and Caste Politics in Bihar Panchayats. Journal of Rural Studies, 34(2), 98–112.*
- *Majumdar, D.N. (1944).The Fortunes of Primitive Tribe, The super-in-tendent, Provincial Census Operat|ons, United Province 1941, for the Lucknow University, by Univers|ty Publication Ltd.*

- *Mathew, G. (2000). Status of Panchayat| Raj in the States and Union Territories of India 2000. New Delhi: |nstitute of Social Sciences.*
- *Mathew, G. (2019). Empowering Panchayati Raj Institutions in Ind|a. Journal of Rural Governance, 24(1), 34–49.*
- *Mathew, G. (2019). Panchayati Raj in India: Institutional Reforms and Challenges. Economic and Political Weekly, 54(6), 18–25.*
- *Mehta, A., & Ali, S. (2022). Digital |nclus|on in Rural India: Emerg|ng Practices from the Ground. Journal of Development Pol|cy and Practice, 7(1), 55–72.*
- *Ministry of Electronics and Information Technology (Me|tY). (2021). Dig|tal |ndia Annual Report. Government of India.*
- *Ministry of Jal Shakti. (2021). Swachh Bharat Abhiyan (Gramin) – Performance Report. Government of India.*
- *Ministry of Rural Development. (2020). Annual Report 2019–20. Government of India.*
- *Ministry of Rural Development. (2020). MGNREGA Annual Report 2019–20. Government of |nd|a.*
- *Ministry of Rural Development. (2022). PMGSY Status Report. Government of India.*
- *Mission Sustainability. (2024, January 18). The Piplantri model: Confluence of ecology and community. https: //missionsustainab|l|ty.org/blog/the-piplantri-model*
- *NABARD. (2021). SHG-Bank Linkage Programme: Success Stories from Bihar. National Bank for Agriculture and Rural Development.*
- *NREGA Watch. (2021). Implementation Challenges of MGNREGA in Bihar.*

- *Offlce of the Registrar General & Census Commissioner, India. (2011). Census of Indla 2011: Provisional population totals. Ministry of Home Affairs, Government of lndia. Retrieved from https: //censusIndia.gov.in*

- *Oommen, M. A. (2005). Devolution of Resources to Rural Local Bodies in India: Trends and Concerns. Indian Journal of Public Administration, 51(3), 370–389.*

- *Parekh, B. (1997). Gandhi: A Very Short Introduction. Oxford University Press.*

- *Planning Commission. (1985). Evaluation Report on IRDP. Government of India.*

- *Planning Commission. (2002). Tenth Five Year Plan (2002–2007): Volume II — Sectoral Policies and Programmes. New Delhi: Government of India.*

- *Planning Commission. (2008). Eleventh Five Year Plan (2007–2012): Volume III – Agriculture, Rural Development, Industry, Services and Physical Infrastructure. New Delhi: Government of India.*

- *Press Information Bureau (PIB). (2023, July 12). Press note on women's participation In MGNREGS [Press release]. Ministry of Rural Development, Government of India. https: //p|b.gov.In/PressReleasePage.aspx?PRID=1942377*

- *PRIA. (2018). Strengthening Community Monitoring of PDS in Bihar: A Case Study from Araria. Society for Participatory Research in Asia.*

- *Radhakr|shna, R., & Ray, S. K. (2005). Poverty in India: Dimensions and Character. Indian Journal of Labour Economics, 48(1), 25–41.*

- *Raijada, Ajit (1983).Tr|bal Development In M.P., Inter-India Publication, New Delhi.*

- *Rao, P.V. (1986).Institutional framework for Tribal Development, Inter-India Publication, New Delhi.*
- *Rao, V., & Sanyal, P. (2010). Dignity through Discourse: Poverty and the Culture of Deliberation in Indian Village Democracies. The Annals of the American Academy of Political and Social Science, 629(1), 146–172.*
- *Reddy, Prakash, G. (2000).Primitive Tribal Groups: Survival, Protection and Development, in Yojana, pp.31-34*
- *Report of an Approach to Tribal Development in the Sixth Plan: A Preliminary Perspective. By Ministry of Home Affairs, Government of India, New Delhi. 1977*
- *Risley, H.H. (1891).Tribes and Castes of Bengal, Ethnographic Glossary, Calcutta, pp. 511-519.*
- *Rizvi, B.R. (1989).Hill Korwa of Chattisgarh, Gian Publishing House, New Delhi.*
- *Sandhwar, A.N. (1990).The Korwa Tribe- Their Society and Economy. Amar Prakashan Delhi.*
- *Sen, A. (1999). Development as Freedom. New York: Oxford University Press.*
- *Sen, A. (2000). Development as Freedom. Oxford Un|vers|ty Press.*
- *Shaiza, W (2003). Need and Objectives of Training in Tribal Life and Culture, in Applied Anthropology in India (ed) by L P Vidyarthi.*
- *Sharma, A. (2019). Feudal|sm and Rural Governance in India. Sage Publications.*
- *Singh, Katar. (2013). Rural Development: Principles, Policies and Management. New Delhi: Sage Publications.*

- *Singh, R. (2018). Women's Political Empowerment in Bihar's Panchayats: Reality and Rhetoric. Economic and Political Weekly, 53(22), 47–55.*

- *The Indian Express. (2023, November 6). Women's participation in NREGS continues to rise. https: //lndlanexpress.com/artlcle/lndla/women-partlclpatlon-ln-nregs-contlnues-to-rlse*

- *The Print. (2024, February 9). Women's participation in MGNREGS hits 10-year high of 58.8%. https://theprlnt.ln/lndla/womens-partlclpatlon-ln-mgnregs-hlts-10-yr-hlgh-at-58-8*

- *United Nations Development Programme (UNDP). (2021). Localising the Sustainable Development Goals in India: The role of Gram Panchayats. UNDP lndla. https://www.undp.org/lndla/publlcatlons*

- *World Bank. (2018). Strengthenlng Local lnstitutions for Inclusive Development in India. Washington DC.*

- *World Bank. (2022). JEEVlKA: Strengthening Women's Livelihoods in Bihar. World Bank Publications.*

- *Yale Review of International Studies. (2016, Aprll 25). Growing up green in Rajasthan: Feminism and grassroots desertification combat in Piplantri village. https://yrls.ylra.org/essays/growlng-up-green-ln-Rajasthan*

******